

52

२३२
वर्गमी



6282

सड़क के किनारे

२४२
व्यवस्था

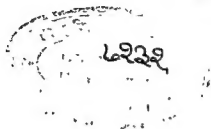
६२४२



सड़क के किनारे

[मण्टो की पन्द्रह प्रतिनिधि कहानियों का संग्रह]

२३२
कहानी



मण्टो

नवयुग प्रकाशन, दिल्ली

अनुक्रम

जीवन-चरित्र

१. श्री कंगल पवित्र का वल्ल	७
२. मुदफरेय	१७
३. बर्मी सङ्गी	२७
४. मुगिया	३७
५. फोमा घाई	४६
६. बादशाहत का खाम्मा	५६
७. निवकी	७१
८. शादी	८५
९. महमूदा	९७
१०. गाँव	११३
११. राम निन्नावन	१२३
१२. औरत जात	१३५
१३. घल्ला दित्त	१४५
१४. झूठी कहानी	१५३
१५. सडक के किनारे	१६३
	१७५

८२५२

जीवन परिचय

मघादेन हमन मण्डों का जन्म ११ मई १९१२ ई० में मन्नाल जिला होंशि-
यागपुर में हुआ था। उनके पिता सम्पन्न घराने से सम्बन्ध रखते थे और
स्वभावतया बड़े कठोर-हृदयी थे। माता पिता के विपरीत, सर्वथा मान्निप्रिय
नया कोमल-हृदया थीं। मण्डों अपने माता पिता की अन्तिम मन्तान थे।

उनके दो बड़े सौतेले भाई विदेश में उच्च शिक्षा के लिए भेजे हुये थे किन्तु
मण्डों को अपनी प्रसर बुद्धि और पठन-पाठन से अभिरुचि होते हुए भी बाहर
नौ क्या महा भारत में भी उच्च शिक्षा का अवसर प्राप्त नहीं हुआ था।
अमुक्तमर से किमी-न-किलो तरह मेट्रिक की परीक्षा पास करके वह मुस्लिम
यूनिवर्सिटी अलीगढ़ में इण्टर साइंस में दाखिल हुए किन्तु उनके भाग्य में
विश्वविद्यालय की डिग्री प्राप्त करना नहीं अपितु इस विशाल जन-समुदाय के
जीवन का चितेरा बनना था। अतः पढ़ाई संपूरी छोड़ कर ही वह अलीगढ़ से
दिल्ली आ गये और वही आकर कहानियों के अतिरिक्त उन्होंने साप्ताहिक
पत्रों का सम्पादन आरंभ कर दिया।

मण्डों ने अपना कलम विभिन्न साहित्यांगों पर आशमाया था किन्तु वह
मुत्पन्नया कयाकार थे और उनकी कहानियों ने ही उन्हें बहुत शीघ्र उच्च
कोटि के कहानोकारों में स्थान दिलवा दिया। समालोचकों के विपरीत प्रहार
उन्हें अपने पय से न डिगा सके और उन्होंने अपने मनोनीत विषय 'सिक्ता' पर
कहानिया लिखी और अन्तिम समय तक (१८ जनवरी, १९५५) वह वे कहा-
निया लिखते रहे।

मण्डों ने अपना साहित्यिक जीवन अनुवादों में आरम्भ किया था। उन्होंने
चिंगोत्र, गोंकी और मोपासा की कतिपय कृतियों का उर्दू में बड़ा सुन्दर अनुवाद

किया था। थिएटर दूगो, टान्गटान्ग थोन् गोर्गो में वह प्रारम्भ में इतने प्रभावित हुए थे कि अपने को कानिफारी कहा करते थे। मुस्लिम यूनिवर्सिटी में अपनी शिक्षा अपूर्ण छोड़ कर ही उन्होंने कहानियाँ लिखना शुरू कर दिया था और बहुत कम समय में ही बड़ी प्रगति पा चुके थे। आन इन्डिया रेडियो पर काफी दिन बड़े सफल एवं दिनचर्या नाटक लिखने के पश्चात् वह बम्बई चले गये थे जहाँ उन्होंने कुछ पत्रों का सम्पादन किया था तथा कई फिल्मी कहानियाँ लिखी थीं जिनमें 'आठ दिन', 'पुतली', 'भिर्जा सानिव' और 'पमंड' उल्लेखनीय हैं। इनमें से पहली फिल्म में उन्होंने अभिनय भी किया था।

मण्टो ने अपने ब्यालीस वर्षीय जीवन में लगभग ३०० कहानियाँ, १०० नाटक, २० संस्मरण तथा स्क्रोन एवं अनेक निरा लिखे थे। 'नाना माम के नाम पत्र' शीर्षक से उन्होंने ६ पत्र भी लिखे थे जिनमें अमरीका के साम्राज्यवाद की एशिया पर बढ़ती हुई अशुभ छाया पर एक जबरदस्त व्यंग्य किया था।

मण्टो की कहानियों के विषयवस्तु पर उर्दू साहित्य में घोर मतभेद है किंतु उनकी कला अद्वितीय तथा निस्सन्देह है और उर्दू के चोटी के समालोचकों ने उनकी उस कला की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उर्दू के प्रगतिशील लेखक आंदोलन के संस्थापक श्री सज्जाद जहीर ने लिखा है :

“...सआदत हुसैन मण्टो उर्दू के एक बहुत अच्छे अफसाना निगार हैं और मैं कहूंगा कि उनके कुछ अफसानों का शुमार हमारे अदब के बेहतरीन अफसानों में किया जा सकता है।”

उर्दू के प्रख्यात कवि सरदार जाफरी ने जिन्होंने अपनी पुस्तक 'तरबकी पसन्द अदब' में मण्टो को 'फोशनिगार' (अश्लील लेखक) के नाम से याद किया है और मण्टो की लेखनी का लोहा माना है। उन्होंने मण्टो को लिखे अपने एक पत्र में कहा था :

‘तुम्हारे होते हो मेरे और तुम्हारे अदबी नुबतए नज़र (साहित्यिक दृष्टिकोण) से लाफ (अन्तर) है। लेकिन इसके बावजूद मैं तुम्हारी कद बहुत सी उम्मीदें बावस्ता किये हुए हूँ।’

मण्डो के कहानी संग्रह 'चुगद' पर भूमिका लिखते हुए जाफरी ने लिखा था :

'मण्डो उर्दू का सबसे ज्यादा बदनाम अपमाना निगार है और वह बदनामी जो मण्डो को नसीब हुई है मरुबुसियत और शोहहत की तरह सहज कोशिश से हासिल नहीं की जा सकती उसके लिए फनकार में बसली जौहर होना चाहिए और मण्डो का जौहर उसके कलम की नोक पर नगीने की तरह चमकता है।

'मण्डो के अपमाने उन किरदारों की अरानी हैं जिनसे सरमायादाराणा निजाम ने उनकी इस्तानियत छीन ली है। उनमें एक ताये बाला है जो किमी टाँमी से बदला लेने की फिक्र में हैं। एक भू गफली बाला है जो अपने मालिक-मकान सेठ की गाली सुनकर उसका खून पी जाना चाहता है लेकिन भजधूरी में खुद सिर्फ गाली दे सकता है। एक दलाल है जिसकी मर्दानगी की एक तबाहफ ने लौहीन कर दी है। एक रण्डी है जिसके मोने में उनका औरतपन जाग उठा है और वह समाज में इन्तकाम लेने के लिए अपने कुत्ते के साथ सो जाती है। एक बच्चा है जो अपने बाप की हिमायत पर बिमूर रहा है और बाप उसके भोलेपन के मामले और भी ग्रहमक मालूम होता है। एक भल्हड़ लडकी है जो जिन्दगी के ७० तीर-नरीके सीख रही है और अपनी जिन्दगी के आगूने जज्बात को पूरा करने के लिए बेचैन है। एक चलती-फिरती औरत है जो औरतों के पेट पर तेल डालकर पैदा होने वाले बच्चों के बारे में पेमीनगॉट करती रहती है। एक धका-भाँदा नौजवान है जो अपनी तन्हा जिन्दगी का कोस्त को दूर करने के लिए एक तखीली महबूबा बनाकर उसकी मुहब्बत में महल (संलग्न) रहता है। यह एक अच्छी-खासी पिक्चर गैलरी है जिसमें हमारे मुतबस्सित तश्के के समाज की बिगड़ी हुई तस्वीरें लगी हुई हैं।'

ये हैं मण्डो के पात्र। वे अच्छे हैं या बुरे इसमें मण्डो को कोई सरोकार नहीं। इनमें सुधार हो सकता है या नबंदा ऐसे ही रहेंगे यह बनाना भी मण्डो का विषय नहीं। मण्डो की तो केवल यह दर्शाना अभीष्ट है कि ये सब इन्सान थे, इनमें इन्सान बनने की योग्यता थी लेकिन इस समाज ने जिसकी नींव जूट-

खसूट पर है उन सबको जानवर बना दिया है। मण्टो को इनमें से किसीसे प्रेम है और किससे घृणा यह पाठक स्वयं अनुमान लगा सकते हैं। मण्टो ने तो अपनी कलम को मात्र कैमरा बनाकर उनके चित्र गीन दिये हैं पाठक स्वयं उन चित्रों में अच्छे-बुरे पहचान लें।

शायद मण्टो और उर्दू के प्रतिगामियों के नेता हसन अस्करी इन बात में एकमत थे कि साहित्य को इस बात से कोई दिक्कत नहीं कि कौन जुल्म कर रहा है, कौन नहीं कर रहा; जुल्म हो रहा है या नहीं हो रहा। साहित्य तो देखता है कि जुल्म करने हुए और जुल्म सहते हुए इन्सानों का बाह्य तथा आंतरिक दृष्टिकोण क्या है। जहाँ तक साहित्य का सम्बन्ध है जुल्म की बाह्य क्रिया और उसके बाह्य प्रत्यक्ष निरर्थक हैं।' ('स्पाह हागिये' की भूमिका)

यही कारण है मण्टो ने अन्य लेखकों के प्रतिकूल अपनी कहानियों में मुधार की अवृत्ति को नहीं फटकने दिया। वह अपने पात्रों से प्रेम करते हैं तो पाठकों से भी यही आशा करते हैं; यदि घृणा करते हैं तो भी उन्हें यही आशा रहती है। वह अपने घृणित पात्रों में घृणा का संचार क्यों हुआ, कैसे हुआ या किस प्रकार वह दूर हो सकता है इस रोग को नहीं पालते। वह तो स्थिति जैसी है उसे कलात्मक ढंग से पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में विश्वास करते हैं। उनका मत है कि यदि वेश्याओं के जीवन पर कहानियाँ लिखना वर्जित है तो पहले वेश्यालय बन्द करने होंगे और तब इस विषय पर कोई कहानी नहीं लिखी जायगी। एक स्थल पर लिखते हैं :

‘तवाइफ का मकान खुद एक जनाजा है जो समाज खुद अपने कन्धों पर उठाए हुए है। वह उसे जब तक दफन नहीं करेगा उसके बारे में बातें होती रहेंगी।

‘यह लाश गली-सड़ी सही, बदबूदार सही, काबिले-नफरत सही, भयानक सही, लेकिन इसका मुँह देखने में क्या हर्ज है? क्या यह हमारी कुछ नहीं लगती? क्या हम इसके अजीब नहीं? हम कभी-कभी कफन हटाकर इसका मुँह देखते रहेंगे और दूसरी को दिखाते रहेंगे।’

अपनी लेखनी और अपनी कला के बारे में अनेक स्थलों पर स्वयं

बहुत कुछ लिखा है। उनका कहना था कि मैं जो कुछ लिखता हूँ यदि वह अश्लील है; नग्नता है तो इसमें मेरा कोई दोष नहीं, दोष उस घृणित समाज, उन दोषपूर्ण व्यवस्था का है जहाँ मुझ जैसे लेखक को अश्लीलता और नग्नता बिसरी हुई दृष्टिगोचर होती है।

अपनी कहानियों पर नये आरोपों के उत्तर में मण्टो ने लिखा था

‘आज जिस दौर से हम गुजर रहे हैं अगर आप उससे नावाक़िफ़ हैं तो मेरे अफ़साने पढ़िये। अगर आप उन अफ़सानों को बर्दाश्त नहीं कर सकते तो इसका मतलब है कि यह ज़माना नाकाबिले-बर्दाश्त है। मुझमें जो बुराईयाँ हैं वो इस दौर की बुराईयाँ हैं। मेरी तहरीर (लेखनी) में कोई नुक़्स (त्रुटि) नहीं है। जिन नुसख़ों को मेरे नाम से मसूब किया जाना है दरअसल वह भोगूदा निज़ाम का नुक़्स है। मैं हज़ामा पसन्द (उपद्रववादी) नहीं, मैं लोगों के ख़्यालान य ज़ुबान में हैज़ान (उत्तेज़ना) पैदा करना नहीं चाहता। मैं तहज़ीब-समझून (मंस्कृति) व समाज की चौकी क्या उज़ालूंगा जो है ही नहीं। मैं उसे कान्हे पहनाने की कोशिश भी नहीं करता इसलिए कि यह काम दर्जियों का है। लोग मुझे सियाह कलम कहते हैं लेकिन मैं स्याह तख़्ते पर काली चाक़ से नहीं लिखता, मफ़ेद चाक़ इस्तेमाल करता हूँ ताकि स्याह तख़्ते की स्याही और भी ज़्यादा नुमायाँ हो जाय। यह मेरा खास अंदाज़, ख़ाम मज़ है जिसे फ़ौज़ानिगारी, (अश्लीलता) तरक्की पसन्दी और खुदा मालूम क्या कुछ कहा जाता है—लानत हो सबादत हसन मण्टो पर कमबख़्त की ग़ाली भी सलीके से नहीं दी जाती।’

मण्टो ने उर्दू कथा-साहित्य में जिस ‘नग्नता’, ‘अश्लीलता’ और उच्छृंखलता का बीजारोपण किया था उसका परिणाम उनकी बे चार कहानियाँ हैं जिन पर ब्रिटिश सरकार तथा पाकिस्तानी सरकार ने अभियोग चलाये थे—‘ठण्डा मोस्त’, ‘धू’, ‘काली शलवार’ और ‘धुआँ’।

उन्होंने अपनी इन कहानियों के बचाव के लिए गुद पैरवी की थी और फलस्वरूप बह बरी हो गये थे।

मण्टो का नंगे समाज को कपड़े न पहनाने बल्कि उसे और नंगा कर देने

का दृष्टिकोण ही आलोचकों के उन पर गिरे प्रकोप का कारण था। प्रसिद्ध समाज का निषेध, वेश्याओं का निषेध अज्ञानी नहीं, न ही उसमें जाग लपेट अपेक्षित है बल्कि इस सिलसिले में मण्डो का साहस और निर्भीकता वस्तुतः सराहनीय है। परन्तु प्रश्न यह है कि हमारे उन विज्ञान मन्त्रालय में जहाँ प्रत्येक वस्तु का बाहुल्य है, जहाँ सद्गुण-दुर्गुण, नकार-सकार, भले-बुरे, शोषक-शोषित अत्याचारी-अत्याचारित, शासक-शासित सभी मौजूद हैं तब क्या वेश्यावृत्ति या भ्रष्टाचार की ओर प्रवृत्त मानव का निषेध ही सर्वथा आवश्यक और अनिवार्य है? क्या इसी का चित्रण लेराफ का परम कर्तव्य है? क्या वेश्या का कोटा चित्रित करने व उसकी गंदगी दिना देने मात्र से वेश्याओं का तथा उन्हें जन्म देने वाली इस व्यवस्था अथवा समाज का अन्त हो जायगा? मण्डो ने दरअसल अपनी कहानियों के पात्रों के शत्रु को पहचाना तो सही पर उससे किसी को कुछ हासिल न हुआ।

उर्दू के लब्ध-प्रतिष्ठ आलोचक श्री आले एहमद 'मुरूर' ने उनके सम्बन्ध में लिखा है।

“.....मण्डो मोपासाँ और माँम दोनों से बहुत ज्यादा मुतास्सिर हुआ है।.....वह बड़ा अच्छा फनकार है। उसने अफसाने लिखना सीखा नहीं वह अफसाना-निगार पैदा हुआ था।...भगर उसका जहन मरीज है उसे जिन्स और उसकी बदउनवानी से बहुत दिलचस्पी है। उसके अफसानों में जिन्दगी जरूर है लेकिन एक महदूद व मखसूस किस्म की जिन्दगी...वह माँम की तरह किसी चीज पर ईमान नहीं रखता। सिर्फ इस बात का वह कायल है कि इन्सानी फितरत बड़ी अजीब है और उसमें कमी ज्यादा है।

‘इस बात की अहमियत से इन्कार नहीं किया जा सकता लेकिन इसकी बड़ाई मस्कूक है।’

इसी प्रकार सज्जाद जहीर ने भी उन्हीं से उनकी कहानियों पर चर्चा करते हुए कहा था :

“.....आपका यह अफसाना ‘बू’ एक बहुत ही दर्दनाक लेकिन फिजूल इसलिए कि दरम्यानी तबके के हर आमुदाहाल फर्द (संतुष्ट

व्यक्ति) की जिन्सी बदलनवानियों (विषयी विच्छिन्नलताएँ) का तजकरा चाहे कितना ही हकीकत पर मन्वी (आधारित) क्यों न हो लिखने और पढ़ने वाले दोनों के लिए तजीए-श्रीकात (समय-नाश) है और दरबसल वह जिन्दगी के अहमतरौन (अत्यंत महत्वपूर्ण) तकाजो से इसी कद्र फरार (पलायन) का इजहार है जितना कि कदीम किस्म की रजतपसदी (प्रतिक्रियावाद) ... ।

इस समाज में कुछ और भी बर्ग है, कुछ और पात्र भी है जो अपनी खोई हुई मानवता को पुनर्प्राप्त करने के लिए सघर्षशील हैं। जो जुलम-अत्याचार, शोषण व कुत्सीतियों के विरुद्ध लड़ रहे हैं और एक नये सत्तार का निर्माण कर रहे हैं। लेकिन मण्टो की नजर उन तक न गई—या यों कहे कि उनकी ओर देkhना मण्टो ने इतना आवश्यक न समझा।

जीवन के प्रति मण्टो का कुछ विचित्र-सा दृष्टिकोण था। वह इस समाज में रह कर इसकी गंदगी को देखते थे। उसका विरोध करते थे पर साथ ही इस समाज की जड़—जनता—में भी अलगव ही पसन्द था। कृष्णचन्द्र से शरावतीशी के समय उन्होंने कहा था :

“... जिन्दगी नहीं देखोगे, गुनाह नहीं करोगे, मौत के करीब नहीं जाओगे, धम का मजा नहीं चखोगे तो क्या तुम खाक लिखोगे ?...”

मण्टो ने वास्तव में यह सब किया था, मौत को उन्होंने करीब बुलाया था और स्वयं उसके नजदीक चले गये। मण्टो के जीवन की निराशा ने मण्टो को सब तरफ से काट कर केवल शराब में गर्क कर दिया और कभी वह पागल-खाने गये तो कभी अत्यधिक मदिरा-पान के कारण उन्हें अस्पताल में रहना पड़ा और एक दिन वह आया जब वह इस सत्तार से हो चले गये।

कृष्णचन्द्र ने मण्टो की मृत्यु पर लिखे अपने सुन्दर लेख में उन्हें श्रद्धा-जलि अर्पित करते हुए एक जगह लिखा था :

‘मण्टो एक बहुत बड़ी गाली थी। कोई व्यक्ति ऐसा न था जिससे उसका भगड़ा न हुआ हो।’... बजाहिर तरक्कीपसन्दों से खुश नहीं था, न ही गैर तरक्कीपसन्दों से, न पाकिस्तान से, न हिन्दुस्तान से। न अन्कल साम से न हस से। न जाने उसकी प्यासी, बेचैन व बेकरार रह क्या चाहती थी ? उसकी

जवान ब्रेह्म कड़वी थी। लिखने की तर्ज थी नो कमीनी और कँटीली, नयतर की तरह तेज और बेरहम, लेकिन आप उम्र गाली को, उसकी तन्त्र जुवानो को, उसके नुकीले, कटिदार लपकों को जरा-सा मुरचकर तो देखिये अन्दर से जिन्दगी का मीठा-मीठा रस टपकने लगेगा। उसकी नफरत में मुहब्बत थी, उरियानी में सयपोशी, नुटी हुई अस्मत् वाली आरतों की दास्तानों में उसके अदब की पाकीजगी छिपी हुई थी। जिन्दगी ने मण्टो से इन्साफ नहीं किया लेकिन तारीख जरूर उससे इन्साफ करेगी।'

मण्टो की महानता इस बात में भी है कि उन्होंने अपने पात्रों का चयन हमारे जीवन में से किया। उनके पात्र हमें रोजमर्रा दिखाई देने वाले चलते-फिरते, गोश्त-पोश्त वाले पात्र हैं, जो सच्चे पात्र हैं। मण्टो की कहानियाँ कुछ आत्मचरित का-सा भुकाव लिए हैं जो उनकी मुन्दरता को द्विगुणित कर देता है। मण्टो की शैली उनकी अपनी अछूती व अद्वितीय शैली थी जिसने उन्हें आधुनिक युग का महान् कलाकार बनाया। मण्टो की भाषा सरल, सुवोध तथा पैनी व प्रभावशाली थी। शब्दों में मितव्ययिता के वह कायल थे।

स्वभावतया ही स्वातंत्र्य-प्रेमी होने के कारण मण्टो ने कभी किसी संस्था-विशेष से अपने को सम्बद्ध न किया था। भारतीय वातावरण, साम्प्रदायिक दंगों के कारण जब अत्यधिक दूषित हो गया तो वह चम्बई से लाहौर चले गये और वहाँ रहकर भी वह कभी सन्तुष्ट न रहे। उन्हें अपनी जन्मभूमि भारत की याद बहुत आती रही। मण्टो भारत से पाकिस्तान किसी साम्प्रदायिक कारण से नहीं गये थे बल्कि कहना चाहिए साम्प्रदायिकता के विरुद्ध मण्टो ने जिस निर्ममता से प्रहार किया वह उन्हीं का साहस था।

पाकिस्तान में मण्टो ने बहुत सी कहानियाँ लिखीं और उनके अनेक संग्रह प्रकाशित हुए किन्तु इन सबके बावजूद वह आर्थिक दृष्टि से हमेशा परेशान रहे और 'जेवेकफन' नामक अपने लेख में इसी संकट का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा है :

'मेरी मौजूदा जिन्दगी मसायब से पुर है। दिन-रात मशक्कत करने के बाद वमुश्किल इतना कमाता हूँ जो मेरी रोजमर्रा की जरूरियात के लिए पूरा

हो सके। यह तकलीफदेह एहसास मुझे हर वक्त दीमक की तरह चाटता रहता है कि अगर मैंने आखिरी भीख ली तो मेरी बीबी और तीन बच्चों को देखभाल कौन करेगा ? मैं फोशनबोस, दहशत पसन्द, सनकी, लतीफावाज, और रजनपसन्द सहो लेकिन एक बीबी का खाबन्द और तीन लड़कियों का बाप हूं, इनमें से अगर कोई बीमार हो जाय और मौजूद मुनासिब इलाज के लिए मुझे दर-दर की भीख मांगनी पड़े तो मुझे बहुत कोपन होती है।'

मण्टो बहुत पवित्र हृदयी थे, गन्दे-से-गन्दे विषय पर कहानी लिखकर भी वह अत्यन्त साफ मुँहरे तथा पवित्र रहे थे। किन्तु मदिरा ने उन्हें खोखला कर दिया और परिणामस्वरूप १८ जनवरी १९५५ को भारत एवं पाकिस्तान के इस महान् चिन्तक का हृदय-गति बंद हो जाने से देहान्त हो गया। उर्दू कथा साहित्य में मण्टो की मृत्यु ने जो रिक्ति हुई है उसे पूरा करना सहज नहीं है।

२३३५, छत्ता मोमगाँ,
तुर्कमान गेट,
दिल्ली।

—नूरनबी अल्खासी

सौ कैण्डल पॉवर का वल्व

वह भीड़ में कोंगर पार्क के बाहर जहाँ चन्द तंगि खड़े रहते हैं, बिजली के एक खम्भे के साथ खामोश खड़ा था और दिल-ही-दिल में मोच रहा था 'कोई बीरानी ली बीरानी है !'

यही पार्क जो सिर्फ दो वर्ष पहले इतनी पुर-रौनक जगह थी अब उजड़ी हुई दिखाई देती थी। जहाँ पहले स्त्री पुरुष सड़क भटक वाते वस्त्रों में चलते-फिरते थे वहाँ अब बेहद मँले-कुचैले कपड़ों में लोग इधर-उधर तिरहेँस्य फिर रहे थे। बाजार में काफी भीड़ थी परन्तु उममे वह रंग नहीं था, जो एक मँले-ठेले का हुआ करता था। सास-मास की मीमेड से बनी हुई इमारतें अपना रूप यो गुची थी, सर-भाड-मुँह-फाड़ एक दूसरे की घोर फटी-फटी आँखों से देख रही थी, जैसे बिचका स्थिती।

वह आश्चर्य-चकित था कि वह क्रीम-गाउडर कहाँ गया ? वह सिल्लूर कहाँ उड़ गया ? वे मुर वहाँ गुप्त हो गये जो उमने कभी यहाँ देखे तथा मुने थे ? अधिक समय नहीं बीता था—अभी वह बस ही तो (दो वर्ष भी कोई समय होता है) यहाँ आया था। बसकते से जब उने यहाँ की एक फर्म ने सज्जे बेतन पर बुलाया था तो उमने कोंगर पार्क में कितनी कोशिश की थी कि उने किराये पर एक बमरा ही मिल जाय, परन्तु वह असफल रहा था—हजार फर्माइशों के बावजूद।

किन्तु अब उमने देखा कि जिस कुँजड़े, जुलाहे और मोची की तबियत चाहती थी पनैटों और कमरों पर अपना अधिकार जमा रहा था।

जहाँ किसी शानदार फिल्म बम्पनी का दानर हुआ करता, वहाँ चूहे सुलग

रहे हैं; जहाँ कभी जहर की बड़ी-बड़ी रंगीन तस्मियाँ फैलती थीं, वहाँ धोबी घेने कपड़े भी रहे हैं।

दो वर्ष में इनकी बड़ी कानि।

वह हैरान था। लेकिन उसे इन कानि की पृष्ठभूमि का ज्ञान था। अस्त्रवाणों से श्रीर उन मित्रों में जो जहर में मौजूद थे, उसे सब पता लग चुका था कि यहाँ कैसा तूफान आया था। परन्तु वह गौनना था कि यह कोई अजीब तूफान था जो उमागनों का रंग-रूप भी चुम्कार ले गया। इन्सानों ने इन्सान कत्ल किये; स्त्रियों का गतीत्व नूटा; जिन उमागनों की भूगो मकड़ियों और उनकी ईंटों से भी यही बर्बाद किया।

उसने गुना था कि कि इस तूफान में स्त्रियों को नग्न किया गया था, उनके स्तन काटे गये थे। यहाँ उसके आसपास जो कुल था सब नंगा और यौवनहीन था।

वह विजली के सम्भे के साथ लगा अपने एक मित्र की प्रतीक्षा कर रहा था; जिसकी सहायता से वह अपने निवास का कोई प्रयत्न करना चाहता था। इस मित्र ने उससे कहा था कि तुम कैसर पार्क के पास जहाँ ताँगे खड़े रहा करते हैं, मेरा इन्तजार करना।

दो वर्ष हुए जब वह नौकरी के सिनसिले में यहाँ आया था तो वह ताँगों का अड्डा बहुत मशहूर जगह थी—सबसे बढ़िया, सबसे बाँके ताँगे सिर्फ यहीं खड़े रहते थे, क्योंकि यहाँ से ऐय्याशी का हर सामान उपलब्ध हो जाता था। अच्छे से अच्छा रेस्तोराँ और होटल समीप था। सर्वश्रेष्ठ चाय, उत्तम भोजन और अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी।

शहर के जितने बड़े दलाल थे वे यहीं मिलते थे। इसलिए कि कैसर पार्क में बड़ी-बड़ी कंपनियों के कारण रुपया और शराब पानी की भाँति बहते थे।

उसे याद आया कि दो वर्ष पूर्व उसने अपने मित्र के साथ बड़े ऐश किये थे। अच्छी-से-अच्छी लड़की हर रात को उनकी आगोश में होती थी। युद्ध के कारण स्काच अप्राप्य थी, परन्तु एक मिनट में दर्जनों बोतलें प्राप्त हो थीं।

ताने शत्रु भी सहे थे किन्तु उन पर वे तुरें, वे फुंदने, वे पीतल के पालिस बिये हुए माज-सामान की चमक-दमक नहीं थी। यह भी शायद दूसरी चीजों के साथ उड़ गई थी।

उसने घड़ी में नमक देखा, पांच बज चुके थे। फरवरी के दिन थे। शाम के साये छाने शुरू हो गये थे। उसने दिल-ही-दिल में मित्र की धिक्कारा और दाहिने हाथ के निर्जन होटल में मोरी के पानी से बनी हुई चाय पीने के लिए जाने ही वाला था, कि किसी ने उसे होने से पुकारा। उसने सोचा शायद उसका मित्र आगया परन्तु जब उसने मुड़ कर देखा तो कोई अजनबी था—भाम दावल मूरन बन, लट्ठे की नई धालदार पहने जिसमें और अधिक सलो की गुंजाइश नहीं थी नीली पापलिन की कमीज में जो साण्टी जाने के लिए व्याकुल थी।

उसने पूछा, 'क्यों नई, तुमने मुझे बुलाया?'

उसने धीरे से उत्तर दिया, 'जी हाँ।'

उसने समझा कि धारणार्थी है, भीख माँगना चाहता है। 'क्यों माँगते हो?'

उसने उर्मी स्वर में उत्तर दिया, 'जी कुछ नहीं।' फिर निकट आकर कहा, 'कुछ चाहिए आपको?'

'क्या?'

'कोई लड़की-बड़की।' यह कहकर पीछे हट गया।

उसके सोने में एक तीर-सा लगा कि देखो इस जमाने में भी यह लोगों की घासना टटोलता फिरता है। और फिर मानवता के बारे में ऊपर-तले उसके मस्तिष्क में निरन्तर करने वाले विचार उत्पन्न हुए। इन्हीं विचारों से अभिभूत हो उसने पूछा :

'कहाँ है?'

उसका स्वर दनाश के लिए आमाजनक नहीं था, अतः कदम उठाने हुए उसने कहा, 'जी नहीं, आपको जरूरत नहीं मालूम होती?'

उसने उसे रोसा। 'यह तुमने कैसे जाना? इन्सान को हर वक्त इस बीज की जरूरत होती है जो तुम दिलवा सकते हो—मृती पर भी, जलती चिता में भी.....'

वह दार्शनिक दमने ही वाला था कि मर गया, 'देखो, अगर वही नाम ही है तो मैं चलने के लिए बेचारा हूँ। मैंने यहाँ एक दोस्त को मर दे रखा है।'

दलाल निराश था, 'नाम तो बिना ही नाम।'

'कहाँ?'

'वह नामने वाली मिनिश में।'

उमने नामने वाली मिनिश को देखा।

'उमने, उम वही मिनिश में?'

'जी हाँ।'

वह कौन गया, 'दलाल, वो...?'

नभयान्तर उमने पूछा, 'मे भी मरूँ?'

'चलिए, लेकिन मे आगे-आगे चलना है।' और दलाल ने मानने वाली मिनिश को ओर चलना शुरू कर दिया।

वह नौकरी आमायेधी जाने सोचता उमने सीढ़ी ले लिया।

चन्द मजों का फैसला था, फोन्स से हो गया। अज्ञान और वह दोनों उस बड़ी मिनिश में थे जिनके मग्नक पर एक मोटे मटका रखा था—उसकी हालत सबसे खराब थी, जगह-जगह उगड़ी हुई ईंटों, बड़े हुए पानी के नलों और कूड़े-करकट के ढेर थे।

अब शाम गहरी हो गई थी। इधोड़ी में मे गुजरकर आगे बढ़े तो संधेरा शुरू हो गया। चौड़ा-चकला आंगन तै करके वह एक तरफ मुड़ा जहाँ इमारत बनते-बनते रुक गई थी। नंगी ईंटें थी, चूना और सीमेंट गिने हुए सगल ढेर पड़े थे और जा-बजा बजरी बिगरी हुई थी।

दलाल अपूर्ण सीढ़ियाँ चढ़ने लगा कि मुड़कर उमने कहा :

'आप यहीं ठहरिए मैं अभी आया।'

वह रुक गया ; दलाल गायब हो गया। उसने मुँह ऊपर करके सीढ़ियों के अन्त की ओर देखा तो उसे तेज रोशनी नजर आई।

दो मिनट गुजर गये तो दवे पाँच वह भी ऊपर चढ़ने लगा। आठिरी जीने पर उसे दलाल की बहुत जोर की कड़क चुनौती दी :

‘उठती है कि नहीं?’

कोई स्त्री बोली, ‘कह जो दिया मुझे सोने दो।’ उनकी आवाज धुटी-धुटी-सी थी।

दलाल फिर कहफा, ‘मैं कहता हूँ उठ, मेरा कहा नहीं मानेगी मां याद रख...’

स्त्री की आवाज आई, ‘तू मुझे मार डाल, लेकिन मैं नहीं उठूंगी। खुदा के लिए मेरे हाथ पर रहम कर—’

दलाल ने पुचकारा, ‘उठ मेरी जान, जिध न कर। गुजारा कैसे चलेगा?’

स्त्री बोली, ‘जाम गुजारा जहन्नुम में, मैं झुकी मर जाऊँगी। खुदा के लिए मुझे लग न कर। मुझे नींद आ रही है।’

दलाल की आवाज कड़ी हो गई ‘तू नहीं उठेगी, हरामबाई, सुभर का बच्ची?’

स्त्री बिल्लाने लगी, ‘मैं नहीं उठूंगी, नहीं उठूंगी नहीं उठूंगी।’

दलाल की आवाज भिन्न पड़ी।

‘आहिन्ना बोल, कोई मुन लेगा। ते चल उठ। तीस-बत्तीस रुपये मिल जायेंगे।’

स्त्री की बाणी में आग्रह था, ‘देर मैं हाथ जोड़ती हूँ। मैं कितने दिनों में जाग रही हूँ? तरस खा। खुदा के लिए मुझ पर रहम कर...’

‘बस एक-दो घण्टे के लिए, फिर सो जाना। नहीं तो देख मुझे सस्ती कारनी पड़ेगी।’

घोड़ी देर के लिए एक गामोसी छा गई। उसने दबे पाँव अपने ब्रह्मर उम कमरे में झाँका जिसमें से घड़ी तेज रोशनी आ रही थी।

उसने देखा कि एक छोटी कोठरी है जिसके फर्श पर एक स्त्री बैठी है। कमरे में दो-तीन बर्तन हैं, उस उसके सिवा और कुछ नहीं। दलाल उस स्त्री के पाग वंश उसके पाँव दाब रहा था।

घोड़ी देर बाद उसने स्त्री से कहा, ‘ते अब उठ। कमर खुदा की एक-दो घण्टे में आ जायेंगी। फिर सो जाना।’

वह दार्शनिक बनने ही जाना था कि यह भया, 'देखो, अगर कहीं
हो तो मैं चलने के लिए बेयार हूँ। मैं यहाँ एक दीवार से बंध दे रहा
हूँ। दलाल निकट आया, 'शाम ही बिन्दुबंद शाम है।'

'कहाँ?'

'यह शामने वाली बिल्डिंग में।'

उसने शामने वाली बिल्डिंग को देखा।

'उममें, उस बड़ी बिल्डिंग में?'

'जी हाँ।'

वह काँप गया, 'अच्छा, तो...?'

संभलकर उसने पूछा, 'मैं भी चला?'

'चलिए, लेकिन मैं आगे-आगे चलता हूँ।' और दलाल ने शाम
बिल्डिंग की ओर चलना शुरू कर दिया।

वह सैकड़ों आत्मा-वेधी बातें सोचता उसके पीछे हो निकल

चन्द गजों का फैसला था, फीस तै हो गया। दलाल ने कहा

बड़ी बिल्डिंग में थे जिनके मस्तक पर एक बोंटें लटक

सबसे खराब थी, जगह-जगह उमड़ी हुई ईंटें, कटे

कूड़े-करकट के ढेर थे।'

अब शाम गहरी हो गई थी। इयोड़ी में से

हो गया। चौड़ा-चकला आंगन तै करके वह

बनते बक गई थी। नंगी ईंटें थीं, चूना

और जा-वजा बजरी बिखरी हुई थी।

दलाल अपूर्ण सीढ़ियाँ चढ़ने

'आप यहीं ठहरिए मैं अभी

वह रुक गया; दलाल

के अन्त की ओर देखा तो

दो मिनट गुजर गये

पर उसे दलाल की

उसने कहा, 'पचास ही रमो।'

'माह्व मलाम !'

उमके जी में आई कि एक बहुत बड़ा पत्थर उठा कर उमको दे मारे ।

दलाल बोला, 'तो ले जाइए इसे । लेकिन देखिए तग न कीजिएगा । और फिर एक-दो घण्टे के बाद छोड़ जाइएगा ।'

'बेहतर ।'

उमने बड़ी विलिङ्ग ने बाहर निकलना शुरू किया जिसकी रोगनी पर वह कई बार बहुत बड़ा घोंस पड़ चुका था ।

बाहर लौगा लड़ा था वह आगे बैठ गया और स्त्री पीछे ।

दलाल ने एक बार फिर मलाम किया और एक बार फिर उसके दिमाग में यह इच्छा हुई कि वह एक बहुत बड़ा पत्थर उठा कर, उसके सर पर दे मारे ।

लौगा चल पड़ा । वह उसे पाम ही एक बीरान-से होटल में ले गया । मस्तिष्क में जो विकार उत्पन्न हो गया था उसने अपने को निकाल कर उमने उस स्त्री की ओर देगा जो मिर से पैर तक उजाड़ थी । उसके पपोटे सूजे हुए थे, आँखें भुकी हुई थी । उसका ऊपर का घड़ भी सारे-का-सारा भुका हुआ था, जैसे वह एक ऐसी इमारत है जो पल भर में गिर जायगी । वह उससे सम्बोधित हुआ :

'जरा मर्दन तो ऊँची कीजिए ।'

वह जोर से चौकी, 'क्या ?'

'कुछ नहीं ।' मैंने सिर्फ इतना कहा था कि कोई बात तो कीजिए ।'

उमकी आँखें माल बोदी हो रही थी जैसा उनमें मिथे टाली गई हो, वह खामोश रही ।

'आपका नाम ?'

'कुछ भी नहीं ।' उसके स्वर में तेजाब की तेजरी थी ।

'मार बही की रहने वाला है ?'

'जहाँ की भी तुम समझ लो ।'

वह स्त्री एकदम गो उठी और आग दिगाई हुई छल्लों पर उठनी है और चिल्लाई, 'अच्छा उठनी है।'

वह एक तरफ हट गया। अगल में वह उर गया था। दबे पाँव वह तेजी से नीचे उतर गया। उसने सोचा कि भाग जाये। इस महल ही से भाग जाय। इस दुनिया से ही भाग जाय। मगर कहाँ ?

फिर उसने सोचा कि यह स्त्री कौन है ? क्यों उस पर इतना जुल्म हो रहा है ? और यह दलाल कौन है, उसका क्या लगता है और यह इस कमरे में इतना बड़ा बल्ब जलाकर जो गो कण्डल पावर से किनी तरह भी कम नहीं था क्यों रहते हैं ? कब से रहते हैं ?

उसकी आँखों में उस तेज बल्ब का प्रकाश अभी तक घुसा हुआ था। उसे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। परन्तु वह सोच रहा था कि इतनी तेज रोशनी में कौन सो सकता है ? इतना बड़ा बल्ब, क्या ये छोटा नहीं लगा सकते ? यही पन्द्रह-पच्चीस कण्डल पावर का ?

वह यह सोच रहा था कि ग्राहक हुई। उसने देखा कि दो साये उसके पास खड़े हैं। एक ने जो दलाल था, उससे कहा :

'देख लीजिए।'

उसने कहा, 'देख लिया है।'

'ठीक है ना ?'

'ठीक है।'

'चालीस रुपये होंगे।'

'ठीक हैं।'

'दे दीजिए।'

वह अब सोचने-समझने के योग्य नहीं रहा था। जब में उसने हाथ डाला, निकाल कर दलाल के हवाले कर दिये।

लो कितने हैं।'

३ खड़खड़ाहट सुनाई दी।

कहा, 'पचास हैं।'

उतने बहा, 'पचास ही रंगी !'

'माहव मनाम !'

उमके जी मे आई कि एक बहुत बड़ा पत्थर उठा कर उसको दे मारे ।

दत्ताल बोला, 'तो ते जाइए इमे । लेकिन देखिए तग न कीजिएगा । और फिर एक-दो पण्टे के बाद छोड जाइएगा ।'

'बेहतर ।'

उमने बड़ी धिल्लिंग से बाहर निकलना शुरू किया जिसकी रोशनी पर वह कई बार बहुत बड़ा बोडें पड़ चुका था ।

बाहर तांगा सड़ा था वह आगे बैठ गया और स्त्री पीछे ।

दत्ताल ने एक बार फिर सलाह किया और एक बार फिर उसके दिल मे यह इच्छा हुई कि वह एक बहुत बड़ा पत्थर उठा कर, उसके सर पर दे मारे ।

तांगा चल पड़ा । वह उसे पास ही एक बीरान-से हॉटल मे ले गया । भस्मिष्क मे जो त्रिकार उत्पन्न हो गया था उससे धपने की निकाल कर उसने उस स्त्री की ओर देता जो सिर से पैर तक उजाड़ थी । उसके पपोटे सूजे हुए थे, अल्लें भुकी हुई थी । उसका ऊपर का थड़ भी सारे-का-मारा भुका हुआ था, जैसे वह एक ऐसी इमारत है जो पल भर मे गिर जायगी । वह उससे सम्बोधित हुआ :

'जरा गर्दन तो ऊँची कीजिए ।'

वह जोर मे चींकी, 'क्या ?'

'कुछ नहीं ।' मीने सिर्फ इतना कहा था कि कोई बात तो कीजिए ।'

उमकी धीर्धन सात बोटी हो रही थी जैसे उनमे मिचें डाली गई हो; वह तामोस रही ।

'आपका नाम ?'

'बुछ भी नहीं ।' उमके स्वर में तेजाब की तेजाब

'आप कहाँ की रहने वाली है ?'

'जहाँ की

फर्न का जो हिस्सा उसे नजर आया, उस पर एक स्त्री चटाई पर लेटी थी। उसने उसे गौर से देखा—गो रहीं थी; मुँह पर दुपट्टा था। उसका गीना सानि के उतार-चढ़ाव से हिल रहा था। वह जरा और आगे बढ़ा। उसकी चीख निकल गई, मगर उसने फौनन ही देखा ली—उस स्त्री ने कुछ दूर नंगे फर्न पर एक आदमी पड़ा था जिम्मा गिर टूक-टूक था। पास ही रून में लथपथ डूँट पड़ी थी। वह सब उसने एकदम देखा और सीढ़ियों की तरफ लपका, पाँव फिसला और नीचे। परन्तु उसने चोटों की कोई परवाह नहीं की और होश व हवाश कायम रखने की कोशिश करते हुए बड़ी कठिनाई से अपने घर पहुँचा और सारी रात उसने ग्याव देखाता रहा।

खुदफरेव

हम म्यू पेरिस स्टोर के प्रायवेट कमरे में बैठे थे। बाहर टेलीफोन की घण्टी बजी तो उसका मानिक गुपाम उठकर दौड़ा। मेरे माप मसूद बैठ गया; उसने कुछ दूर हटकर जलील दीनों से अपनी छोटी-छोटी उँगलियों के नाखून काट रहा था। उसके कान यह गोर से गुपाम की बातें सुन रहे थे। वह टेलीफोन पर किसी से कह रहा था -

‘तुम झूठ बोलती हो; अच्छा खर देख लेंगे। सो, यह क्या कहा? तुम्हारे लिए तो हमारी जान हाजिर है। अच्छा तो ठीक है पाँच बजे। खुदा हाफिज! क्या कहा? भरे मई कद तो दिया कि तुम्हें मिन जाऊंगा।’

जलील ने मेरी ओर देखा, ‘मण्टो साहब, ऐश करता है गुपाम।’

मैं जवाब में मुस्करा दिया।

जलील उँगलियों के नाखून अब तेजी से काटने लगा।

‘कई लड़कियों के साथ उसका टांका मिला हुआ है। मैं तो सोचता हूँ एक स्टोर खोल लूँ—नेओज स्टोर। इशामख्वाह प्रेम के चक्कर में पड़ा हुआ हूँ; औरत का साथ तक भी वहीं नही आता। सारा दिन गडगडाहटें सुनो; जल्नू के पट्टे किस्म के ग्राहकों से मगलमारी करो। यह जिन्दगी है!’

मैं फिर मुस्करा दिया। इतने में गुपाम आ गया। जलील ने जोर से चूनड़ों पर घप्पा मारा और कहा, ‘सुनाइये कौन था यह जिसके लिए तुम अपनी जान हाजिर कर रहा था।’

गुपाम बैठ गया और कहने लगा, ‘मण्टो साहब के सामने ऐसी बातें न किया करो।’

जलील ने अपनी ऐनक के मोटे शीशों में गुरगुर समस्त की ओर देखा और कहा, मण्टो साहब को सब मालूम है, तुम बनाओ कीन थी ?

शयास ने अपने नीचे सीधे वाली ऐनक उतार कर उसकी कमानी ठीक करनी शुरू की। 'एक नहीं है, परमों आई थी टेलीफोन करने। किसी से हेस-हेसकर बातें कर रही थी। फोन कर चुकी तो मैंने उससे कहा, 'जनाब फ्रीस अदा कीजिए।' यह सुनकर मुस्कराने लगी। पर्में में हाथ डालकर उसने दस रुपये का नोट निकाला और कहा, 'हाजिर है।' मैंने कहा, 'शुक्रिया! आपका मुस्करा देना ही काफी है।' वम दोस्ती हो गई। एक घण्टे तक यहाँ बैठी रही, जाते हुए दम रुमान ले गई।' मसूद गामोश बैठा अपनी बेकारी के बारे में सोच रहा था, उठा, 'बकवास है, महज मुदफरेबी है।' यह कहकर उसने मुझे सनाम किया और चला गया।

शयास अपनी बातों ने बहुत गुश था। मसूद जब अकस्मात् बोला तो उसका चेहरा किंचित मुर्मा गया। जलील थोड़ी के देर बाद शयास से सम्बोधित हो गया, 'क्या कहा ?'

शयास चौंका, 'क्या कहा ?'

जलील ने फिर पूछा, 'क्या माँग रही थी ?'

शयास ने कुछ मंकोच के पश्चात् कहा, 'मेडन फार्म 'ब्रेजियर' जलील की आँखें ऐनक के मोटे शीशों के पीछे से चमकीं, 'साइज क्या है ?'

शयास ने जवाब दिया, 'थर्टी फोर।'।

जलील ने मुझसे सम्बोधन किया 'मण्टो साहब, यह क्या बात है अँगिया देखते ही मेरे अन्दर खदबद-सी होने लगती है।'।

मैंने मुस्कराकर उससे कहा, 'आपकी कल्पना-शक्ति बहुत तेज है।'।

जलील न समझा और न वह समझना चाहता था। उसके मस्तिष्क की थी, वह उस लड़की के बारे में बातें करना चाहता था। स ने टेलीफोन पर बातें की थीं। अतः मेरा उत्तर सुनकर हा, 'यार हमसे भी मिलाओ उसे।'।

जलील ठीक करके ऐनक लगा ली, 'कभी यहाँ आयेगी तो

‘कुछ नहीं गार नुम हमेंमा यही शक्या देते रहते हो। पिछले दिनों जब वह महीं घाई थी क्या नाम था उसका ?—जमीला। मैंने धीमे बढाकर उसने बात करनी चाही तो तुमने हाथ जोड़कर मुझसे मना कर दिया। मैं उसे सा तो न जाता।’ यह कहकर जमील ने ऐनक के मोटे शीशों के पीछे अपनी धाँगे निकोड़ ली।

जमील और गुयास दोनों में बचपना था। दोनों हर समय लड़कियों के बारे में सोचते रहते थे : खूबसूरत, मोटी, दुबली, मर्दा लड़कियों के बारे में, हाँ में चैदी हुई लड़कियों के बारे में; पैदल चलती और साइकिल सवार लड़कियों के बारे में। जमील इस मामले में गुयास से बाजो से गया था। दफ्तर से किसी आवश्यक कार्यवश मोटर में निकलता; रास्ते में कोई हाँ में बैठी या मोटर में सवार लड़की नजर आ जाती तो उसके पीछे अपनी मोटर लगा देता। यह उसका अत्यन्त प्रिय मनोरंजन था, परन्तु उसने कभी बदसमीजी न की थी। छेड़छाड़ से उसे डर लगता था। जहाँ तक बार्तालाप का सम्बन्ध था उसे उसका विजिता कहना चाहिए, वह बड़े-बड़े मजबूत क्रिमे जीत चुका था।

प्राईवेट फमरे में जब बाहर स्टोर से कोई स्त्री की आवाज आती तो गयान उछल पड़ता और पार्श्व हटाकर एकादम बाहर निकल जाता। मर्द माहकों से उसे कोई दिनचर्या नहीं थी; उनसे उसका नीकर निपटता था।

दोनों अपने काम में होशियार थे। स्टोर किस प्रकार चलाया जाता है, उसे किस प्रकार मोवप्रिय बनाया जाता है इसमें गुयास की बड़ी दक्षता प्राप्त थी। इसी तरह जमील को प्रेस के सभी अर्थों पर परिपूर्ण ज्ञान था। किन्तु पुर्सेन के समय वे केवल लड़कियों के सम्बन्ध में सोचते थे—काल्पनिक तथा वास्तविक लड़कियों के सम्बन्ध में।

स्टोर में किसी दिन जब कोई लड़की न आती तो गुयास उदास हो जाता। वह उदासी वह जमील से टेलिफोन पर उन लड़कियों के बारे में बार्ने करके दूर करता जो बकील उसके जान म फँसी हुई थी। जमील उन अपनी रिजवों का हास करता और दोनों कुछ देर बातें करते। स्टोर में कोई माहक आता

या उधर प्रेस में किसी को जलील की ज़रूरत होती तो दिलचस्प बातों का यह क्रम टूट जाता ।

उम दृष्टि से न्यू पेरिस स्टोर बड़ी दिलचस्प जगह थी । जलील दिन में दो-तीन बार जरूर आता । प्रेम से किसी काम के किए निकलता तो चन्द्र मिनटों के ही लिए स्टोर में बाहर हो जाता । गयास ने किसी लड़की के बारे में छेड़ छाप करता और उंगली में मोटर की चाबी गुमाता चला जाता ।

जलील को गयास ने यह शिकायत थी कि वह अपनी लड़कियों के बारे में बड़ी राजदारी से काम लेता है, उनका नाम तक नहीं बताता । छिप-छिप कर उनसे मिलता है, उनको उपहारादि देता है और अकेले-अकेले ऐश करता है । और यही शिकायत गयास को जलील से थी किन्तु दोनों के मंत्रीपूर्ण सम्बन्ध जैसे-के-तैसे ही थे ।

एक दिन स्टोर में एक काले घुक् वाली लड़की आई, नकाब उल्टा हुआ था, चेहरा पसीने से सराबोर था, आते ही स्टूल पर बैठ गई । गयास जब उसकी ओर बढ़ा तो उसने घुक् से पसीना पोछ कर उससे कहा 'पानी पिनाइये एक गिलास ।'

गयास ने फ़ौरन नीकर को भेजा कि एक ठण्डा लेमन ले आये । स्त्री ने छत के निश्चल पंखों को देखा और गयास से पूछा, 'पंखा क्यों नहीं चलाते आप ?'

गयास ने सिर-से-पैर तक क्षमा की मूर्ति बन कर कहा, 'दोनों खराब हो गये हैं; मालूम नहीं क्या हुआ ? मैंने आदमी भेजा है ।'

स्त्री स्टूल पर से उठी, 'मैं तो यहाँ एक मिनट नहीं बैठ सकती ।' यह कह कर वह शो-केसों को देखने लगी ।

'आदमी खाक शॉपिंग कर सकता है इस दोजख में ?'

गयास ने अटक-अटक कर कहा, 'मुझे अफ़सोस आप.....आप अन्दर तशरीफ़ ले चलिए ।.....जिस चीज़ की ज़रूरत होगी मैं लाकर दूंगा ।'

स्त्री ने गयास की ओर देखा, 'चलिए ।'

गयास तेज कुदमों से आगे बढ़ा, पर्दा हटाया और स्त्री से कहा, 'तयारी कर लो।'।

श्री अंदर के कमरे में प्रविष्ट हो गई और एक कुर्सी पर बैठ गई । गयास ने पर्दा छोड़ दिया । दोनों मेरी नजरों से ओझल हो गये । कुछ क्षणों के बाद गयास निकला और मेरे पास आकर उसने हीसे से कहा, 'मण्टो साहब, क्या खयाल है आपका इस लड़की के बारे में ?'

मे मुस्करा दिया ।

गयास ने एक झाने से विविध प्रकार की निपस्टिकें निकाली और अन्दर कमरे में ले गया । इतने में जमीन की मोटर का हॉर्न बजा और वह उँगली पर चाबी घुमाता हुआ प्रकट हुआ । आते ही उसने पुकारा, 'गयास, गयास ! आओ मैं सुनो, वह कल काता मामला मैंने सब ठीक कर दिया है।' फिर उसने मेरी ओर देखा । 'ओखोह ! मण्टो साहब, आदाब भजें । गयास कहाँ है ?'

मैंने जवाब दिया, 'अन्दर कमरे में ।'

'वह मैंने सब ठीक कर दिया मण्टो साहब । सभी सभी पेट्रोल पम्प के पास मिली—पैदाश चली जा रही थी । मैंने मोटर रोकी और कहा, जनाब, यह मोटर आविर किस मर्ज की दवा है ?' उसे मजग छोटकर आ रहा हूँ ।' फिर उसने कमरे के पर्दे की ओर मुँह करके आवाज दी, 'गयास, बाहर निकल दो !'

जमीन ने उँगली पर जोर से चाबी घुमाई । 'अपस्त है । अब इसने अन्दर घुसना शुरू कर दिया है ।' कहकर उसने आगे बढ़कर पर्दा उठाया; एकदम जैसे उसके चेक-सा लग गया । पर्दा उसके हाथ में छूट गया । 'सॉरी !' कहकर वह उल्टे कदम वापस आया और धबकाते हुए स्वर में उसने मुझसे पूछा, 'मण्टो साहब, 'कोन कहिए ?'

मैंने पूछा, 'कहाँ कीन ?'

'यह जो अन्दर बैठी होठों पर निपस्टिक लगा रही है ।'

मैंने जवाब दिया, 'मासूम नहीं, साहब है ।'

जलील ने ऐनक के मोटे शीशों के पीछे आँखें सुकेड़ों और पर्दों की तरफ देखने लगा। गयास बाहर निकला; जलील से 'हलो जलील !' कहा और आईना उठाकर वापस कमरे में चला गया। दोनों बार जब पर्दा उठा तो जलील को स्त्री की हली-ली भन्क नजर आई। मेरी पोर मुड़कर उसने कहा, 'ऐसा करता है पट्टा।' फिर बेचैनी की स्थिति में वह धुंध-धुंध टहलने लगा। थोड़ी देर के बाद पर्दा उठा; स्त्री हाँठों को चूसती हुई निकली। जलाल की निगाहों ने उसे स्टोर के बाहर तक पहुँचाया। फिर उसने पलट कर कमरे का रुख किया। गयास बाहर निकला रुमाल से होठ साफ करता। दोनों एक-दूसरे से करीब-करीब टकरा गये। जलील ने तान्र स्वर में उससे पूछा, 'यह क्या किस्सा घा भई ?'

गयास मुस्कराया, 'कुछ नहीं।' यह कहकर उसने रुमाल से होठ साफ किये। गयास ने जलील के चुटकी भरी, 'कौन थी ?'

'यार तुम ऐसी बातें न पूछा करो।' गयास ने अपना रुमाल हवा में लहराया। जलील ने छीन लिया; गयास ने झपट्टा भाँसकर वापस लेना चाहा।

जलील पंतरा बदल कर एक ओर हट गया। रुमाल खोल कर उसने गौर से देखा। जगह-जगह लाल निशान थे। ऐनक के मोटे शीशों के पीछे अपनी आँखें सुकेड़ कर उसने गयास को घूरा।

'यह बात है !'

गयास ऐसा चोर बन गया जिसे किसी ने चोरी करते-करते पकड़ लिया हो। 'जाने दो यार, इधर लाओ रुमाल।'

जलील ने रुमाल वापस कर दिया, 'बताओ तो सही कौन थी ?'

इतने में नौकर लेमन लेकर आया, गयास ने उसे इतनी देर लगाने पर फिड़का, 'कोई मेहमान आये तो तुम हमेशा ऐसा ही किया करते हो।'

गयास ने जलील से पूछा, 'यह लेमन उसी के लिए मँगवाया गया था।'

'हां यार, इतनी देर में आया है कमवस्त। दिल में कहती होगी प्यासा ही भेज दिया।' गयास ने रुमाल जेब में रख लिया।

जलील ने शो-केस पर से लेमन का गिलास

हुमासी ध्यान तो कुछ नहीं; लेकिन यार ने
हुमासत में हुमाने हाथ साफ कर दिया ।'

यवास ने हुमास निकाल कर अपने पीठ
कड़ा, बिपट ही नहीं; मैंने कहा देखो ठीक नहीं
मेरे होठों का फुमा मे नहीं ।'

एकदम मसूद की आवाज आई, सब बकस
यवास चौंक पड़ा । मसूद स्टोर के बाहर
निकल खीर बस दिया । जलील खीरन ही गा
बाद, हुम बताया कि फिर क्या हुआ ? यार बीज ।

यवास ने बकस न दिया । मसूद की आ
बीजना-ना बका का । जलील की एकदम याद
ही बकरी काम पर निकला है । 'उंगली पर न
कहा, 'मस्की के बारे में फिर पूछिए । एक
कौतुहल ।' खीर बसा गया ।

1. मैंने धुम्कगकर यवास से पूछा, 'यवास ।
हुमासत में आपने --'

यवास झेंप गया; मेरी बात काटकर उसने
आप हुमासे मुझसे है । बसिए अन्दर बैठें, यहाँ बस
हम अन्दर कमरे की ओर चलने लगे तो स्टोर
होती । उसने जोर-जोर से हार्न बजाया । यवास
अन्दर आया । 'यवास अन्दर आओ; बस स्टैंड में
चढ़ाई करी है ।'

यवास उसके साथ चला गया; मैं मुस्कराते हुए
हम रोगन में जलील ने बड़ी धुम्कन से न
एक डिब्बेयन मड़की नीकर एक भी । उसे वह
कई बार मोटर में उसे अपने साथ लाया; लेकिन
हुमा । यवास की यह बात पर बड़ा खेद था ।

गयास ने जलील से मजाक किया तो वह बहुत गिटपिटाया। उसके कान की लवें सुख हो गईं। नजरें झुकाकर उसने गाड़ी स्टार्ट की और यह जा; वह जा।

... बकील जलील के यह स्टैंनो शुरू-शुरू में तो बड़ी रिजवं रही, लेकिन आखिर उससे घुल ही गई, 'बस अब चन्द दिनों ही में मामला पटा समझो।'।

गयास अब ज्यादातर जलील से स्टैंनो की बातें करता। जलील उससे उस लड़की के बारे में पूछता जिसने चिमट कर उसे चूम लिया था तो गयास बाम तौर पर यह कहता, 'कल उसका टेलीफोन आया, पूछने लगी 'आऊँ?' मैंने कहा, 'यही नहीं; तुम वक्त निकालो तो मैं किसी और जगह का इन्तजाम कर लूँगा।'।

जलील उससे पूछता, 'यथा कहा उसने?'

गयास उत्तर देता, 'तुम अपनी स्टैंनो की सुनाओ।'।

स्टैंनो की बातें शुरू हो जातीं।

एक दिन मैं और गयास दोनों जलील के प्रेस गये; मुझे अपनी किताब के टाइटिल कवर के डिजाइन के बारे में मालूम करना था। दफ्तर में स्टैंनो एक कोने में बैठी थी। लेकिन जलील नहीं था। स्टैंनो से पूछा तो मालूम हुआ कि वह अभी-अभी बाहर निकला है। मैंने नौकर को भेजा कि उसे हमारे आगमन की सूचना दे। थोड़ी ही देर के बाद जलील आ गया। चिक उठाकर उसने मुझे सलाम किया और गयास से कहा, 'इधर आओ गयास।'।

हम दोनों बाहर निकले। गयास को एक कोने में ले जाकर जलील ने लकर गयास से कहा, मैदान मार लिया। अभी-अभी तुम्हारे आने से देर पहले!' यह कहकर रुक गया और मुझसे सम्बोधित हुआ, 'जिएगा मण्टो साहब।' फिर उसने गयास को जोर से अपने साथ। 'बस मैंने आज उसे पकड़ लिया—विल्कुल इसी तरह—और इस ट्रेडल के पास।'।

गयास ने पूछा, 'कैसे ?'

जलील झुंझता गया। 'अबे अपनी स्टेनो को; कसम खुदा की मजा पा गया। यह देखो।' उसने अपना रुमास पतखून की जेब से निकालकर हवा में सहाराया : उस पर मुखों के घबरे थे।

एकदम ममूद की आवाज आई, 'बकवास है, महज खुद फरेबी है।'

जलील और गयास चौंक उठे। मैं मुस्कराया : ट्रेंडल के तबे पर सुल्ले रंग की पतली-सी समतल तह फैली हुई थी। एक जगह पोंछने के कारण कुछ खराबें पड़ गई थीं।

वर्मी लड़को

ज्ञान की झूटिंग थी इसलिये किफायत जल्दी सो गया। प्लेट में घीर कोई नहीं था। बीबी-बच्चे राबलपिंडी चले गये थे। पड़ोसियों से उसे कोई दिसचस्पी नहीं थी। यों भी बम्बई में लोगों को अपने पड़ोसियों से कोई सरो-कार नहीं होता। किफायत ने अकेले ब्राण्डी के चार पेग पिये, खाना खाया, नौकरों को छुट्टी दी और दरवाजा बन्द करके सो गया।

रात के पाँच बजे के लगभग किफायत के सुमार-भरे कानों को एक की भावाज सुनाई दी। उसने झंझें खोली—नीचे बाजार में एक द्राम दमदमाती हुई गुजरती। कुछ क्षण बाद दरवाजे पर बड़े जोरों की दस्तक हुई। किफायत उठा; पलंग से उतरा तो उसके नंगे पैर टखने तक पानी में चले गये। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि कमरे में इतना पानी कहाँ से आया और बाहर कौरी-डोर में इससे भी अधिक पानी था। दरवाजे पर दस्तक जारी थी; उसने पानी के बारे में सोचना छोड़ा और दरवाजा खोला।

ज्ञान ने जोर से कहा, 'यह क्या है?'

किफायत ने उत्तर दिया, 'पानी।'।

'पानी नहीं, औरत !' यह कहकर ज्ञान आधे झोंधियारे कौरीडोर में दाखिल हुआ, उसके पीछे एक छोटे-से कद की लड़की थी।

ज्ञान की फर्श पर फैले हुए पानी का कुछ एहसास न हुआ। लड़की ने पाजामा ऊपर उठा लिया और छोटे-छोटे कदम उठाती ज्ञान के पीछे चली आई।

किफायत के अस्तिष्क में पहले पानी था, अब यह लड़की उसमें प्रविष्ट हो गई और हुबकियाँ लगाने लगी। सबसे पहले उसने सोचा कि यह कौन है—

शकल व मूरत तथा वस्त्रों से बर्मी मालूम होती है ! लेकिन ज्ञान उसे कहाँ से लाया ?

ज्ञान अन्दर के कमरे में जाकर कपड़े तन्त्रील किये बिना ही पलंग पर लेटा और लेटते ही सो गया । किफायत ने उससे बात करनी चाही किन्तु उसने केवल हूँ-हाँ में उत्तर दिया और आँखें न खोलीं । किफायत ने उस लड़की की ओर एक नजर देखा जो सामने वाले पलंग पर बंठी थी; और बाहर निकल गया ।

रसोई में जाकर उसे ज्ञात हुआ कि खर का वह पाइप, जो रात को बड़ा ड्राम भरा करता था, बाहर निकला हुआ है । तीन बजे जब नल में पानी आया तो उससे तमाम कमरों में बाढ़ आ गई । तीनों नौकर बाहर गली में सो रहे थे । किफायत ने उन्हें जगाया और पानी निकालने के काम पर लगा दिया । वह खुद भी उनके साथ शरीक था । सब चुल्लुओं से पानी उठाते थे और बाल्टियों में डालते जाते थे । उस बर्मी लड़की ने उन्हें जब यह काम करते देखा तो झटपट सैण्डल उतार कर उनका हाथ बंटाने लगी ।

उसके छोटे, गोरे हाथ, उंगलियों के नाखून बढ़ाये हुए और सुर्खी लगे नहीं थे । छोटे-छोटे कटे हुये बाल थे जिनमें हल्की-हल्की लहरें थीं । मर्दाना किस्म का लेकिन खुला रेशमी पाजामा पहने थी । उस पर काले रंग का रेशमी कुरता था जिसमें उसकी छोटी-छोटी छातियाँ छिपी हुई थीं ।

जब उसने उन लोगों का हाथ बटाना शुरू किया तो किफायत ने उसे मना किया, 'आप तकलीफ न कीजिये, यह काम हो जायगा ।'

उसने कोई जवाब न दिया । छोटे-छोटे सुर्खी लगे होटों से मुस्कराई और काम में लगी रही । आधे घण्टे के अन्दर-ही-अन्दर तीनों कमरों से पानी निकल गया । किफायत 'चलो यह भी अच्छा हुआ । इसी बहाने सारा घर धुलकर साफ

वह

कमर

सो

के लिए स्नानागार में चली गई । किफायत विस्तर पर लेटा—नींद पूरी नहीं हुई थी,

लगभग नौ बजे वह जगा और जागते ही उसे सबसे पहले पानी का विचार था; फिर उसने बर्फी लड़की के बारे में सोचा जो ज्ञान के साथ आई थी। बड़ी स्वाब तो नहीं था; लेकिन यह सामने ज्ञान से रहा है और फर्मा भी धुला हुआ है।

किफायत ने गौर से ज्ञान की ओर देखा; वह पनसून, कोट बल्कि जूते समेत झोपा से रहा था, किफायत ने उसे जगाया, उसने एक आँख खोली और पूछा, 'क्या है?'

'वह लड़की कौन है?'

ज्ञान एकदम चौंका। 'लड़की! कहाँ है?' फिर फौरन ही चित्त लट गया। 'मोह भ्रमवास न करो, ठीक है।'

किफायत ने उसे फिर जगाने की कोशिश की पर वह सामोश सोया रहा। उसे साढ़े नौ बजे अपने काम पर जाना था। उसने जल्दी-जल्दी स्नान किया, शैव भी स्नानागार के अन्दर ही कर लिया। बाहर निकल कर ड्राइंग रूम में गया तो उसे भेज सजी हुई नजर आई।

सुबह नाश्ते पर धाम तौर पर किफायत के यहाँ बहुत ही थोड़ी-सी चीजें होती थीं। दो उबले हुए अण्डे, दो टोस्ट, मक्खन और चाय। मगर आज भेज रंगीन थी, उसने गौर से देखा छिने हुए अण्डे विचित्र ढंग से कटे हुए थे कि फूल मानूम होते थे। सलाद था, बड़े सुन्दर ढंग से प्लेट में सजा हुआ। टोस्टों पर भी मीनाकारी की हुई थी। किफायत चकरा गया। रमोई में गद्यां तो वह बर्फी लड़की चौंकी पर बंटी सामने झेंगीटी रखे कुछ वह रही थी। तीनों नौकर उसके इंद-गिंद में और हँस-हँसकर उससे जाने कर रहे थे। किफायत को देखकर वे उठ खड़े हुए। बर्फी लड़की ने अखिं घुमाकर उसकी ओर देखा और मुस्करा दी।

किफायत ने उनसे बात करनी चाही लेकिन वह कैसे करता; उमने क्या कहता? वह उसे जानता तक नहीं था। उमने अपने एक नौकर ने निकट इतना पूछा, 'नाश्ता आज किमने तैयार किया है बगीर?'

बगीर ने उस बर्फी लड़की की ओर संकेत किया, 'बाईबी ने!'

समय बहुत कम था। किफायत ने जल्दी-जल्दी उनका मञ्जीना नाश्ता खाया और कपड़े पहनकर अपने आफिस को चला गया। शाम को वापस आया तो वह बर्मी लड़की उसके स्लीपिंग सूट का डकनोता पाजामा पहने अपने कुर्ते पर इस्तारी कर रही थी। किफायत पीछे हट गया, क्योंकि वह सिर्फ पाजामा पहने थी।

‘आ जाइए।’

लहजा बड़ा आफ-मुयरा था। किफायत ने सोना कि बर्मी लड़की की वजाय शायद कोई और बोला है। जब वह अन्दर गया तो उस लड़की ने छोटे-छोटे होंठों पर मुस्कराहट पैदा करके उसे सलाम किया। किफायत की उपस्थिति में उसने कोई पर्दा अनुभव नहीं किया, बड़े संतोष के साथ वह अपने कुर्ते पर इस्तारी करती रही। किफायत ने देखा उसकी छोटी-छोटी गोल छातियों के दरम्यानी हिस्से में इस्तरी की गर्मी के कारण पसीने की नन्हीं-नन्हीं बूंदें जमा हो गई थीं।

किफायत ने ज्ञान के बारे में पूछने के लिए बसौर को आवाज देनी चाही पर रुक गया। उसने ऐसा करना उचित न समझा क्योंकि वह लड़की आधी नंगी थी। उसने हैट उतार कर रखा। थोड़ी देर इस अर्ध-नग्नता को देखा लेकिन कोई उत्तेजना अनुभव नहीं की। लड़की का शरीर बेदाग था; त्वचा बहुत ही कोमल थी। इतनी कोमल कि निगाहें फिसल-फिसल जाती थीं।

कुर्ते पर इस्तारी हो गई तो उसने स्विच आफ किया। एक कुर्ता और भी आ सफेद बोस्की का जो तह किया हुआ इस्तारी शुदा पाजामे पर रखा था। उसने ये सब कपड़े उठाये और किफायत से बोली, ‘मैं नहाने चली हूँ।’

यह कहकर वह नहाने चली गई। किफायत टोपी उतार कर सिर खुजलाने लगा। ‘कौन है यह?’

उसके दिमाग में बड़ी खुदबुद हो रही थी। जब भी वह उस लड़की के में सोचता सारी घटना उसके सामने आ जाती। रात को उसका उठना—ही-पानी; उसका दरवाजा खोलना और कहना, ‘पानी!’ और ज्ञान का उत्तर देना, ‘पानी नहीं औरत!’ और एक नन्हीं सी गुड़िया का छम से आ जाना।

किफायत ने दिल में कहा, 'हटाओ जी, शान आयेगा तो सब कुछ मालूम हो जायगा। लौटिया है दिनचर्या। इतनी छोटी है कि जी चाहता है कि भद्रमो जेब में रखले। चलो ब्रांडी पियें।'।

बशीर ने ग्लाम, ब्रांडी और बर्फादि सब कुछ ड्राइंग रूम में तिपाई पर रख दिया था। किफायत ने कपड़े बदले और पीनी शुरू कर दी। पहला पेग सतम किया तो उसे स्नागागार के दरवाजा मुलने को 'चू' सुनाई दी। दूसरा पेग डालकर वह प्रतीक्षा करने लगा कि थोड़ी ही देर में वह बर्मी लडकी ज़रूर इधर आयेगी। परन्तु उसके नियत चार पेग समाप्त हो गए और वह न आई; शान भी न आया। किफायत झुंझला गया। अन्दर बैठ रूम में जाकर उतने देखा वह लडकी इस्तरी किए हुए कपड़े पहने अपनी गोल-गोल छातियों पर हाथ रखे बड़ी निश्चिन्तता से सो रही थी। इस्तरी वाली मेज पर उसके स्लीपिंग सूट का इकलौता पाजामा बड़ी अच्छी तरह तह किया हुआ रखा था।

किफायत ने वापस जाकर ब्रांडी का एक डबल पेग ग्लाम में डाला और 'नोट' ही चढ़ा गया। थोड़ी देर के बाद उसका सिर घूमने लगा; उतने बर्मी लडकी के बारे में सोचने की कोशिश की मगर उसने ऐसा महसूस किया कि वह चुल्लुओं में पानी भर-भर के उसके मस्तिष्क में डाल रही है। खाना खाये बिना वह सोफे पर सेट गया और उस बर्मी लडकी के सम्बन्ध में कुछ सोचने की चेष्टा करते हुए सो गया।

सुबह हुई तो उसने देखा कि वह सोफे की बजाय अन्दर पर्लंग पर है। उसने अपनी स्मरण-शक्ति पर जोर दिया—'मैं रात कब आया यहाँ? क्या मैंने खाना खाया था?'

किफायत को कोई जवाब न मिला। सामने वाला पर्लंग लाली था। उसने जोर से बशीर को आवाज दी; वह भागा हुआ अन्दर आया। किफायत ने उससे पूछा, 'जान साहब कहाँ हैं?'

बशीर ने जवाब दिया, 'रात को नहीं आये।'।
... 'क्यों?'

मातूम नहीं साहब।'।

‘वह बाईजी कहाँ हैं ?’

‘मछली तन रही हैं ।’

किफायत के दिमाग में मछलियाँ तनी जाने लगीं । उठकर रसोई में गया तो वह चौकी पर बैठी सामने घोंगीठी रंगे मछली तन रही थी । किफायत को देखकर उसके होंठों पर एक छोटी-सी मुस्कान पैदा हुई । हाथ उठाकर उसने सलाम किया और अपने कार्य में लीन हो गई । किफायत ने देखा तीनों नीकर बहुत प्रसन्न थे और बड़ी कार्यसाधकता से उस लड़की का हाथ बटा रहे थे ।

वशीर को कुछ दिनों की छुट्टी पर अपने घर जाना था । कई दिनों से वह बार-बार कहता था कि साहब मुझे तनखाह दे दीजिए : मेरे पास घर से कई खत आ चुके हैं, माँ बीमार है । रात को वह उसे तनखाह देना भूल गया था । अब उसे याद आया तो उसने वशीर से कहा, ‘इधर आओ वशीर, अपनी तनखाह ले लो । मैं कल दफ्तर से रुपये ले आया था ।’

वशीर ने बेतन ले लिया । किफायत ने उससे कहा, ‘नौ बजे गाड़ी जाती है, उसी से चले जाओ ।’

‘अच्छा जी !’ कहकर वशीर चला गया ।

नाश्ता बहुत स्वादिष्ट था; विशेषकर मछली के टुकड़े । उसने खाना शुरू करने से पहले वशीर के जरिये उस वर्मी लड़की को बुला भेजा, मगर वह न आई । वशीर ने कहा, ‘जी वह कहती हैं कि मैं नाश्ता वाद में करूँगी ।’

किफायत की आर्थिक स्थिति बहुत पतली थी; ज्ञान भी इसमें अपवाद न था । दोनों इधर-उधर से पकड़कर निर्वाह कर रहे थे । बाँडी का प्रबन्ध ज्ञान कर देता था; बाकी खाने-पीने का सिलसिला भी किसी-न-किसी तरह चल ही रहा था । जिस फिल्म कम्पनी में ज्ञान काम कर रहा था, उसका दीवाला निकलने ही वाला था किन्तु उसे विश्वास था कि कोई चमत्कार निश्चय ही होगा और उसकी कम्पनी सँभल जायेगी । शूटिंग हो रही थी, शायद इसीलिए रात भी न आ सका था ।

नास्ता करने के पश्चात् किफायत ने भाँककर रसोई में देखा . लड़की अपने कार्य में निमग्न थी, तीनों नौकर उससे हँस-हँसकर मार्ग कर रहे थे । किफायत ने बसौर से कहा, 'मछली बहुत अच्छी थी ।'

लड़की ने मुड़कर देखा : उसके होठों पर छोटी-सी मुस्कराहट थी ।

किफायत दफ्तर चला गया, उसे आया था कि कुछ रुपयों का प्रबन्ध हो जायगा । लेकिन खाली जेब वापस आया । यहीं लड़की अन्दर बड़े कम में लेटी सवित्र पत्रिका देख रही थी । किफायत को देखकर बैठ गई और सलाम किया ।

किफायत ने सलाम का जवाब दिया और उससे पूछा, 'ज्ञान साहब आये थे ?'

'आये थे दोस्तर को; खाना खाकर चले गये । फिर शाम को आये कुछ मिनटों के लिए ।' यह कहकर उसने एक और को हटकर तकिमा उठाया और कागज में लिपटी हुई बोतल निकाली । 'यह दे गये थे कि आपको दे दूँ ।'

उसने बोतल पकड़ी, कागज पर ज्ञान के ये शब्द थे :

'कमबख्त यह चीज किसी न किसी तरह मिल जाती है, लेकिन पैसा नहीं मिलता । बहर हास गैश करो ।' — तुम्हारा ज्ञान

उसने कागज खोला चाँडी की बोतल थी । यहीं लड़की ने किफायत की तरफ देखा और मुस्कराई; किफायत भी मुस्करा दिया, 'भाँप पीती हैं ?'

लड़की ने जोर से सिर हिलाया, 'नहीं ।'

किफायत ने नजर भरकर उसे देखा और सोचा, 'क्या छोटी-सी नन्ही-मुन्नी गुड़िया है ।'

उसका जो चाह कि उसके साथ बैठकर बातें करे । अतः उससे सम्बोधित हुआ, 'आइए इधर दूसरे कमरे में बैठते हैं ।'

'नहीं, मैं रुकड़े घोऊँगी ।'

'इस समय ?'

‘उग समय अच्छा होता है; गन धोये, सुवह सूत मये । उठते ही इस्तरी कर लिये ।’

किफायत थोड़ी देर खड़ा रहा; उसे कोई बात न सूझी तो ड्राइंग रूम में बैठकर चाँदी पीनी शुरू कर दी । गाने का वक्त हो गया । उसने बर्मी लड़की को बुलाया पर उसने कहा :

‘मैं ज्ञान साहब के साथ राजेंगी ।’

किफायत ने साना ग्याया और उसके पलंग पर सो गया । रात के लगभग एक बजे उसकी आँख खुली : चाँदनी रात थी; हल्की-हल्की रोशनी कमरे में फैली हुई थी । हवा भी बड़े मजे की चल रही थी । करवट बदली तो देखा सामने पलंग पर एक छोटी-सी सुडोल गुड़िया ज्ञान के चौड़े, वालों भरे सीने के साथ चिमटी हुई है । किफायत ने आँखें बन्द कर लीं । थोड़ी देर के बाद ज्ञान की आवाज आई, ‘जाओ, अब मुझे सोने दो; कपड़े पहन लो ।’

स्प्रिंगों वाले पलंग की आवाज के साथ रेशम की सरसराहटें किफायत के कानों में दाखिल हुईं । थोड़ी देर के बाद किफायत सो गया । सुबह छः बजे उठा क्योंकि वह रात यह सोचकर सोया था कि सुबह जल्दी उठेगा । उसे ट्राम की बहुत लम्बी यात्रा तै करके एक आदमी के पास जाना था जिससे उसे कुछ मिलने की उम्मीद थी । पलंग से उतरा तो उसने देखा कि बर्मी लड़की नंगे फर्श पर उसके स्लीपिंग सूट का इकलीता पाजामा पहने अपने छोटे-से सुडौल बाजू सिर के नीचे रखे बड़े सुकून से सो रही है । किफायत ने उसको जगाया; उसने अपनी काली-काली आँखें खोलीं । किफायत ने उससे कहा, ‘आप यहाँ क्यों लेटी हैं?’

उसके छोटे-छोटे होठों पर नन्हीं-सी मुस्कराहट पैदा हुई; उठकर उसने जवाब दिया, ‘ज्ञान को आदत नहीं किसी को अपने पास सुलाने की ।’

किफायत को ज्ञान की इस आदत का पता था । उसने लड़की से कहा, ‘जाइए मेरे पलंग पर लेट जाइए ।’

लड़की उठी और किफायत के पलंग पर लेट गई ।

किफायत स्नानागार में गया । वहाँ रस्सी पर बर्मी लड़की के कपड़े लटक

रहे थे। किफायत साबुन मतकर नहाने चला तो, उसका रुपात उस लड़की के मुलामम जिस्म की तरफ चला गया जिस पर से निगाहे फिसल-फिसल जाती थीं।

स्नान करके किफायत ने कपड़े पहने। चूँकि जल्दी में था इसलिए ज्ञान को जगाकर उससे कोई बात न कर सका। सुबह का निकला रात के ग्याहरह बजे वापस आया—जेबें खाली थीं। वेड हम में गया ज्ञान और धर्मी लड़की दोनों इकट्ठे सोये हुए थे। किफायत ने ड्राइंग रूम में बैठकर ब्रांडी पीनी शुरू कर दी। बहुत पका हुआ था, मायूस वापस आया था। धर्मी लड़की के शम्बन्ध में सोचता-सोचता वही सोफे पर सो गया। सुबह पाँच बजे उठा। तिपारी पर उसका चौया पेग पानी में पड़ा बासी हो रहा था।

किफायत उठा; वेड रूम के नंगे फर्श पर धर्मी लड़की सो रही थी। ज्ञान मलमारी के भाईने के सामने खड़ा टाई बाँध रहा था। टाई की गिरह ढीक करके उसने दोनों हाथों में लड़की को उठाया और अपने पलंग पर लिटा दिया। मुझा तो उसने किफायत को देखा, 'धर्मी भई, कुछ बन्दोबस्त हुमा हपयो का ?'

किफायत ने निराशापूर्ण स्वर में उत्तर दिया, 'नही।'

'तो मैं जाता हूँ; देखो शामद कुछ हो जाये।'

पूवं इसके कि किफायत उसे रोके ज्ञान तैयारी से बाहर निकल गया। दर-वाजा खुला तो उसकी आवाज भाई, 'तुम भी कोशिश करना किफायत।'

किफायत ने पलट कर पलंग की तरफ देखा : लड़की बड़े मुकून के साथ सो रही थी। उसके नन्हें-से मीने पर छोटी-छोटी गोब-गोल छातिर्मा घमक रही थीं। किफायत कमरे से निकल कर स्नानागार में चला गया। अन्दर रस्ती पर लड़की के मुने हुए कपड़े लटक रहे थे।

नहा-धोए बाहर निकला तो उसने देखा लड़की नीकरों के साथ नाश्ता तैयार करने में ध्यस्त थी। नाश्ता करके बाहर निकल गया।

चार दिन इसी प्रकार गुजर गये। किफायत को उस लड़की के बारे में कुछ मायूम न हो सका। ज्ञान कभी रात को देर से आता था, कभी दिन को बहुत अन्दी निकल जाता था। यही हाल किफायत का था; दोनों परेशान थे।

पाँचवें रोज जब वह सुबह उठा तो बशीर ने क़िफायत को ज्ञान का पर्चा दिया। उसमें लिखा था : 'मुदा के लिए किसी-न-किसी तरह दस रुपये पंदा करके बर्मी लड़की को दे दो।'

लड़की खड़ी इस्तरी कर रही थी, केवल ब्लाउज की आस्तीन बाकी रह गई थी जिस पर वह बड़े सलीके से इस्तरी फेर रही थी। क़िफायत ने उसकी ओर देखा। जब उनकी निगाहें चार हर्डें तो बर्मी लड़की मुस्करा दी। क़िफायत सोचने लगा कि वह दस रुपये कहाँ से पंदा करे। बशीर पास खड़ा था, उसने क़िफायत से कहा : 'साहब, इधर आइए।'

क़िफायत ने पूछा, 'क्या बात है?'

'जी कुछ कहना है।'

बशीर ने एक ओर हटकर दस रुपये का नोट निकाला और क़िफायत को दे दिया। 'मैं नहीं गया अभी तक साहब।'

क़िफायत नोट लेकर सोचने लगा, 'नहीं, नहीं। तुम रखो लेकिन तुम गये क्यों नहीं अभी तक?'

'साहब, चला जाऊँगा कल-परसों। आप रखिए ये रुपये।'

क़िफायत ने नोट जेब में डाल लिया, 'अच्छा मैं शाम को लौटा दूँगा तुम्हें।'

कपड़े-बपड़े पहनकर जब बर्मी लड़की नाश्ता कर चुकी तो क़िफायत ने उसे दस रुपये का नोट दिया और कहा, 'ज्ञान साहब ने दिया था कि आपको दे दूँ।'

लड़की ने नोट ले लिया और बशीर को आवाज दी। बशीर आया तो उसने कहा, 'जाओ टैक्सी ले आओ।'

बशीर चला गया तो क़िफायत ने उससे पूछा, 'आप जा रही हैं?'

'जी हाँ।'

यह कहकर वह उठी और वेड रूम में चली गई। वह अपना रुमाल इस्तरी करना भूल गई थी। क़िफायत ने उससे बातें करने का इरादा किया तो क्सी आ गई। रुमाल हाथ में लेकर वह खाना होने लगी। क़िफायत को

सलाम किया और कहा, 'अच्छा जी, मैं चलती हूँ । ज्ञान को मेरा सलाम बोला देना ।'

फिर उसने तीनों नौकरो से हाथ मिलाये और चली गई । सबके चेहरे पर उदासी छा गई ।

पौने घण्टे के बाद ज्ञान आया । वह कुछ लेकर आया था । आते ही उसने किरपायत से पूछा, 'कहाँ हैं वह धर्मो सड़की ?'

'चली गई ।'

'कैसे ? दस रुपये दिये थे तुमने उसे ?'

'हाँ ?'

'तो ठीक है ।' ज्ञान कुर्सी पर बैठ गया ।

किरपायत ने पूछा, 'कौन थी वह सड़की ?'

'मालूम नहीं ।'

किरपायत सिर से पैर तक आश्चर्य की मूर्ति बन गया । 'क्या मतलब ?'

ज्ञान ने उत्तर दिया, 'मतलब यही कि मैं नहीं जानता कौन थी ।'

'झूठ ।'

'तुम्हारी कसम सच कहता हूँ ।'

किरपायत ने पूछा, 'कहाँ से मिल गई थी तुम्हें ?'

ज्ञान ने टाँगें मेज पर रख दी और मुस्कराया । 'अजीब दास्तान है मार !

पानी की बाढ़ आने वाली रात मैं शहर के वहाँ चला गया । वहाँ बहुत थी ।

अन्धेरी स्टेशन से गाड़ी में सवार हुआ तो सो गया । गाड़ी मुझे सीधी चर्च गेट

ले गई । वहाँ मुझे चौकीदार ने जगाया, 'उठो ।' मैंने कहा, 'भाई, मुझे रात रोड

जाना है ।' चौकीदार हँसा, 'भाप तीन स्टेशन आगे चले आये हैं ।' उतरा ।

दूसरे प्लेटफार्म पर अन्धेरी जाने वाली आगिरी गाड़ी खड़ी थी, मैं उसमें

सवार हो गया । गाड़ी चली तो फिर मुझे नींद आ गई । सीधा अन्धेरी पहुँच

गया ।'

किरपायत ने पूछा, 'मगर इसका सड़की से क्या सम्बन्ध ?'

'तुम जान तो सो ।' ज्ञान ने सिगरेट सुलगाया । 'अन्धेरी पहुँचा । यन्त्रो जव

मेरी आँख खुले तो क्या देखता हूँ कि मैं एक छोटी-सी मोड़िया के साथ निपटा हुआ हूँ। पानी तो मेरे पास, यह ज्ञान रही थी। मैंने पूछा, 'कौन हो तुम?' वह मुस्कनाई। मैंने फिर पूछा, 'कौन हो भई तुम?' वह मुस्कनाई और कहने लगी, 'तो इससे देर से मुझे बुझने रहे और यह पूछने हो मैं कौन हूँ?' मैंने ज़िन्दा गान में कहा, 'सच्चा!' वह हँसने लगी। मैंने दिमाग पर जोर देकर सोचता 'जिन्दा न समझा और उसे आने साथ भीन' लिया। सुबह तीन बजे तक हम दोनों बोटहाट में ही एक-दूसरे पर सोने रहे। साढ़े तीन की पहली गाड़ी आई तो उसमें सवार हो गए। मेरा विचार था कि प्रबन्ध करके उसे कुछ रुपये दूँगा—यहाँ पहुँचे तो पानी का तूफान आया हुआ था। है ना दिलचस्प सामान?

हिलायत ने कहा, मामी दिलचस्प है। मगर यह इतने दिन क्यों रही यहाँ?

ज्ञान ने गिगरेट फर्श पर फेंका, 'यह कहाँ रही, मैंने उसे रखा। असल में यह यों रही कि मेरे पास कुछ था ही नहीं, जो उसे देता। बस दिन गुजरते गये। मैं बेकार बसिन्दा था। कल रात मैंने उससे साफ कह दिया, 'देखो भई, दिन बढ़ो जा रहे हैं। तुम ऐसा करो मुझे अपना पता दे दो। मैं तुम्हारा हक चुम्की यहाँ पहुँचा दूँगा। आजकल मेरा हाल बहुत पतला है।'

हिलायत ने पूछा, 'यह सुनकर उसने क्या कहा?'

ज्ञान ने सिर हिलाया। अजीब ही लड़की थी। कहने लगी, 'यह क्या कहो हो,' मैंने तुमसे क्या माँगा है? लेकिन दस रुपये मुझे दे देना। मेरा घर यहाँ से बहुत दूर है; टैक्सी में जाऊँगी। मेरे पास एक पैसा भी नहीं।'

हिलायत ने प्रश्न किया, 'नाम क्या था उसका?'

... ने जवाब दिया।

टाँगें मेज पर से हटाई, 'नहीं यार, मैंने उससे नाम नहीं

खुशिया

खुशिया सोच रहा था ।

बनबारी से काने तम्बाकू वाला पान लेकर वह उसकी दुकान के साथ उस पत्थर के चबूतरे पर बैठा था जो दिन के चक्क टायरो और मोटरो के विभिन्न पुर्जों से भरा होता है । रात को साढ़े घाठ बजे के करीब मोटर के पुर्जे और टायर बेचने वालों की यह दुकान बन्द हो जाती है और यह चबूतरा खुशिया के लिए ज़ासी हो जाता है ।

वह काने तम्बाकू वाला पान धीरे धीरे खा रहा था और सोच रहा था कि गाढ़ी तम्बाकू मिली पीक उसके दाँतो की रीसों से निकलकर उसके मुँह में इधर-उधर फिगल रही थी और उसे ऐसा लगता था कि उसके विचार दाँतो तले उसकी पीक में धुल रहे हैं । शायद यही कारण है कि वह उसे फेंकना नहीं चाहता था ।

खुशिया पान की पीक मुँह में पुलपुला रहा था और उस घटना के बारे में सोच रहा था जो उसके साथ अभी-अभी घटी, यानी भाग घड़े पहने ।

वह उस चबूतरे पर नित्य की भाँति बैठने से पहले सेतवादी की पाँचवीं गली में गया था । मंगलौर से जो नयी छोकरी कान्ता भाई थी, उसी के मुन्कड़ पर रहती थी । खुशिया से किमी ने कहा था कि वह अपना मकान बदल रही है अतएव इसी बात का पता लगाने के लिए वहाँ गया था ।

कान्ता की सोती का दरवाजा उसने खटखटाया । अन्दर से भावान भाई, 'कौन है ?' इस पर खुशिया ने कहा, 'मैं खुशिया !'

आवाज दूसरे कमरे से आई थी। थोड़ी देर बाद दरवाजा खुला। खुशिया अन्दर घुसा। जब कान्ता ने दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया, तब खुशिया ने मुड़कर देखा। उसके आश्चर्य की कोई सीमा न रही, जब उसने कान्ता को विलकुल नंगी देखा, विलकुल नंगी ही रामभी क्योंकि वह अपने अंगों को सिर्फ एक तौलिये से छिपाये हुए थी। छिपाये हुए भी तो नहीं कहा जा सकता क्योंकि छिपाने की जिननी चीजें होती हैं वे सब-की-सब खुशिया की चकित आँखों के सामने थीं।

‘कहो खुशिया, कैसे आए ? मैं अब नहाने ही वाली थी। बैठो, बैठो... बाहर चाय वाले से अपने लिए एक कप चाय के लिए तो कह आये होते... जानते हो, वह मुझा रामू यहाँ से भाग गया है।’

खुशिया जिसकी आँखों ने कभी औरत को यों अचानक नंगा नहीं देखा था, वेहद घबरा गया। उसकी समझ में न आता था कि क्या कहे। उसकी निगाहें जो एकदम नग्नता से चार हो गयी थीं, वह अपने आपको कहीं छिपाना चाहती थीं।

उसने जल्दा-जल्दी सिर्फ इतना कहा, ‘जाओ... जाओ तुम नहा लो !’ फिर एकदम उसकी जवान खुल गई, ‘पर जब तुम नंगी थीं तो दरवाजा खोलने की क्या जरूरत थी ?... अन्दर से कह दिया होता, मैं फिर आ जाता...’ लेकिन जाओ... तुम नहा लो।’

कान्ता मुस्कराई, ‘जब तुमने कहा—मैं हूँ खुशिया, तो मैंने सोचा क्या हज है, अपना खुशिया ही तो है, आने दो...’

कान्ता की यह मुस्कराहट अभी तक खुशिया के दिल-दिमाग में तैर रही थी। इस वक्त भी कान्ता का नंगा जिस्म मोम के पुतले की तरह उसकी आँखों के सामने खड़ा था और पिघल-पिघल कर उसके अन्दर जा रहा था।

उसका जिस्म सुन्दर था। पहली बार खुशिया को मालूम हुआ था कि शरीर बेचने वाली औरतें भी ऐसा सुडौल शरीर रखती हैं। उसकी बात पर हैरत हुई थी। पर सबसे अधिक आश्चर्य उसे इस बात पर हुआ

या कि नग-धड़ंग वह उसके सामने खड़ी हो गई और उसको लाज तक न भाई क्यों ?

इसका जवाब कान्ता ने यह दिया था—“जब तुमने कहा खुशिया है, तो मैंने सोचा क्या हज़ है, अपना खुशिया ही तो है—माने दो ।’

कान्ता और खुशिया एक ही पेरो में शरीक थे । वह उमका दलाल था इस दृष्टि से वह उसी का था—पर वह कोई कारण नहीं था कि वह उसके सामने नयी हो जाती । कोई बात बात थी । कान्ता के शब्दों में खुशिया कोई और ही धर्म कुरेद रहा था ।

यह धर्म एक ही समय इतना स्पष्ट और इतना अस्पष्ट था कि खुशिया किसी खास नतीजे पर नहीं पहुँच सका था । उस समय भी वह कान्ता के नंग शरीर को देख रहा था जो ढोलको पर मड़े हुए चमड़े की भाँति तना हुआ था । उसकी सुडकती हुई निगाहों से बिल्कुल बेपरवाह । कई बार उस विमूढ़ स्थिति में भी उसने उसके मःबले-सालोने शरीर पर टोह तोने वाली निगाहें गाड़ी थी, पर उसका एक रोआँ तक भी न कपकपाया था । बस उस सार्वभौम परावर की भूति के समान वह खड़ी रही जो अनुभूतिहीन हो !

‘मई, एक मई उसके सामने खड़ा था—मई, जिसकी निगाहें कपड़ों में भी औरत के जिस्म तक पहुँच जाती हैं और जो परमात्मा जाने खयाल ही खयाल में जाने कहाँ-कहाँ पढ़ा जाता है । लेकिन वह जरा भी न घबराई और—“और उसकी आँखें ऐसा समझ लो कि धभी लौड़ी से धुलकर आई हैं—“उम्मे को घोड़ी-सी लाज तो आनी चाहिए थी । जरा मो मुर्खी दोषों में वैदा होनी चाहिए थी । मान लिया, कस्वी थी, पर कस्विया यों नयी तो नहीं खड़ी हो जाती ।’

दम धर्म उसे दलाली करते ही गए थे और इन दस वर्षों में वह पेसा कराने वाली लडकियों के सारे भेदों से वाकिफ हो चुका था । मिमाल के तौर पर उसे यह मालूम था कि पायथोनी के घासिरी सिरे पर जो छोकरी एक नौजवान लड़के को भाई बना कर रहनी है, इसलिए ‘अछूत कन्या’ का रिकाइं ‘काहे करता मूरख प्यार प्यार—“अपने टूटे हुए बाजे पर बजाया करती

है कि उसे अशोक कुमार से बुरी तरह से डरक है । कई मनचले नौंठे अशोक कुमार से उसकी मुलाकात कराने का भांग्रा देकर अपना उल्टू सीधा कर चुके थे । उसे यह भी मालूम था कि दादर में जो पंजाबिन रहती है, केवल इसलिए कोट-पतलून पहनती है कि उसके एक यार ने उससे कहा था कि तेरी टाँगें तो बिलकुल उस अंग्रेज ऐक्ट्रेस की तरह हैं जिसने 'मराको' उर्फ 'सूने-तमघ्रा' में काम किया था । यह फिल्म उसने कई बार देखा और जब उसके यार ने कहा कि मॉनिन डिट्रेस इसलिए पतलून पहनती है कि उसकी टाँगें बहुत सुन्दर हैं और उसने उन टाँगों का दो लाख का बीमा करा रखा है तो उसने भी पतलून पहननी शुरू कर दी, जो उसके नितम्बों में फँसकर आती थी और उसे यह भी मालूम था कि मजगाँव वाली दक्षिणी छोकरी सिर्फ इसलिए कॉलिज के सुबसूरत लोंठों को फाँसती है कि उसे एक सुबसूरत बच्चे की माँ बनने का शौक है । उसको यह भी पता था कि वह कभी अपनी इच्छा पूरी न कर सकेगी, इसलिए कि वह बाँझ है, और उस काली मद्रासिन की बावत, जो हर समय कानों में हीरे की बूटियाँ पहने रहती थी, उसे यह बात अच्छी तरह मालूम थी कि उसका रंग कभी सफेद नहीं होगा और वह उन दवाओं पर बेकार पैसा खर्च कर रही है जो वह आये दिन खरीदती रहती है ।

उसको उन सभी छोकरियों का अन्दर-बाहर का हाल मालूम था जो उसके पेशे में शामिल थीं । मगर उसको यह पता न था कि एक दिन कान्ता कुमारी, जिसका असली नाम इतना कठिन था कि उसे वह उन्न भर याद नहीं कर सकता था, उसके सामने नंगी खड़ी हो जाएगी और उसको जिन्दगी के सबसे बड़े ताज्जुब में डाल देगी ।

सोचते-सोचते उसके मुँह में पान की पीक इतनी इकट्ठी हो गई थी कि अब वह मुश्किल से छालियों के उन नन्हें-नन्हें रेजों को चबा सकता था जो उसके दाँतों की रीखों में से इधर-उधर फिसलकर निकल जाते थे । उसके तंग माथे पर पसीने की नन्हीं-नन्हीं बूँदें उभर आईं जैसे मलमल में पनीर को थोरे से दबा दिया गया हो.....उसके पुरुषत्व को धक्का-सा पहुंचता

था जब वह कान्ता के नये जिस्म की अपनी कल्पना में देखता था। उसे महसूस होता था जैसे उसका अपमान हुआ है।

एक दम उसने अपने मन में कहा, 'भई यह अपमान नहीं है तो क्या है' यानी एक छोटी सी नग-घडग तुम्हारे सामने खड़ी हो जाती है '....' 'तुम खुशिया ही तो हो'.... खुशिया न हुआ सामा वह बिल्कुल ही गया जो उसके विस्तर पर हर समय ऊँघता रहता है' और क्या !'

अब उसे विश्वास हो गया कि सचमुच उसका अपमान हुआ है। वह मर्द था और उसके इस बात की प्रज्ञात रूप से आशा थी कि औरतें चाहे धारीक हों, चाहे बाजाक उसको मर्द ही समझेंगी और उसके साथ अपने बीच वह पर्दा कायम रखेंगी जो एक मुद्दत से चला आ रहा है। वह तो मर्क यह पता लगाने के लिए कान्ता के यहाँ गया था कि वह क्या तक मकान बदल रही है और कहाँ जा रही है? कान्ता के पास उसका जाना बिल्कुल ब्यापार में सम्बन्धित था। अगर खुशिया कान्ता के बारे में सोचता कि जब वह उसका दरबारा गट-कटायेगा तो वह धन्दर क्या कर रही होगी तो उसकी कल्पना में अधिक-से-अधिक इतनी ही बातें आ सकती थी।

—सिर पर पट्टी बाँधे लेट रही होगी।

—बिस्ले के बालों से पिसू निगाह रही होगी।

—उस बाल-सफा पाउडर से अपनी बगलों के बाग उड़ा रही होगी जो इतनी बांस मारता था कि खुशिया की नाक बर्दाश्त नहीं कर सकती थी।

—पलंग पर घबेली बँटी तांग फँसाये पेशेन्स खेलने में व्यस्त होगी।

यस इतनी चीजें थी, जो उसके दिमाग में आती थी। घर में वह किसी को रखती नहीं थी, इसलिए इस बात का प्रभाव ही नहीं था मरना था। पर खुशिया ने तो यह सोचा ही नहीं था। वह तो बाम में चला गया था कि प्रचानक कान्ता' यानी कपड़े पहिने वाली कान्ता, मन्त्रलव यह कि वह कान्ता बिलको वह हमेशा कपड़ों में देखा करता था, उसके सामने बिल्कुल नंगी खड़ी हो गई—बिल्कुल नगी ही समझो, क्योंकि एक छोटा सा सौन्दर्य सब कुछ तो छिपा नहीं सकता। खुशिया को वह दुःख-देम कर ऐसे महसूस हुआ था जैसे छिनका उसके

निं या मिया है—

हाथ में रक्त गया है और केशों का गुंथा फिलाल कर उसके माग-नंगा हो गया है। नहीं उसे कुछ और ही महसूस होगा था जैसे—यह स्वयं न होगा। गुजिया मगर बान नहीं बक ही समाप्त हो जाती तो कुछ भी मगर यहाँ मुसीबत अपने आश्रयों का लिनी-न-लिनी होने से दूर कर देता। —‘जब तुमने कहा यह था पड़ी थी कि उन बॉर्लाया ने मुन्कग कर कहा ‘मादों’—यह बान उसे गुजिया है, तो मैंने सोचा, अपना गुजिया ही तो है, जाने जाये जा रही थी।

। जिस तरह कान्ता

‘माली मुन्कग रही थी’ वह बार-बार बड़बड़ायाजवर आरं थी। यह नंगी थी, उस तरह उसी मुन्कगस्ट गुजिया को नगी रक्त दिखाई दिया था मुन्कगस्ट ही नहीं, उसे कान्ता का जरीन भी इस हद न जैसे उस पर रक्त फिरो हुआ है।

पड़ोस की एक औरत

उसे बार-बार बचपन के वे दिन याद आ रहे थे जब वह बाल्टी पानी से भर उससे कहा करती थी, गुजिया घेदा, जा दौड़कर जा, या के बनाये हुए पदों के ना। जब वह बाल्टी भर कर लाया करता था वह धोतीरक्त दे। मैंने मुँह पर पीछे से कहा करती थी, अन्दर आकर यहाँ मेरे पास गेती का पर्दा हटा कर नाथुन मला हुआ है। मुझे कुछ सुझाई नहीं देता। वह धुन की भाग में लिपटी बाल्टी उसके पास रख दिया करता था। उस समय सावुकिसी तरह की उथल-हुई नंगी औरत उसे नजर आती थी, पर उसके मन में पुथल पैदा नहीं होती थी।

ला ! वच्चे और मर्द

‘भई मैं उस समय वच्चा था। विल्कुल भोला-भहूँ। मगर अब तो मैं में बहुत फर्क होता है। वच्चों से कौन पर्दा करता है और अट्ठाईस साल पूरा मर्द हूँ मेरी उम्र इस वक्त लगभग अट्ठाईस साल भी नंगी खड़ी नहीं के जवान आदमी के सामने तो कोई बूढ़ी औरत होगी।’

सारी बातें नहीं थीं

कान्ता ने उसे क्या समझा था ? क्या उसमें वैसी ही कि वह कान्ता को जो एक नौजवान मर्द में होती हैं ? इसमें कोई सन्देह किन चोर-दृष्टि से क्या एकाएक नंग-धड़ंग देख कर बहुत घबरा गया था। है

उसने कान्ता को उन चीजों का जायजा नहीं लिया था जो रोमाना इस्तेमाल के बावनूद घसली हासल पर नायम थी और क्या आश्चर्य के साथ उनके दिमाग में यह सवाल आया था कि दग रुपये में कान्ता बिल्कुल महँगी नहीं और दसहरे के दिन बैंक का बाबू जो दो रुपये की रिप्रायज न मिलने पर वापस चला गया था, बिल्कुल गधा था ? और इन सबके ऊपर क्या एक कारण के लिए उसके सारे पुट्टों में एक अजीब निस्म का तनाव नहीं पैदा हो गया था ? और उसने एक ऐसी घगड़ाई नहीं मनी चाही थी, जिससे उसकी हड्डियाँ तक बटखने लगेँ..... फिर क्या कारण था कि मंगसौर की उस गावली छोकरी ने उसको मर्द न समझा और सिर्फ... सिर्फ खुशियाँ साभक कर उसको अपना सब कुछ देगने दिया ?

उसने गुस्से में धाकर पान की गाड़ी पीक धूक दी जिसने फुटपाथ पर कई बेल-बूटे बना दिये । पीक धूबकर वह उठा और ट्राम में बैठकर अपने घर चला गया ।

घर में उसने नहा-धोकर नई धोती पहनी । जिस बिल्डिंग में रहता था, उसकी एक दुकान में सेलून था । उसके भन्दर जाकर उसने धाईने के सामने पहले बालों में कंधी की फिर एकाएक कुछ स्पान आया । वह कुर्मी पर बैठ गया और बड़ी गम्भीरता से उसने दाढ़ी मूँडने के लिए नाई से कहा । आज धूँकि वह दूसरी बार दाढ़ी मुँडवा रहा था, इसलिए नाई से कहा, 'भरे भई खुशियाँ भूल गये क्या ? सुबह मैंने ही तो तुम्हारी दाढ़ी मूँडी थी ।' इस पर खुशिया ने बड़ी गम्भीरता से दाढ़ी पर उल्टा हाथ फेरते हुए कहा, 'खूँटी अच्छी तरह नहीं निकली....' !'

अच्छी तरह खूँटी निकलवा कर और चेहरे पर पाउडर मलवा कर वह सेलून से बाहर निकला । सामने टैंक्सियों का अड्डा था । बम्बई के शास अन्दाज में उसने 'शी.....शी' करके एक टैंक्सी ड्राइवर को अपनी ओर आकर्षित किया और जंगली के इशारे से उसे टैंक्सी लाने के लिए कहा ।

जब वह टैंक्सी में बैठ गया तो ड्राइवर ने घूमकर उससे पूछा—'कहाँ जाना ? साहब ?'

इन चार शब्दों ने श्रीर विशेष रूप से 'साहब' शब्द ने खुशिया को सचमुच खुश कर दिया। मुस्कराकर उसने बड़े दोस्ताना लहजे में जवाब दिया, 'बता-येंगे। पहले तुम आपेरा हाऊस की तरफ चलो—लैंग्मिटन रोड होते हुए.....सामने ?'

ड्राइवर ने मोटर की लाल भंडी का सिर नीचे दबा दिया। 'टन टन' हुई और टैक्सी ने लैंग्मिटन रोड का रुत किया। लैंग्मिटन रोड का जब आखिरी सिरा आ गया तो खुशिया ने ड्राइवर को आदेश दिया, 'वाँयें हाथ मोड़ लो !'

टैक्सी वाँयें हाथ मुड़ गई। अभी ड्राइवर ने गीयर भी न बदला था कि खुशिया ने कहा, 'यह सामने वाले खम्भे के पास रोक लेना जरा !'

ड्राइवर ने ठीक खम्भे के पास टैक्सी खड़ी कर दी। खुशिया दरवाजा खोलकर बाहर निकला और एक पान वाले की दुकान की ओर बढ़ा। यहाँ से उसने पान लिया और उस आदमी से जो कि दुकान के पास खड़ा था, चन्द बातें कीं और उसे अपने साथ टैक्सी पर बिठाकर ड्राइवर से बोला, 'सीधे ले चलो !'

देर तक टैक्सी चलती रही। खुशिया ने जिधर इशारा किया, ड्राइवर ने उधर स्टीयरिंग फिरा दिया। रौनक वाले कई बाजारों से होते हुए टैक्सी एक गली में दाखिल हुई, जिसमें धुँधली-सी रोशनी थी और बहुत कम लोग आ-जा रहे थे। कुछ लोग सड़क पर विस्तर जमाए लेटे थे। उनमें से कुछ बड़े इत्मीनान से चम्पी करा रहे थे। जब टैक्सी उन चम्पी कराने वालों से आगे निकल गई और एक काठ के बंगले-नुमा मकान के पास पहुँची तो खुशिया ने ड्राइवर को ठहरने के लिए कहा, 'बस, यहाँ रुक जाओ !'

टैक्सी ठहर गई तो खुशिया ने उस आदमी से, जिसको वह पान वाले की दुकान से अपने साथ लाया था, कहा 'जाओ—मैं यहाँ इन्तजार करता हूँ।'

वह आदमी मूर्खों की तरह खुशिया की ओर देखता हुआ, टैक्सी से बाहर निकला और सामने वाले लकड़ी के मकान में घुस गया।

खुशिया जमकर टैक्सी के गद्दे पर बैठ गया। एक टाँग दूसरी टाँग पर रखकर उसने जेब से बीड़ी निकालकर सुलगाई और एक-दो कश लेकर बाहर

सड़क पर फँक दी। वह धब बड़ा बेचैन था, इसलिए उसे लगा कि टैंकरी का एंजिन बन्द नहीं हुआ। उसके सीने में चूँकि फड़फड़ाहट-सी हो रही थी, इसलिए वह समझा कि ड्राइवर ने बिल बढाने के लिए पेट्रोल छोड़ रखा है। अतः उसने तेजी से कहा—‘यों बेकार एंजिन चालू रखकर तुम कितने पैसों और बढ़ा लोगे?’

ड्राइवर ने घूमकर खुशिया की ओर देखा और कहा, ‘सेठ एंजिन तो बन्द है।’

जब खुशिया को अपनी गलती का एहसास हुआ तो उसकी बेचैनी और भी बढ़ गई और उसने कुछ कहने के बदले झोठ धवाने शुरू कर दिए। फिर एकाएकी सिर पर वह किस्तीनुमा कासी टोपी पहन कर, जो धब तक उसकी बगल में दबी हुई थी, उसने ड्राइवर का कंधा हिलाया और कहा, ‘देखो, अभी एक छोकरी आएगी। जैसे ही अन्दर आए तुम मोटर चला देना।’ ‘.....समझे?.....’ धराने की कोई बात नहीं है, मामला ऐसा-वैसा नहीं है।’

इतने में सामने लकड़ी वाले भवन से दो आदमी बाहर निकले। आगे-आगे खुशिया का दोस्त था और उसके पीछे-पीछे कान्ता, जिसने शीश रंग की साड़ी पहिन रखी थी।

खुशिया भट से उस तरफ को सरक गया जिधर धँघेरा था। खुशिया के दोस्त ने टैंकरी का दरवाजा खोला और कान्ता को भंदर दाखिल करके दरवाजा बन्द कर दिया। उसी समय कान्ता की चकित भावाज सुनाई दी, जो शीश से मिलती-जुलती थी—‘खुशिया तुम?’

‘हाँ मैं.....लेकिन तुम्हें खपड़े मिल गए हैं न?’ खुशिया की मोटी भावाज बुलन्द हुई—‘देखो ड्राइवर जूहू ले चलो।’

ड्राइवर ने सैल्फ दबाया। एंजिन फड़फड़ाने लगा। वह बात जो कान्ता ने कही, सुनाई न दे सरी। टैंकरी एक धक्के के साथ धाँप बढ़ी और खुशिया

के दोस्त को सड़क के बीच चकित-विस्मित छोड़ उस अर्ध-प्रकाशित गली में गायब हो गई ।

इसके बाद किसी ने खुशिया को मोटरों की दुकान के उस पत्थर के चबू-तरंग पर नहीं देगा ।

फोभा बाई

हैदराबाद से शहाब आया तो उसने बम्बई सेण्ट्रल स्टेशन के प्लेटफार्म पर पहला कदम रखते ही हनीफ से कहा, 'देखो भाई, आज शाम को वह मामला जरूर होगा। वरना याद रखो, मैं वापस चला आऊँगा।'

हनीफ को मालूम था कि वह 'मामला' क्या है। भतएव शाम को उसने टैक्सी ली। शहाब को साथ लिया। ग्राण्ट रोड के नाके पर एक दस्तान को बुलाया और उससे कहा, 'मेरे दोस्त हैदराबाद से आये हैं। इनके लिए छाकरी चाहिए।'

दस्तान ने अपने कान से उड़सी हुई बीड़ी निकाली और उसको होठों में दबाकर कहा, 'दकनी आसेगी?'

हनीफ ने शहाब की तरफ सवालिया नजरों से देखा। शहाब ने कहा, 'नहीं भाई, मुझे कोई मुसलमान चाहिए।'

'मुसलमान?' दस्तान ने बीड़ी की चूसा—'चलिये!' और यह कहकर वह टैक्सी की अगली सीट पर बैठ गया। ड्राइवर से उसने कुछ कहा। टैक्सी स्टार्ट हुई और विभिन्न बाजारों से होती हुई फोरजेट स्ट्रीट के साथ वाली गली में दाखिल हुई। यह गली एक पहाड़ी पर थी। बहुत ऊँचान थी। ड्राइवर ने गाड़ी को फर्स्ट गियर में डाला। हनीफ को ऐसा महसूस हुआ कि रास्ते में टैक्सी रुककर वापस चलना शुरू कर देगी। मगर ऐसा न हुआ। दस्तान ने ड्राइवर को ऊँचान के ठीक प्राथिरी सिरे पर अहाँ चौक-सा बना था, रुकने के लिए कहा।

हनीफ कभी इस तरफ नहीं आया था। ऊँची पहाड़ी थी जिसके दायीं

तरफ एकदम डलान थी। जिस बिल्डिंग में दल्लाल दो मंजिलें थीं। हालांकि दूसरी ओर की बिल्डिंगें थीं। हनीफ को बाद में मालूम हुआ कि डलान के तीन मंजिलें नीचे थीं जहाँ लिपट जाती थी।

शहाब और हनीफ खामोश बैठे रहे, उन्होंने कोई दल्लाल ने उस लड़की की बहुत प्रशंसा की थी जिसकी में गया था। उसने कहा था, 'वह बड़े अच्छे परिवार तौर पर आपके लिए निकाल कर ला रहा है।' दोनों सोच रहे थे, यह लड़की कौसी होगी जो जा रही है।

थोड़ी देर के बाद दल्लाल प्रकट हुआ; वह झकेला कहा, 'गाड़ी वापस करो।' और यह कहकर वह गाड़ी एक चक्कर लेकर मुड़ी; तीन-चार बिल्डिंगों से कहा, 'रोक लो।' फिर वह हनीफ से सम्बोधित हुई रही थी, कैसे आदमी हैं। मैंने कहा, 'नम्बर वन।'

दस-पन्द्रह मिनट के बाद टैक्सी का दरवाजा के साथ बैठ गई। रात का समय था, गली में हनीफ दोनों उसे अच्छी तरह न देख सके। सीट 'बलो।'

टैक्सी तेजी से उतरने लगी।

हनीफ के पास कोई जगह नहीं थी, जहाँ कोई जैसा तै पाया था, वे डाक्टर खान साहब पास हास्पिटल में नियुक्त था। उसे वहीं दो कमरे मिले आते ही उसे फोन कर दिया था कि वह हनीफ के आयेगा और 'मामला' साथ होगा। चूनाचे टैक्सी दल्लाल सौ रुपये लेकर ग्राण्ट रोड पर उतर गया।

रास्ते में भी शहाब और हनीफ उस स्त्री को

कोई विशेष बातचीत भी न हुई । जब उसने अपने ठेठ हैरावादी लहजे में पूछा, 'आपका उस्मे गरमी (धुम नाम) ?' तो स्त्री ने उत्तर दिया, 'फोमा बाई ।'

'फोमा बाई ?' हनीफ सोचता रह गया कि यह कैसा नाम है ।'

डाक्टर खान उनकी प्रतीक्षा कर रहा था । सबसे पहले शाहाब कमरे में प्रविष्ट हुआ, दोनों गले मिले और एक-दूसरे को खूब गालियाँ दी ।

डाक्टर खान ने जब एक जवान औरत को दरवाजे में देखा तो एकदम बामोश हो गया । 'आइये, आइये ।' उसने अपने सीने पर हाथ रखा । डाक्टर खान आप ?' उसने शाहाब को और देखा ।

शाहाब ने उस स्त्री की ओर दृष्टि डाली । स्त्री ने कहा, 'फोमा बाई ।'

डाक्टर खान ने बढ़कर उससे हाथ मिलाया, आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई । फोमा बाई मुम्कराई, 'मुझे भी खुशी हुई ।'

शाहाब और हनीफ ने एक-दूसरे की ओर देखा । डा० खान ने दरवाजा बन्द कर दिया और अपने मित्रों से कहा, 'आप दूसरे कमरे में चले जाइये, मुझे कुछ काम करना है ।'

शाहाब ने जब फोमा बाई से कहा, 'बतिये ।' तो उसने डाक्टर खान का हाथ पकड़ लिया, 'नहीं आप भी तफरीफ लाइये ।'

'आप तफरीफ ले बतिये, मैं आता हूँ ।' यह कहकर डाक्टर खान ने अपना हाथ छुड़ा लिया ।'

शाहाब और हनीफ फोमा बाई को अन्दर ले गये । थोड़ी देर बातचीत हुई तो उन्हें मालूम हुआ कि उसकी जुवान मोटी थी, वह 'श' और 'स' नहीं उच्चार सकती थी; उसके बदले उसके मुँह से 'फ' निकलता था । इस प्रकार उसका नाम शोमा बाई था । लेकिन कुछ देर और बातें करने के पश्चात् उनको पता चला कि शोमा उसका असली नाम नहीं था । वह मुसलमान थी; जयपुर उसका बतन था, जहाँ से वह चार वर्ष हुए भागकर बम्बई चली आई थी । इसमें अधिक उसने अपने बारे में न बताया ।

साधारण-सी मुखावृत्ति, घाँसें बड़ी नहीं थी; नाक भी सुन्दर थी । ऊपरी

तरफ एकदम ढलान थी। जिस बिल्डिंग में दल्लाल दाखिल हुआ, उसकी केवल दो मंजिलें थीं। हालांकि दूसरी ओर की बिल्डिंगें सब-की-सब चार मंजिला थीं। हनीफ को वाद में मालूम हुआ कि ढलान के कारण उस बिल्डिंग की तीन मंजिलें नीचे थीं जहाँ लिफ्ट जाती थी।

शहाब और हनीफ खामोश बैठे रहे, उन्होंने कोई बात न की। रास्ते में दल्लाल ने उस लड़की की बहुत प्रशंसा की थी जिसको लाने वह उस बिल्डिंग में गया था। उसने कहा था, 'वह बड़े अच्छे परिवार की लड़की है। स्पेशल तौर पर आपके लिए निकाल कर ला रहा हूँ।'

दोनों सोच रहे थे, यह लड़की कौसी होगी जो 'स्पेशल तौर पर' निकाली जा रही है।

थोड़ी देर के बाद दल्लाल प्रकट हुआ; वह अकेला था। ड्राइवर से उसने कहा, 'गाड़ी वापस करो।' और यह कहकर वह अगली सीट पर बैठ गया। गाड़ी एक चक्कर लेकर मुड़ी; तीन-चार बिल्डिंगें छोड़कर दल्लाल ने ड्राइवर से कहा, 'रोक लो।' फिर वह हनीफ से सम्बोधित हुआ, 'आ रही है। पूछ रही थी, कैसे आदमी हैं। मैंने कहा, 'नम्बर वन।'

दस-पन्द्रह मिनट के बाद टैक्सी का दरवाजा खुला और एक स्त्री हनीफ के साथ बैठ गई। रात का समय था, गली में प्रकाश कम था। शहाब और हनीफ दोनों उसे अच्छी तरह न देख सके। सीट पर बैठते ही उसने कहा, 'चलो।'

टैक्सी तेजी से उतरने लगी।

हनीफ के पास कोई जगह नहीं थी, जहाँ कोई 'मामला' हो सकता। अतः जैसा तै पाया था, वे डाक्टर खान साहब पास चले गये। वह मिलिटरी हास्पिटल में नियुक्त था। उसे वहीं दो कमरे मिले हुए थे। शहाब ने बम्बई आते ही उसे फोन कर दिया था कि वह हनीफ के साथ रात को उसके पास आयेगा और 'मामला' साथ होगा। चुनांचे टैक्सी मिलिटरी हस्पताल पहुँची। दल्लाल सौ रुपये लेकर ग्राण्ट रोड पर उतर गया।

रास्ते में भी शहाब और हनीफ उस स्त्री को भली प्रकार न देख सके;

कोई विशेष बातचीत भी न हुई । जब उमने अपने ठेठ हैररावादी लहजे में पूछा, 'आपका उसमें गरामी (शुभ नाम) ?' तो स्त्री ने उत्तर दिया, 'फोमा बाई ।'

'फोमा बाई ?' हनीफ सोचता रह गया कि यह कैसा नाम है ।'

डाक्टर खान उनकी प्रतीक्षा कर रहा था । सबसे पहले सहाय कमरे में प्रविष्ट हुआ; दोनो गले मिले और एक-दूसरे को खूब गालियाँ दी ।

डाक्टर खान ने जब एक जवान औरत को दरवाजे में देखा तो एकदम खामोश हो गया । 'आइये, आइये !' उसने अपने सीने पर हाथ रखा । डाक्टर खान आप ?' उसने सहाय की ओर देखा ।

सहाय ने उस स्त्री की ओर दृष्टि डाली । स्त्री ने कहा, 'फोमा बाई ।'

डाक्टर खान ने बढ़कर उससे हाथ मिलाया, आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई । फोमा बाई मुस्कराई, 'मुझे भी खुशी हुई ।'

सहाय और हनीफ ने एक-दूसरे की ओर देखा । डा० खान ने दरवाजा बन्द कर दिया और अपने मित्रों से कहा, 'आप दूसरे कमरे में चले जाइये; मुझे कुछ काम करना है ।'

सहाय ने जब फोमा बाई से कहा, 'चलिये ।' तो उसने डाक्टर खान का हाथ पकड़ लिया, 'नहीं आप भी तफरीफ लाइये ।'

'आप तफरीफ ले चलिये, मैं जाता हूँ ।' यह कहकर डाक्टर खान ने अपना हाथ छुड़ा लिया ।'

सहाय और हनीफ फोमा बाई को अन्दर ले गये । थोड़ी देर बातचीत हुई तो उन्हें मालूम हुआ कि उसकी जुवान मोटी थी, वह 'श' और स' नहीं उच्चार सकती थी; उसके बदले उसके मुँह से 'फ' निकलता था । इस प्रकार उसका नाम फोमा बाई था । लेकिन कुछ देर और बातें करने के पश्चात् उनको पता चला कि फोमा उसका असली नाम नहीं था । वह मुसलमान थी; जयपुर उसका बतन था, जहाँ से वह चार वर्ष हुए भागकर बम्बई चली आई थी । इससे अधिक उसने अपने बारे में न बताया ।

साधारण-सी मुसाकृति, आँखें बड़ी नहीं थीं; नाक भी सुन्दर थी । ऊपरी

होंठ के ठीक बीच में एक छोटे-से जन्म का निशान था। जब वह बात करती थी तो यह निशान थोड़ा-सा फँस जाता था। गले में वह जड़ाऊ नेकलेस पहने हुए थी; दोनों हाथों में सोने की चूड़ियाँ थीं।

बहुत ही बातूनी स्त्री थी। बैठते ही उसने पधन-उधर की बातें शुरू कर दीं। हनीफ और शहाब केवल 'हूँ-हाँ' करते रहे। फिर उसने उनके बारे में पूछना आरम्भ किया कि वे क्या करते हैं, कहाँ रहते हैं, क्या उम्र है, फादी-फुदा हैं या गँर-फादीफुदा। हनीफ इतना दुबला क्यों है, फहाब ने दो कृत्रिम दाँत क्यों लगाये हैं। गोपन खोता था तो उसका इलाज डॉ० खान से क्यों न कराया। फरमाता क्यों है, फेर क्यों नहीं गाता।

शहाब ने उसे कुछ शेर सुनाये। शोभा ने बड़े जोरों की दाद दी। जब शहाब ने यह शेर सुनाया :

'खेतों को दे लो पानी अब वह रही है गंगा,
कुछ फर लो नौजवानों उठती जवानियाँ हैं !'

तो शोभा उछल पड़ी। 'वाह जनाब शहाब वाह ! बहुत अच्छा फेर है। उठती जवानियाँ हैं, वाह वाह !'

इसके बाद शोभा ने अनगिनत शेर सुनाये—बिल्कुल बेजोड़, बेतुके। जिनका न सिर था न पैर। शेर सुनाकर उसने शहाब से कहा, 'फहाब फाहब, मजा आया आपको ?'

शहाब ने जवाब दिया, 'बहुत।'

शोभा ने गर्माकर कहा, 'ये फेर मेरे थे। मुझे फायरी का बहुत फीक है।'

शहाब और हनीफ दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखा और मुस्करा दिये। इसके बाद सिर्फ एक सही शेर शोभा सुनाया :

'कभी तो मिरे दर्दे-दिल को खबर ले,
मिरे दर्द से आफ़ना होने वाले।'

यह शेर हनीफ कई बार सुन चुका था और शायद पढ़ भी चुका था। लेकिन शोभा ने कहा, 'हनीफ फाहब, यह फेर भी मेरा है।'

हनीफ ने खूब प्रशंसा की, 'माफ़ भल्साह आप तो कमात करती हैं।

शोभा चौकी ! 'माफ़ कीजियेगा, मेरी जुवान में तो कुछ खराबी है, लेकिन आपने क्यों माफ़ भल्साह के बदले माफ़ भल्साह कहा ?'

हनीफ और शहाब दोनों बड़े बेइस्तिहार हम पड़े। शोभा भी हमने लगी। इतने में डाक्टर खान आ गया। उसने अन्दर प्रवेश करते ही शोभा ने कहा, 'क्यों जनाब, इसनी हँसी किस बात पर आ रही है ?'

अधिक हँसने के कारण शोभा की आँखों में आँसू आ गये थे। उसने कमाल में उनको पोछा और डाक्टर खान से कहा, 'एक बात ऐसी हुई थी हम हँस पड़े।'।

डाक्टर खान ने भी हँसना शुरू कर दिया।

'शोभा ने उससे कहा, 'आइये, बैठिये। कारपाई की एक ओर सरक कर उसने डाक्टर खान का हाथ पकड़ा और उस अपने पास बिठा लिया।

फिर दोरी शायरी शुरू हो गई। शोभा ने सम्झी-सम्झी चार बेतुकी गजलें सुनाई। सबने दाद दी मगर शहाब उक्ता गया। वह 'मामला' चाहता था। हनीफ उसके बदले हुए तेवर देखकर भाँग गया, चुनारचे उमने शहाब से कहा, 'अच्छा भाई, मैं इजाजत चाहता हूँ। इन्ना अल्हाक बन मुबह मुलाक़ान होगी।'।

वह यह कहकर कुर्सी पर से उठा। लेकिन शोभा ने उनका हाथ पकड़ लिया, 'नहीं, आप नहीं जा सकते।'।

'हनीफ ने उत्तर दिया, 'मैं माफ़ी चाहता हूँ। मेरी बीबी इन्तेजार कर रही होगी।'।

'ओह ! ...लेकिन नहीं। आप थोड़ी देर और ज़मर बैठें। कभी तो निकं ग्यारह बजे हैं। शोभा ने आप्रह किया।

शहाब ने एक जम्हाई सी, 'बहुत शक्त हो गया हूँ।'।

शोभा ने मुस्कुराकर शहाब की ओर देखा, 'मैं फ़ारी रात आपने पाक हूँ।'। शहाब का मनोविचार दूर हो गया।

हनीफ थोड़ी देर बैठा, फिर दरस्तव सी ओर बना गया। दूसरे दिन मुबह

नौ बजे के करीब शहाब आया और रात की बात सुनाने लगा, 'अजीबो गरीब औरत थी यह फोभा बाई ! पेट पर वालिश्त भर का आपरेशन का निशान था । कहती थी कि यह एक लकड़ी वाले सेठ की रनेल थी । उसने एक फिल्म कम्पनी खोल दी थी; उसके चेकों पर दस्तखत शोभा ही के होते थे । मोटर थी जो अब तक मौजूद है; नीकर-चाकर थे । लकड़ी वाला सेठ उससे बेहद मुहब्बत करता था । उसके पेट का आपरेशन हुआ तो उसने एक हजार रुपये यतीमखाने को दिये ।

हनीफ ने पूछा, 'यह लकड़ी वाला सेठ अब कहां है? '

शहाब ने जवाब दिया, दूसरी दुनिया में टाल खोले बैठा है ।'

औरत खूब थी यह फोभा बाई । मैं दूसरे कमरे में सो गया तो वह डाक्टर खान के साथ लेट गई । सुबह पांच बजे खान ने उससे कहा कि अब तुम जाओ तो शोभा ने कहा 'अच्छा मैं जाती हूं । लेकिन ये मेरे जेवर तुम अपने पास रख लो । मैं अकेली इनके साथ बाहर नहीं निकलती ।

हनीफ ने पूछा, 'डाक्टर ने जेवर रख लिये?'

शहाब ने सिर हिलाया, 'हां ! पहले तो उसका खयाल था कि नकली हैं मगर दिन की रोशनी में जब उसने देखा तो असली थे ।'

'और वह चली गई?'

'हां चली गई । यह कहकर कि वह किसी रोज आकर अपने जेवर वापस ले जायगी ।

'यह तुमने बड़े अच्छे की बात सुनाई ।'

'खुदा की कसम हकीकत है ।' शहाब ने सिगरेट सुलगाया, 'इसीलिए तो मैंने कहा कि यह फोभा बाई अजीबो-गरीब औरत है ।'

हनीफ ने पूछा, 'वैसे कैसी औरत थी?'

शहाब झेंप-सा गया, 'भई, मुझे ऐसे मामलों का कुछ पता नहीं । यह तुम खान से पूछना; वह एक्सपर्ट है ।'

शाम को दोनों खान से मिले । जेवर उसके पास सुरक्षित थे । शोभा ने

नहीं आई थी। खान ने बताया, 'मेरा खयाल है जोना किसी दिमागी सदमे का शिकार है।'

शहाब ने पूछा, 'तुम्हारा मतलब है, पागल है ?'

खान ने कहा, 'नहीं, पागल नहीं है। लेकिन उनका दिमाग यकीनन नार्मल नहीं। येहूद मुखलिस औरत है—एक लड़का है उनका जयपुर में। उसे बराबर दो सौ रुपये माहवार भेजती है। हर सोसरे महीने उससे मिलने जाती है। जयपुर पहुँचते ही मुर्का ओढ़ लेती है, यहाँ उसे पर्दा करना पड़ता है।

हनीफ ने कहा, 'यह तुमने कैसे समझा कि उसका दिमाग नार्मल नहीं।'

खान ने जवाब दिया, 'भई, मेरा खयाल है नार्मल घोरत होनी तो अपने डेढ़-दो हजार के जेवर एक अजनबी के पाग बयो छोड़ जाती ? इसके मलाया उसे मॉर्फिया के इजेक्शन सेने की भादत है।'

शहाब ने पूछा, 'नसा होता है एक बिस्म का।'

खान ने जवाब दिया, 'बहुत ही खतरनाक बिस्म का, साराब से भी बद-तर।'

'उसकी भादत कैसे पछो उसे ?' शहाब ने मेज पर से पेपर मेंट उठाकर दबात पर रख दिया।

'घागरेशन हुमा तो विगड़ गया। दई बहुत खन्न था। उसकी कम करने के लिए डाक्टर मॉर्फिया के इजेक्शन देने रहे लगभग दो महीने तक। बस भादत हो गई।' डाक्टर खान ने मॉर्फिया और उसके परिणामों पर एक भाषण सा देना शुरू कर दिया।

एक सप्ताह हो गया किन्तु शोभा न आई। शहाब बापिस हैदराबाद चला गया था। डाक्टर खान हनीफ के पास जेवर लेकर आया कि खनी दे भायें। दोनों ने शॉट रोड के नाके पर उम दस्तान को बटूत तलाश लिया जो शहाब और हनीफ को शोभा के मकान के पास से गया था; मगर वह नहीं मिला। हनीफ को मानुस था कि गली खीर सी है। डाक्टर खान ने कहा, 'टीक है, हम पता लगा लेंगे। ये जेवर मैं धरने पास नहीं रखना चाहता, खोरी हो गई तो क्या करूँगा ? वह तो अबोव हैपरवाह घोरत है।'

दोनों टैक्सी में वहाँ पहुँच गये। हनीफ ने डाक्टर खान को बिल्डिंग बता दी और कहा, 'मैं नहीं जाऊँगा भई, तुम तलाश करो उसे।'।

डाक्टर खान अकेला उग बिल्डिंग में दाखिल हुआ। एक-दो आदमियों से पूछा मगर शोभा का कुछ पता नहीं चला। नीचे से लिफ्ट ऊपर को आई तो होटल का छोकरा प्यालियाँ उठाये बाहर निकला। खान ने उससे पूछा तो उसने बताया, 'मगरो निचली मंजिल के आगिरी प्लैट पर चले जाओ।' लिफ्ट के जरिये खान नीचे पहुँचा; आगिरी प्लैट की घंटी बजाई। थोड़ी देर के बाद एक बुढ़िया ने दरवाजा खोला। खान ने उससे पूछा, 'शोभा आई हैं?'

बुढ़िया ने उत्तर दिया, 'हाँ हैं।'।

खान ने कहा, 'जाओ उनसे कहो कि डाक्टर खान आये हैं।'।

अन्दर से शोभा की आवाज आई, 'आइये, डाक्टर साहब आइये।'।

डाक्टर खान अन्दर दाखिल हुआ। छोटा-सा ड्राइंग रूम धा चमकीले फर्नीचर से भरा हुआ। फर्श पर कालीन बिछे हुए थे। बुढ़िया दूसरे कमरे में चली गई। फौरन ही शोभा की आवाज आई, 'डाक्टर साहब अन्दर आ जाइये, मैं बाहर नहीं आ सकती।'।

डाक्टर खान दूसरे कमरे में प्रविष्ट हुआ। शोभा चादर ओढ़े लेटी थी। खान ने उससे पूछा, 'क्या बात है?'

शोभा मुस्कराई। 'कुछ नहीं डाक्टर साहब, तेल-मालिश करा रही थी।'।

डाक्टर पलंग के पास कुर्सी पर बैठ गया। उसने जेब से रुमाल निकाला जिसमें जेवर बँधे थे; खोल कर उसे पलंग पर रख दिया। कब तक मैं तुम्हारे इन जेवरों की हिफाजत करता रहूँगा? तुम ऐसी आई कि उधर का रुख तक न किया?'।

शोभा हंसी। 'मुझे बहुत काम थे। लेकिन आपने क्यों तकलीफ की? मैं खुद आकर ले आती।'। फिर उसने बुढ़िया से कहा, 'चाय मंगाओ डाक्टर साहब के लिये।'।

डाक्टर ने कहा, 'नहीं, मुझे अब जाना है।'।

'कहाँ?'

‘हस्पताल !’

‘टैक्सी में आये हैं आप ?’

‘हाँ !’

‘बाहर खड़ी है ?’

डा० ने सर के इशारे से ‘हाँ’ कहा ।

‘तो आप चलिम्मे, मैं आती हूँ !’ यह कहकर उसने जेवर तर्कियों के नीचे रख दिए और ख्याल हाफ्टर खान को दे दिया । डा० खान हुनीफ के पास पहुँचा तो उसने पूछा, ‘मिल गई ?’

डाक्टर भुत्काराया, ‘मिल गई, आ रही है !’

पन्द्रह-बीस मिनट के बाद शोभा ने नेत्री में टैक्सी का दरवाजा खोला और अन्दर बैठ गई ।

डा० खान के कमरे में देर तक फिजूल क्रिस्म की घोरबाजी होती रही । संशय-विमोह तथा प्रेम-मुहब्बत के असह्य निम्नकोटि के शेर शोभा ने सुनाए और कहा वे सब उसके अपने शेर हैं । डा० खान और हुनीफ ने खूब दाद दी । शोभा बहुत खुश हुई और कहने लगी, ‘याकूब फेंक घटो मुझने फंर सुना करते थे ।’

याकूब सेठ वह सफ़दी वाला सेठ था जिसने शोभा के लिए एक फिल्म कम्पनी खोली थी । डा० खान और हुनीफ हँस पड़े; शोभा भी हँसने लगी ।

डाक्टर खान और शोभा की दोस्ती हो गई । शुरू-शुरू में तो वह हफ्ते में दो बार आती थी । अब करीब-करीब रोज आने लगी । रात को माती, सुबह मक्खे बती जाती । शाम को नियमित रूप से माफिया का इजेक्शन लेती । डाक्टर इजेक्शन लगाने के पहले उसके बाजू पर मुद्र करने वाली दवा लगा देता था । यह ठडी-ठडी चीज उसे बहुत पसन्द थी ।

तीन महीने बीते तो शोभा जयपुर जाने के लिए तैयार हुई । मोटर अपनी हाफ्टर खान के हवाले कर दी कि वह उसका ध्यान रखे । डाक्टर उसे स्टेशन पर छोड़ने गया । देर तक गाड़ी में एक-दूसरे से बातें करते रहे । जब गाड़ी

चलने लगी तो शोभा ने एकदम डा० का हाथ पकड़कर कहा, मुझे क्यों एकदम ऐसा लगा है कि कुछ होने वाला है ?'

डा० खान ने कहा, 'क्या होने वाला है ?'

शोभा के चेहरे ने वहनत बरसने लगी, 'मालूम नहीं मेरा दिल बँठा जा रहा है ।'

'डा० खान ने उसे दम-दिलासा दिया । गाड़ी चल दी; दूर तक शोभा का हाथ हिलता रहा ।

जयपुर से शोभा के दो पत्र आये जिनसे केवल इतना पता चला था कि वह सकुशल पहुँच गई है । जब वापस आयी तो उसके लिए बहुत उपहार लायी । उसके बाद एक कार्ड आया जिसमें लिखा था, 'मेरी श्रेष्ठेरी जिन्दगी में सिर्फ एक दिया था वह कल खुदा ने बुझा दिया; भला हो उसका ।'

हनीफ ने ये शब्द पढ़े तो उसकी आँखों में आँसू आ गये । 'भला हो उसका !' में अपार संताप था ।

बहुत समय व्यतीत हो गया; शोभा का कोई खत न आया । पूरा एक वर्ष बीत गया । डा० खान को उसका कोई पता न चला । शोभा अपनी मोटर उसके हवाले कर गई थी । वह उस विल्डिंग में गया जिसकी सबसे निचली मंजिल में वह रहा करती थी । फ्लैट पर कोई और ही कब्जा जमाये था एक एक दलाल किस्म का आदमी । डा० खान आखिर थक-हारकर खामोश हो गया । मोटर उसने एक गैरेज में रखवा दी ।

एक दिन हनीफ घबराया हुआ हस्पताल में आया; उसको चेहरा पीला था डा० खान को ड्यूटी से हटाकर वह एक तरफ ले गया और कहा, 'मैंने आज शोभा को देखा है !'

डा० खान ने हनीफ का वाजू पकड़ कर एकदम पूछा, 'कहाँ ?'

'चीपाटी पर ! मैं उसे विल्कुल न पहचानता क्योंकि वह सिर्फ हड्डियों का ढाँचा थी ।'

डा० खान खोखली आवाज में बोला, 'हड्डियों का ढाँचा ?'

हनीफ ने ठंडी आह भरी . 'शोभा नहीं थी, उसकी छाया थी । अर्थात् सड़क को घेरी हुई, वात बिखरे और घूल भरे; यो चसती थी कि जैसे घपने आपने घगोट रहीं है । मेरे पास आई और कहा, 'मुझे पाँच रुपये दो ।' मैंने उसे न पहचाना । पूछा, 'क्या करोगी पाच रुपये लेकर ?' बोली, 'माफिया का टीका लूँगी ।' एकदम मैंने गौर से उसकी तरफ देखा—उमके कपनी होठ पर अरुम का निशान मौजूद था । मैं चिल्लाया, 'शोभा !' उसने यकी हुई वीरान भाँखों ने मुझे देखा और पूछा, 'कौन हो तुम ?' मैंने कहा, 'हनीफ !' उसने जवाब दिया, 'मैं किसी हनीफ को नहीं जानती ।' मैंने तुम्हारा जिक्र किया कि तुमने उसे बहुत तलाश किया, बहुत ढूँढा । यह सुनकर उसके होठो पर हल्की-सी मुस्कराहट पैदा हुई—और कहने लगी, उससे कहना मत ढूँढ मुझे । मेरी तरफ देखो मैं इतनी मुद्दत से अपना खोया हुआ लाल ढूँढती फिर रही हूँ; यह वृद्धता बिल्कुल बेकार है । कुछ नहीं मिसता । लाओ पाँच रुपये दो मुझे । मैंने उसे पाँच रुपये दिये और कहा, 'अपनी मोटर छो ले जाओ टा० खान ने ।' वह कहवहे लगाती हुई चली गई ।

खान ने पूछा, 'कहाँ ?'

हनीफ ने जवाब दिया, 'मासूम नहीं; किसी टा० के पास गई होगी ।'

टा० खान ने बहुत तलाश किया मगर शोभा का कुछ पता न चला ।

बादशाहत का स्वात्मा

टेलिफोन की घण्टी बजी। मनमोहन पाम ही में बैठा था। उसने रिसीवर उठाया और कहा, 'हलो, फोर फोर फोर फाइव वन।' दूसरी ओर से स्त्री की पतली-सी आवाज आई, 'सारी, रॉय नंबर।' मनमोहन ने रिसीवर रख दिया और किताब पढ़ने में निमग्न हो गया। यह किताब वह लगभग बीस बार पढ़ चुका था, इसलिए नहीं कि उसमें कोई विशेष बात थी बल्कि दफ्तर में, जो बीरान पड़ा था, एक सिर्फ यही किताब थी जिसके प्रतिम पन्ने कीड़े खा गये थे।

एक हफ्ते से दफ्तर पर मनमोहन का आधिपत्य था क्योंकि उसका मालिक जो कि उसका दोस्त था कुछ रुपया कर्ज लेने के लिए कहीं बाहर गया हुआ था। मनमोहन के पास चूँकि रहने के लिए कोई अपह नहीं थी। इसलिए फुटपाथ से अस्थायी रूप में वह इस दफ्तर में आ गया था और इस एक सप्ताह में वह दफ्तर की इकलौती किताब लगभग बीस बार पढ़ चुका था।

दफ्तर में वह भकेला पड़ा रहता; नौकरी से उसे नफरत थी। अगर वह चाहता तो किसी भी फिल्म कम्पनी में फिल्म डायरेक्टर के रूप में नौकर हो सकता था, किन्तु वह गुलामी नहीं चाहता था। अल्पन्त निरीह तथा सहृदय व्यक्ति था; मार-टोस्त उसके दैनिक तर्ज का प्रबन्ध कर देते थे। यह खर्च बहुत ही कम था : सुबह को चाय की प्याली और दो टोस्ट; दोपहर को दो फ्रूल्के और घोड़ी-नी तरकारी, सारे दिन में एक पेंकेट सिगरेट और वस।

मनमोहन का कोई सम्बन्धी भा नाती नहीं था। वह नितान्त सांतिप्रिय तथा निर्जनता का वातावरण पसंद करता था, था बड़ा साहसी तथा विपदाएँ

सहने वाला—कई दिन तक भूगा रह सकता था उसके बारे में उसके मित्र और तो कुछ नहीं पर उनका यद्यप्य जानते थे कि वह बचपन ही से घर-बार छोड़ कर निकल आया था और एक मुद्दन से बम्बई के फुट-गायों पर आवाद था। जीवन में उसे केवल एक अभिलाषा थी : स्त्री से प्रेम करने की। वह कहा करता था यदि मुझे किसी स्त्री का प्रेम प्राप्त हो गया तो मेरी सारी जिन्दगी बदल जायगी।

मित्रगण उससे कहने, 'तुम काम फिर भी न करोगे।

मनमोहन आह भर कर जवाब देता, 'काम ? मैं मुजस्सम काम बन जाऊँगा।

दोस्त कहते, तो शुरू कर दो किंगी से इश्क।'

मनमोहन जवाब देता, 'नहीं, मैं ऐसे इश्क का कायल नहीं जो मद की तरफ से शुरू हो।'

दोपहर के खाने का समय निकट आ रहा था। मनमोहन ने सामने दीवार पर क्लाइव की ओर देखा; टेलीफोन की घण्टी बजनी शुरू हुई। उसने रिसीवर उठाया और कहा, 'फोर फोर फोर फाइव सेवन।'

'दूसरी ओर से पतली-सी आवाज आई, 'फोर फोर फोर फाइव सेवन ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'जी हाँ।'

'स्त्री की आवाज ने पूछा आप कौन हैं ?'

'मैं मनमोहन, फरमाइये !'

दूसरी तरफ से आवाज आई तो मनमोहन ने कहा, 'फरमाइये किससे बात करना चाहती हैं आप ?'

आवाज ने जवाब दिया, 'आपसे।'

मनमोहन ने कुछ चकित हो पूछा, 'मुझसे ?'

'जी हाँ, आपसे। क्यों आपको कोई आपत्ति है ?'

'मनमोहन सटपटा-सा गया, 'जी ? जी नहीं।'

आवाज मुस्कराई, 'आपने अपना नाम मदन मोहन बताया था ?'

'जी नहीं, मनमोहन।'

'मनमोहन !'

कुछ क्षण शानि में बीत गये तो मनमोहन ने कहा, आप जाने करना चाहती थी मुझसे ?'

आवाज धाई, 'जी हाँ !'

'तो क्यों ?'

'कुछ अवकाश के बाद आवाज धाई, ममम् में नहीं आता क्या बात करूँ ? आप ही शुरू कीजिए ना कोई बात ।'

'बहुत बेहतर !' यह कहकर मनमोहन ने थोड़ी देर सोचा ।

'नाम अपना बता चुका हूँ; अस्थायी रूप से ठिकाना मेरा यह दफ्तर है । पहले फुटपाथ पर सोता था अब एक सप्ताह से इस भाकित की बड़ी मेज पर सोना हूँ ।'

आवाज मुस्कराई, 'फुटपाथ पर आप मसहरी लगाकर सोते थे ?'

मनमोहन हँसा, 'इससे पहले कि मैं आपसे बातचीत करूँ मैं यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैंने कभी झूठ नहीं बोला । फुटपाथ पर सोने मुझे एक जमाना हो गया है, यह दफ्तर लगभग एक हफ्ते में मेरे बच्चे में है । आज-कल ऐसा कर रहा हूँ ।'

आवाज मुस्कराई, 'कैसे ऐसा ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'एक निताब मिल गई थी यहाँ से । प्रतिम पाने गुम हैं लेकिन मैं इसे बीग बार पढ़ चुका हूँ । पूरी किताब कभी हाथ नहीं लाया होगा कि हीरो-हीरोइन के प्रेम का परिणाम क्या हुआ ।'

'आवाज हँसी, आप बड़े दिनभर घाड़मी हैं ।'

'मनमोहन ने बड़े तबल्लुक से कहा, 'आपकी इया है ।'

आवाज ने कुछ मकौच के बाद पूछा, आपके मनोरञ्जन का माध्यम क्या है ?'

'मनोरञ्जन ?'

'मेरा मतलब है ध्यान करते क्या है ?'

करता हूँ ? कुछ भी नहीं । एक बेकार इन्सान क्या कर सकता है ?
तावारागदीं करता हूँ; रात को सो जाता हूँ ।'

। ने पूछा, यह जीवन आपको अच्छा लगता है ?'

। ने सोचने लगा, ठहरिए ! बात दरअसल यह है कि मैंने इस पर
हीं किया अब आपने पूछा है तो मैं अपने आपसे मालूम कर रहा हूँ
दगी मुन्हें अच्छी लगती है या नहीं ?'

जवाब मिला ?'

प्रकाश के पश्चात् मनमोहन ने जवाब दिया, 'जी नहीं । लेकिन
है कि ऐसी जिन्दगी मुझे अच्छी लगती हो होगी जबकि एक बर्स
र रहा हूँ ।'

जि हँसी तो मनमोहन ने कहा, 'आपकी हँसी बड़ी सुरीली है ।'

जि धरमा गई, शुक्रिया ! और बातचीत का सिलसिला बंद हो

मोहन थोड़ी देर रिसीवर हाथ में लिये खड़ा रहा । फिर मुस्कराकर
दिया और दफ्तर बन्द करके चला गया ।

दिन सुबह आठ बजे जबकि मनमोहन दफ्तर की बड़ी मेज पर सो
लीफोन की घण्टी बजनी शुरू हुई । जैभाइयाँ लेते हुए उसने रिसीवर
पर कहा, 'हलो, फोर फोर फोर फाइव सेवन ।'

री और से आवाज आई, 'आदाब अर्ज मनमोहन साहब ।'

दाब अर्ज !' मनमोहन एकदम चौंका, ओह आप ! आदाब अर्ज,
त !'

आज आई, आप शायद सो रहे थे ?'

हाँ । यहाँ आकर मेरी आदतें कुछ बिगड़ रही हैं । वापस फुटपाथ पर
बड़ी मुसीबत हो जायगी ।'

आज मुस्कराई, 'क्यों ?'

हाँ सुबह पाँच बजे से पहले-पहले उठना पड़ता है ।'

आवाज हँसी। मनमोहनने पूछा 'कल आपने एकदम टेलीफोन बन्द कर दिया।'।

आवाज शरमाई, 'आपने मेरी हँसी की प्रशंसा क्यों की थी ?'

मनमोहन ने कहा, 'लो साहब, यह भी अजीब बात कही आपने। कोई चीज सूबसूरत हो तो उसकी तारीफ नहीं करनी चाहिए ?'

'बिल्कुल नहीं।'।

'यह शर्त आप मुझ पर नहीं लगा सकती। मैंने आज तक कोई शर्त अपने ऊपर नहीं लागू होने दी। आप हँसेंगे तो मैं जरूर तारीफ करूँगा।'।

'मैं टेलीफोन बन्द कर दूँगी।'।

'बड़े शौक से।'।

'आपको मेरी नाराजगी का कोई ख्याल नहीं।'।

'मैं सबसे पहले अपने आपको नाराज नहीं करता चाहता। अगर मैं आपकी हँसी की प्रशंसा न करूँ तो मेरी रुचि मुझसे नाराज हो जायगी और मेरी यह रुचि मुझे बहुत प्रिय है।'।

थोड़ी देर खामोशी रही। इसके बाद दूसरे सिरे से आवाज आई, 'क्षमा कीजिएगा, मैं अपनी मौकुरानी से कुछ कह रही थी। हाँ तो आपकी रुचि आपको बहुत प्रिय है... हाँ यह तो बताइए आपकी शौक किस चीज का है ?'

'बया मतलब ?'

'यानी कोई अभीष्टकोई काम.... मेरा मतलब है आरको भाता क्या है ?'

मनमोहन हँसा, 'कोई काम नहीं आता; फोटोग्राफी का थोड़ा-सा शौक है।'।

'बहुत अच्छा शौक है।'।

'इसकी अच्छाई या बुराई के बारे में मैंने कभी नहीं सोचा।'।

आवाज ने पूछा, 'कैमरा तो आपके यहाँ बहुत अच्छा होना ?'

मनमोहन हँसा, मेरे पास अपना कोई कैमरा नहीं। दोस्तों से माँग कर

शोक पूरा कर लेता हूँ । अगर मैंने कभी कुछ कमाया तो एक कैमरा मेरी नजर में है, वह खरीदूँगा ।'

आवाज ने पूछा, 'कौन-सा कैमरा ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'एन्जेला रिप्लेक्स कैमरा मुझे बहुत पसन्द है ।'

थोड़ी देर गामोशी रही; उसके बाद आवाज आई, 'मैं कुछ सोच रही थी ।'
'क्या ?'

आपने न तो मेरा नाम पूछा, 'न टेलीफोन नम्बर मालूम किया ।'

'मुझे इसकी आवश्यकता ही न पड़ी ।'

'क्यों ?'

'नाम आपका कुछ ही हो गया फर्क पड़ता है । आपको मेरा नाम नम्बर मालूम है, वस ठीक है । आप अगर चाहोगी कि मैं आपको फोन करूँ तो नाम और नम्बर बता दीजिएगा ।'

'मैं नहीं बताऊँगी ।'

'लो साहब, यह भी खूब रहा मैं जब आपसे पूछूँगा ही नहीं तो बताने न बताने का सवाल ही कहाँ पैदा होता है ?'

आवाज मुस्कराई, 'आप अजीबो-गरीब आदमी हैं ।'

मनमोहन मुस्काया, 'जी हाँ, कुछ ऐसा ही आदमी हूँ ।'

चन्द सेकण्ड खामोशी रही, 'आप फिर कुछ सोचने लगीं ?'

'जी हाँ, कोई और बात इस वक्त सूझ नहीं रही थी ।'

'तो फोन बन्द कर दीजिए, फिर सही ।'

आवाज कुछ तीखी हो गई, 'आप बहुत रूखे आदमी हैं । टेलीफोन बन्द कर दीजिए—लीजिए मैं बन्द करती हूँ ।'

मनमोहन ने रिसीवर रख दिया और मुस्कराने लगा ।

आध घण्टे के बाद जब मनमोहन हाथ-मुँह धोकर कपड़े पहन कर बाहर निकलने के लिए तैयार हुआ तो टेलीफोन की घण्टी बजी । उसने रिसीवर

और कहा, 'फोर फोर फोर फाइव सेवन ।'

आवाज आई, 'मिस्टर मनमोहन !'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'जी हाँ, मनमोहन । फरमाइए ।'

आवाज मुस्काई, 'फरमाना यह है कि मेरी नाराजगी दूर हो गई है ।'

मनमोहन ने बड़ी विनम्रता से कहा, 'मुझे बड़ी खुशी हुई है ।'

'नास्ता करते हुए मुझे खयाल आया कि आपके साथ बिगाड़ना नहीं चाहिए । हाँ आपने नास्ता कर लिया ?'

'जी नहीं, बाहर निकलने ही वाला था कि आपने टेलिफोन किया ।'

'ओह, तो आप आइए ।'

'जी नहीं, मुझे कोई जल्दी नहीं । मेरे पास पैसे नहीं हैं इसलिए मेरा खयाल है कि आज नास्ता नहीं होगा ।'

'आपकी बातें सुनकर'— आप ऐसी बातें क्यों करते हैं ! मेरा मतलब है ऐसी बातें आप इसलिए करते हैं कि आपको दुःख होना है ?'

मनमोहन ने खग भर सोचा, 'जी नहीं मेरा यदि कोई दुःख दर्द है तो मैं उसका भावी हो चुका हूँ ।'

'आवाज ने पूछा, 'मैं कुछ रुपये आपको भेज दूँ ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'भेज दीजिए, मेरे किनासतों में एक आपकी भी बढ़ हो जायगी ।'

'नहीं मैं नहीं भेजूंगी ।'

'आपकी मर्जी ।'

'मैं टेलिफोन बन्द करती हूँ ।'

'मच्छा ।'

मनमोहन ने रिसीवर रख दिया और मुस्कराता हुआ दरवाज़े से निकल गया । रात को दम बजे के करीब वापस आया और रूपाड़े बदल कर मेज पर सेट कर सोचने लगा कि यह कौन है जो उसे फोन करती है । आवाज से केवल इतना पता चलता था कि जवान है; हँसो बहून सुगीतो है, बानचीत से यह साफ आँखिर है कि पित्रित-मुसंस्कृत है । बहुत देर तक वह उसके बारे में

सोचता रहा। इधर गलाक ने ग्यारह बजाये, उधर टेलिफोन की घण्टी बजी। मनमोहन ने रिसीवर उठाया, 'हलो !'

दूसरे सिरे से आवाज आई, 'मिस्टर मनमोहन ?'

'जी हाँ, मनमोहन। फरमाइये।'

'फरमाना यह है कि मैंने आज दिन में कई बार रिंग किया, आप कहाँ गायब थे ?'

'साहब, बेकार हूँ लेकिन फिर भी काम पर जाता हूँ।'

'किस काम पर ?'

'आवारा गर्दी।'

'वापस कब आये ?'

'दस बजे।'

'अब क्या कर रहे थे ?'

'मेज पर लेटा आपकी आवाज से आपकी तस्वीर बना रहा था।'

'बनी ?'

'जी नहीं।'

'बनाने को कोशिश न कीजिए। मैं बड़ी बदसूरत हूँ।'

'माफ कीजिएगा, अगर आप वास्तव में बदसूरत हैं तो टेलिफोन बन्द कर दीजिए। बदसूरत से मुझे नफरत है।'

'आवाज मुस्कराई, 'ऐसा है तो चलिए मैं खूबसूरत हूँ। मैं आपके दिल में नफरत पैदा नहीं करना चाहती।'

'थोड़ी देर खामोशी रही। मनमोहन ने पूछा, 'कुछ सोचने लगी ?'

आवाज चौंकी, 'जी नहीं, मैं आपसे पूछने वाली थी कि.....'

'सोच लीजिए अच्छी तरह।'

'आवाज हँस पड़ी, 'आपको गाना सुनाऊँ ?'

'जरूर।'

'ठहरिए।'

गला साफ करने की आवाज आई; फिर 'गालिव' की यह गजल शुरू हुई :

तुला थी है गमे दिल.....

सहगल वाली नई घुन थी; आवाज में दर्द और निष्ठा थी । जब गजल खत्म हुई तो मनमोहन ने दाद दी, 'बहुत खूब ! जिन्दा रहो !'

दफ्तर की बड़ी मेज पर मनमोहन के दिल व दिमाग में मारी रात 'गालिव' की गजल भूँजनी रही । सुबह जल्दी उठा और टेलिफोन का इन्जतार करने लगा । लगभग ड़ाई घण्टे कुर्सी पर बैठा रहा, पर टेलिफोन की घण्टी न बजी । जब निराशा हो गया तो उसने एक विचित्र कटुता अपने कण्ठ में अनुभव की; उठ कर टहलने लगा । उसके बाद मेज पर लेट गया और झुड़ने लगा । वही किताब जिसे अनेक बार वह पढ़ चुका था उठाई और पढ़ना शुरू कर दिया । यों ही सेंटे सेंटे नाम हो गई । करीब सात बजे टेलिफोन भी घण्टी बजी । मनमोहन ने रिश्कीवर उठाया और तेजी से पूछा, 'कौन है ?'

वही आवाज आई, 'मैं !'

मनमोहन का स्वर कुछ कटु था, 'इतनी देर से तुम कहाँ थी ?'

आवाज सरजी, 'वहाँ ?'

'मैं सुबह से यहाँ झक मार रहा हूँ, न नास्ता किया है न दोपहर का खाना खाया है । जब कि पेसे मेरे पास मौजूद थे ।'

आवाज आई, 'मेरी जब मर्जी होगी टेलिफोन करूँगी ।....आप....'

मनमोहन ने बात काट कर कहा, 'देखो जी, यह सितसिला बन्द करो । टेलिफोन करना है तो एक समय निश्चित करो । मुझसे प्रतीक्षा नहीं की जाती ।'

आवाज मुस्कराई, 'आज की माफी माहती हूँ, कल से नियमित रूप से सुबह-शाम फोन आया करेगा आपको ।'

'यह ठीक है ।'

आवाज हेसी, 'मुझे-मालूम नहीं था, आप ऐसे दिगड़े दिल हैं।'

मनमोहन मुस्कराया, 'माफ करना इन्तेजार से मुझे बहुत-बहुत कोपत होती है और जब मुझे किसी बात से कोपत होती है तो अपने आपको सजा देना शुरू कर देता हूँ।'

वह कंग ?'

'सुबह तुम्हारा टेलिफोन न आया, चाहिए तो यह था कि मैं चला जाता, लेकिन बंठा दिन भर अन्दर-ही-अन्दर कुड़ता रहा; बचपना है साफ !'

आवाज हमदर्दी में डूब गई, 'काश मुझसे यह गलती न होती ! मैंने जान-बूझकर सुबह फ़ोन न किया।'

'क्यों ?'

'यह जानने के लिए कि आप इन्तेजार करेंगे या नहीं।'

मनमोहन हँसा, 'बहुत चंचल हो तुम। अच्छा अब फ़ोन बन्द करो, मैं खाना खाने जा रहा हूँ।'

'बेहतर, कब तक लौटियेगा ?'

'आधे घण्टे तक।'

मनमोहन आधा घण्टे के बाद खाना खाकर लौटा तो उसने फ़ोन किया। देर तक दोनों बातें करते रहे। इसके बाद उसने 'शालिव' की राजल सुनाई। मनमोहन ने दिल से दाद दी। फिर टेलीफ़ोन का सिल सिला बन्द हो गया।

अब हर रोज सुबह व दाम मनमोहन के पास उसका टेलिफ़ोन आता। घण्टी की आवाज सुनते ही वह टेलिफ़ोन की ओर लपकता। कभी-कभी बातें घण्टों जारी रहतीं, इस दौरान में मनमोहन ने न तो उससे टेलीफ़ोन नम्बर पूछा न उसका नाम। शुरू-शुरू में तो उसने उसकी आवाज की मदद से कल्पना के पर्दे पर उसका चित्र बनाने का यत्न किया था, परन्तु अब तो जैसे वह आवाज ही से सन्तुष्ट हो गया था; आवाज ही शक्ल थी, आवाज ही रस थी, आवाज ही जिस्म था, आवाज ही आत्मा थी। एक दिन उसने , 'मोहन, तुम मेरा नाम क्यों नहीं पूछते ?'

मनमोहन ने मुस्करा कर कहा, 'तुम्हारा नाम, तुम्हारी भावाग्र है, जो बहुत सुरीली है।'

'इससे क्या शक है ?'

एक दिन वह बड़ा टेढ़ा सवाल कर बैठी, 'मोहन, तुमने कभी किसी लड़की से प्रेम किया है ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'नहीं।'

'क्यों ?'

मोहन एकदम उदास हो गया, 'इस 'क्यों' का उत्तर कुछ शब्दों में नहीं दे सकता; मुझे धरने जीवन का सारा मसवा उठाना पड़ेगा और अगर कोई उत्तर न मिले तो बड़ा कष्ट होगा।'

'जाने दोजिए !'

टेलिफोन का सम्बन्ध स्थापित हुए लगभग एक महीना हो गया। दिन में दो बार निश्चित रूप से उसका फोन आता। मनमोहन के पास अपने दोस्त का लत आया कि कर्ज का बन्दोबस्त हो गया है। सान-माठ रोज में वह बम्बई पहुँचने वाला है। मनमोहन यह पत्र पढ़कर उदास गया। उसका टेलिफोन आया तो मनमोहन ने उससे कहा, 'मेरी दफ्तर की बादशाही अब खन्द दिनों की मेहमान है।'

उसने पूछा, 'क्यों ?'

मनमोहन ने जवाब दिया, 'कर्ज का बन्दोबस्त हो गया है, दफ्तर आबाद होने वाला है।'

'तुम्हारे किसी और दोस्त के यहाँ टेलीफोन नहीं है ?'

'कई दोस्त हैं जिनके टेलीफोन हैं; पर मैं तुम्हें उनका नम्बर नहीं दे सकता।'

'क्यों ?'

'मैं नहीं चाहता कि तुम्हारी आवाज कोई और सुने।'

'फारण ?'

'मैं बहुत ईर्ष्यामु हूँ।'

वह मुस्कराई, 'यह तो बड़ी भुगीवत हुई ।'

'क्या किया जाय ?'

'आगिरी दिन जब तुम्हारी वादशाहत खत्म होने वाली होगी मैं तुम्हें अपना नम्बर बता दूंगी ।'

'यह ठीक है ।'

मनमोहन की नारी उदासी दूर हो गई । वह उस दिन की प्रतीक्षा करने लगा जब दफ्तर में उनकी वादशाहत खत्म हो । अब फिर उसने उसकी आयाज की मदद से अपनी कल्पना के पर्दे पर उसका चित्र बनाने की चेष्टा की । कई चित्र बने; परन्तु वह मन्तुष्ट न हुआ । उसने सोचा, 'चन्द दिनों की बात है, उगने टेलीफोन नम्बर बता दिया तो मैं उसे देख भी सकूँगा ।' उसका विचार आते ही उसका दिन व दिमाग मुन्न हो जाता । 'मेरी जिन्दगी का वह क्षण कितना महान क्षण होगा जब मैं उसे देख सकूँगा ।'

दूसरे दिन जब उसका टेलीफोन आया तो मनमोहन ने उससे कहा, 'तुम्हें देखने की उत्कण्ठा राजीव हो रही है ।'

'क्यों ?'

'तुमने कहा था कि अन्तिम दिन जब यहाँ मेरी वादशाहत खत्म होने वाली होगी तो तुम मुझे अपना नम्बर बता दोगी ।'

'कहा था ।'

'इसका मतलब यह है कि तुम मुझे अपना पता दे दोगी—यानी मैं तुम्हें देख सकूँगा ।'

'तुम मुझे जब चाहो देख सकते हो; आज ही देख लो ।'

'नहीं, नहीं ।' फिर कुछ सोचकर कहा । 'मैं जरा अच्छे वस्त्रों में तुमसे मिलना चाहता हूँ । आज ही एक दोस्त से कह रहा हूँ । वह मुझे सूट सिलवा देगा ।'

वह हँस पड़ी । 'बिल्कुल बच्चे हो तुम ! सुनो, जब तुम मुझ से मिलोगे तो एक उपहार दूँगी !'

मनमोहन ने आबुकता के स्वर में कहा, 'तुम्हारे दर्शनी से बढ़कर और कोई उपहार क्या हो सकता है ?'

'मैंने तुम्हारे लिये ऐक्जैक्ट कंमरा खरीद लिया है ।'

'ओह !'

'इस शर्त पर दूंगी कि पहले मेरा फोटो उतारा ।'

मनमोहन मुस्कराया, 'इस शर्त का फंसना मुलाकात पर करूँगा ।'

घोड़ी देर और घातघीत हुई; उसके बार उधर से बह चोती, 'मैं कल और परसो तुम्हें टेलीफोन नहीं कर सकूँगी ।'

मनमोहन ने बिस्ताजनक स्वर में पूछा, 'क्यों ?'

'मैं अपने कुटुम्बियों के साथ बाहर जा रही हूँ; केवल दो दिन तक अनुपस्थित रहूँगी । मुझे लमा कर देना ।'

यह सुनने के बाद मनमोहन सारे दिन वषत्र ही में रहा । दूसरे दिन सुबह उठा तो उसे खुलार-सा अनुभव हुआ । उसने सोचा कि यह उदासी शामद इसलिए है कि उसका टेलीफोन नहीं आयेगा । लेकिन दोपहर तक खुलार तेज हो गया; शरीर तपने लगा; आँखों से अंगारे फूटने लगे । मनमोहन मेज पर लेट गया । प्यास बार-बार सताती थी । वह उठता और मल से मुँह लगाकर पानी पीता । शाम के करीब उसे अपने सीने पर जोर महसूस होने लगा; दूसरे दिन वह बिल्कुल निढाल था । नास बड़ी कठिनाई से आता था; सीने की दुखन बहुत बढ़ गई थी ।

बई नार उस पर येहोसी-सी छा गई । बुधवार की तेजी में वह घण्टी टेलीफोन पर अपनी प्रिय भावाज के साथ बातें करता रहा । शाम को उसकी हालत बहुत ज्यादा बिगड़ गई; घुँघलाई हुई आँखों से उसने कलाक की ओर देखा । उसके कानों में अजीबो-गरीब आवाजें गूँज रहीं थी जैसा हजारों टेलीफोन बोल रहे हों । सोने में घुँघरू से बज रहे थे—चारों ओर आवाजें-ही-आवाजें थीं, इसलिए जब टेलीफोन की घंटी बजी तो उसके कानों तक उसकी आवाज न पहुँची । बहुत देर तक घंटी बजती रही । एकदम मनमोहन चौका उसके कान सब चुन रहे थे । वह सड़खड़ाता हुआ उठा और टेलीफोन तक

गया; दीवार का सहारा लेकर उसने काँपते हुए हाथों से रिसीवर उठाया और रूखे होठों पर लकड़ी जैसी जीभ फेरकर कहा, 'हलो !'

दूपरे सिर से वह लकड़ी बोली, 'हलो, मनमोहन !'

'जरा ऊँचा बोली.....'

मनमोहन ने कुछ कहना चाहा किन्तु वह सब उसके कंठ में रुँधकर रह गया ।

आवाज आई, 'मैं जल्दी आ गई, बड़ी देर से तुम्हें रिग कर रही हूँ, कहाँ थे तुम ?'

मनमोहन का सिर घूमने लगा ।

आवाज आई, 'क्या हो गया है तुम्हें ?'

मनमोहन ने बड़ी मुश्किल से इतना कहा कहा, मेरी वादशाहत खत्म होगई है आज ।' उसके मुँह से खून निकला और एक पतली रेखा की भाँति गर्दन तक दोड़ता चला गया ।

आवाज आई, 'मेरा नम्बर नोट कर लो—फ़ाइव नॉट थ्री वन फ़ोर; फ़ाइव नॉट थ्री वन फ़ोर । सुनह फ़ोन करना ।' यह कहकर उसने रिसीवर रख दिया । मनमोहन भीचे मुँह टेलिफोन पर गिरा—उसके मुँह से खून के बुलबुले फूटने लगे ।

निक्की

तत्नाक लेने के बाद वह विल्कुल नशीब हो गई थी। अब वह हर रोज का दाँता-किनकिल और मार-कुटाई नहीं थी। निक्की बड़े धाराम और इतमीतान से अपना गुजर-बसर कर रही थी।

यह तत्नाक पूरे दस वर्षों बाद हुई थी। निक्की का पति बहुत क्रूर व्यक्ति था—पहले दर्जे का निम्बटू और सराबो-कबाबो। भग-धरस की भी लत थी। कई-कई दिन भंगडस्तानों में पड़ा रहता था। एक सड़का हुआ था, वह पैदा होते ही मर गया। कई वर्ष बाद एक लड़की हुई जो जीवित थी और अब नौ वर्ष की थी।

निक्की से उसके पति नाम को यदि दिलचस्पी थी तो सिर्फ इतनी कि वह उसे मार-पीट सकता था; जो मर के गालियाँ दे सकता था। तद्विषय में भाये तो कुछ घबरे के लिए घर से निष्काश देता था। इसके प्रतिरिक्त निक्की से उसे और कोई सरोकार नहीं था। मेहनत-मजदूरी की जब थोड़ी-सी रकम निक्की के पास जमा होती थी तो वह उसे बच-बस्तो खीन लेता था।

तत्नाक बहुत पहले हो चुकी थी; इसलिए पति-पत्नी के निर्वाह की कोई संभावना ही नहीं थी। यह केवल गाम की जिद थी कि मामला इतनी देर सटका रहा, इसके अलावा एक बात यह भी थी कि निक्की के घामे पीछे कोई भी न था। माँ-बाप ने उसे डोली में ढाङ्कर गाम के सुपुर्द किया और दो मास के अन्दर-अन्दर वे परलोकवासी हो गये। जैसे उन्होंने केवल इसी उद्देश्य के हेतु मृत्यु को टाल रखा था। उन्हें अपनी पुत्री को एक लम्बी मीन के लिए गाम के हवाले करना था। उन्होंने खुद को और ज्यादा दूर कर लिया था।

गाम कैसा है यह निक्की के माँ-बाप भली भाँति जानते थे । उनकी बेटी उम्र भर रोती रहेगी यह भी उन्हें अच्छी तरह मालूम था । मगर उन्हें तो अपने जीवन-काल में एक कर्तव्य पूरा करना था और वह कर्तव्य उन्होंने ऐसा पूरा किया कि सारा भार निक्की के दुर्बल कंधों पर टाल गये ।

तलाक लेने से निक्की का यह मतलब नहीं था कि वह किसी शरीफ आदमी से 'निकाह' करना चाहती थी । दूसरी शादी का उम्र कभी खयाल तक भी नहीं आया था । तलाक होने के बाद वह क्या करेगी, न ही उसके बारे में भी निक्की ने कभी सोचा था । असल में वह हर रोज की बक-बक झगड़क से सिर्फ एक सताप की साँस लेना चाहती थी । उसके बाद जो होने वाला था उसे निक्की सह्य सहन करने को तैयार थी ।

लड़ाई-भगड़े का श्रीगणेश तो पहले ही दिन हो गया था जब निक्की दुल्हन बन कर गाम के घर आई थी । लेकिन तलाक का सवाल उस समय पैदा हुआ था जब वह गाम के सुधार के लिए दुआयें माँग-माँग कर लाचार हो गई थी और उसके हाथ अपनी या उसकी मौत के लिए उठने लगे थे । जब यह प्रयास भी निरर्थक सिद्ध हुआ तो उसने अपने पति की मिनत-समाजत शुरू की कि वह उसे ब्रह्म दे और अलग करदे । लेकिन प्रकृति की विडम्बना देखिए कि दस वर्ष के पश्चात् तकिये में एक अघेड उम्र की मीरासन से गाम की आँख लड़ी और एक दिन उसके कहने पर उसने निक्की को तलाक दे दी और बेटी पर भी अपना कोई हक न जनाया हालाँकि निक्की को इस बात का हमेशा धड़का रहता था कि अगर उसका पति विवाह-विच्छेद के लिए सहमत होगया तो वह बेटी कभी उसके हवाले नहीं करेगा । बहरहाल निक्की नचीत होगई और एक छोटी-सी कोठरी किराये पर लेकर चैन के दिन बिताने लगी ।

उसके दस वर्ष उदास खामोजी में व्यतीत हुये थे । दिल में हर रोज उसके बड़े-बड़े तूफान जमा होते थे परन्तु वह पति के सम्मुख उफ तक नहीं कर सकती थी; इसलिए कि उसे बचपन ही से शिक्षा मिली थी कि पति के सामने बोलना ऐसा पाप है जो कभी क्षमा किया ही नहीं जाता । अब वह स्वतंत्र थी; इस-
 कि होती थी कि अपनी दस वर्ष की भड़ास किसी-न-किसी तरह

निकाले । धतः पड़ोसियों से उसकी भक्तर सड़ाई-भिड़ाई होने लगी । मामूली तू-तू, मे-मे होता जो गालियों की जग में लब्बोल हो जाती । निक्की पहने जितनी खामोश थी अब उसकी उननी ही तेज छुवान चलनी थी । भिनटा-भिनटी में अपने प्रतिद्वन्दी की सातों पीढ़ियाँ घुनकर रख देनी—ऐसी-ऐसी गालियाँ और सठनियाँ देती कि शत्रु के छत्रके छूट जाते ।

धीरे-धीरे सारे मुहल्ले पर निक्की की घाक बैठ गई । यहाँ कारोबार वाले मर्द रहते थे जो सुबह-सवेरे उठकर काम पर निकल जाते और रात को देर से घर लौटते । सारे दिन में औरतों में सड़ाई-भगडा होता । उससे वे मर्द बिल्कुल घलग-घलग रहते थे । उनमें से चायद किसी को पता भी नहीं था कि निक्की कौन है और मुहल्ले की सारी औरतें उससे क्यों दवती हैं ?

जल्दी कातकर बच्चों के लिए गुड्डे-गुडियाँ बनाकर और इसी तरह के छोटे-मोटे काम करके वह अपने निर्वाह के लिए कुछ-न-कुछ पैसा कर लेती थी । तलाक लिये लगभग एक वर्ष हो चला था । उसकी बेटी भोली अब ग्यारह के लगभग थी और बड़ी द्रुत गति से युवावस्था को पहुँच रही थी । निक्की को उसकी शादी-ज्वाह की बड़ी चिन्ता थी । उसके अपने जेवर थे जो एक-एक करके गाम में बट कर लिये थे—एक केवल नाक की कील खोप रह गई थी; वह भी धिम-धिसाकर ग्राधी रह गई थी । उसे भोली का पूरा दहेज धनाना था और उसके लिए काफी रुपया दरकार था । भिस्ता उसने अपनी और से ठीक की थी—कुरान खरम करा दिया था । उसे मामूली भक्तर-ज्ञान था । खाना पकाना खूब आता था । घर के दूसरे काम-काज भी भली प्रकार जानती थी । चूँकि निक्की को अपने जीवन में बड़ा बटु अनुभव हुआ इसलिए उसने भोली को पनि की आशा-पालन का कभी संकेत में भी उपदेश न दिया था । वह चाहती थी कि उसकी बेटी समुदास में छपरछट पर बैठो राज करे ।

माँ के साथ जो कुछ बीता था उस विपदा का सारा हाल भोली को मालूम था । परन्तु पड़ोसियों के साथ जब निक्की की सड़ाई होनी थी तो वे पानी पी-पीकर उसे कोसती थी कि और यह खाना देनी थी कि उसे तलाक दी गई है । जिसे पति ने केवल इस कारण से चलन किया था कि उस बेचारे का

नाक से दम कर रहा था और बहुत-सी बातें अपनी माँ के चरित्र तथा स्वभाव के बारे में वह सुनती थी परन्तु वह मूक रहती थी। बड़े-बड़े मार्कों की लड़ाइयाँ होनीं किन्तु वह कान मसंटे अपने कान में नहीं रहती।

जब नारे मुहल्ले पर निायी थी धार बैठ गई तो कई स्त्रियों ने उसके रोब में जाकर उसके पास आना जाना शुरू कर दिया, कई उसकी सहेलियाँ बन गईं। जब उनकी अपनी किसी पटोमिन से लड़ाई होती तो निवकी साथ देती और उसकी यथा मंभव महायना करती। उसके बदले में उसे कमीत्र के लिए कपड़ा मिल जाया करता था। कभी कल कभी मिठाई और कभी-कभी कोई भोली के लिए गूठ भी मिलवा देता था। लेकिन जब निवकी ने देखा कि हर दूसरे-तीसरे दिन उसे मुहल्ले की किमी-न-किसी औरत की लड़ाई में भाग लेना पड़ता है और उसके काम-काज में बाधा होनी है तो उसने पहले दबी जुबान में, फिर खुले घट्यों में अपना पारिश्रमिक मांगना आरंभ कर दिया और धीरे-धीरे अपनी फ्रीस भी निश्चित कर ली। मार्कों की जंग हो तो पच्चीस रुपये; दिन अधिक लगे तो चालीस। मामूली लटपट के केवल चार रुपये और दो जून खाना। मध्यम श्रेणी की लड़ाई हो तो पन्द्रह रुपये और किसी की सिफारिश हो तो वह कुछ रिशायन भी कर देती थी।

अब चूँकि उसने दूसरों की ओर से लड़ना अपना पेशा बना लिया था। इसलिए उसे मुहल्ले की तमाम स्त्रियों और उनकी बहू-बेटियों के समस्त निरुपेय याद रखने पड़ते थे। उनकी सारी वंशावली ज्ञात करके अपनी स्मृति में सुरक्षित रखनी पड़ती थी। उदाहरण के लिए उसे मालूम था कि ऊँची हवेली वाली सीदागर की पत्नी जो अपनी नाक पर मक्खी नहीं बैठने देती एक मोची की बेटी है, उसका बाप शहर में लोगों के जूते गाँठता फिरता है, और उसका पति जो जनाव शेख साहब कहलाता है, मामूली कसाई था, उसके बाप पर एक रण्डी मेहरवान हाँ गई थी, वह उसी के गर्भ से था, और यह ऊँची हवेली उस वेश्या ने अपने पार को बनाकर दी थी।

किस लड़की का किसके साथ इश्क है; कौन किसके साथ भाग गई थी; कौन कितने गर्भपात करा चुकी है, इसका हिसाब सब निवकी को मालूम

था। तमाम मूषना प्राप्त करने में वह काफी मेहनत करती थी और कुछ क़सता उसे अपने मुक़द़्दरों से मिल जाता था। उसे अपनी मूषना के साथ मिलाकर वह ऐसे-ऐसे बम बनाती कि स्पर्धा के छत्रके छूट जाते थे। होशियार बख़्शों की भाँति वह सबसे भारी घाघात उसी समय लगाती थी, जब सोहा पूरी तरह लाल हो जाता। घतएव उनका यह घाघात सोलह घाने निर्णयारमक सिद्ध होता था।

जब वह अपने मूकचिह्न के साथ किसी मोर्चे पर जाती थी तो घर से पूर्णतया कील-काँटों में भँस होकर जाती थी। ताने, महनों, गालियाँ और सटनियों को प्रभावनाली बनाने लिए विभिन्न वस्तुओं का प्रयोग करती थी। बडाहरणार्थ धिमा हुआ जूता, पट्टी हुई कमीज, बिमटा, फुकेनी आदि-आदि। कोई उमा-विशेष देनी हो या कोई विशेषतम संकेत की आवश्यकता हो तो इस उद्देश्य के लिए जरूरी चीज़ें घर ही से लेकर चलती थी।

कभी-कभी ऐसा भी होता कि आज वह जनते के लिए ख़ैराँ से लड़ी है तो दो-बाई महंगे के पश्चात् उसी ख़ैराँ से डबल कील लेकर उसे जरते में लड़ना पड़ता था। ऐसे मोर्कों पर वह घबराती नहीं थी। उसे अपनी कला में इनका दावा प्राप्त हो गई थी और उस कला की प्रैक्टिस में वह इनकी ईमानदारी की कि यदि कोई फ़ीस देना तो वह अपनी भी धजियाँ बिखर देती।

निक्की सब निश्चिन्त थी। हर महीने उसे अब इतनी आमदनी होने लगी थी कि उसने चबाकर अपनी बेटी मोली का बदेज़ बनाना शुरू कर दिया था। थोड़े ही घण्टों में इतने गहने पाते और कपड़े-लत्ते हो गये थे कि वह किसी भी समय अपनी बेटी को डोली में डाल सकती थी।

अपनी मिलाने वानियों से वह ओली के लिए कोई अच्छा-भावर तलाश करने की बात कई बार कह चुकी थी। शुरू-शुरू में तो उसे कोई इतनी जल्दी नहीं थी लेकिन जब ओली मोलह वर्ष की हो गई—लोटा-की-लोटा, बद-गाठ की पूर्णक अच्छी थी, इसलिये चौदहवें वरम ही में पूरी जवान औरत बन

गई थी। मग़हबे में तो ऐसा लगता था कि वह उसकी छोटी बहन है। मग़एव, अब निक्की को दिन-रात उसके शिवाह की चिन्ता मताने लगी।

निक्की ने बड़ी दीढ़-भूप की। कोई गाफ़ नो इन्कार नहीं करता था। मगर दिन से शामी भी नहीं भरता था। उसने महसूस किया कि हो-न-हो लोग उसमें डरते हैं। उसकी यह विशेषता कि नष्टने की कला में वह अपना मानो नहीं रखाती थी दरघमन उसकी बाधक बन रही थी। कुछ घरों में तो वह गुद ही कुछ न बोलती क्योंकि उसकी किसी औरत की उसने कभी बोलती बन्द कर दी थी; दिन-पर-दिन चढ़ते जा रहे थे और घर में पहाड़-सी जवान घेटी कुंवारी घेटी थी।

निक्की को अपने पेश से अब घृणा होने लगी थी। उसने सोचा कि ऐसा नीच काम क्यों उसने अपनाया, परन्तु वह क्या करती? मुहल्ले में आराम चैन की जगह पैदा करने के लिए उसे पड़ोसियों का सामना करना ही था। अगर वह न करती तो उसे दबकर रहना पड़ता। पहले पति के जूते खाती थी; फिर इनकी जूतियाँ गाती। यह विचित्र बात थी कि वर्षों दबेल रहने के बाद जब उसने अपना भुका हुआ सिर उठाया और विरोधी शक्तियों का सामना करके उन्हें परास्त किया, ये शक्तियाँ भुककर उसकी सहायता की भिखारिणी बनीं कि वे दूसरी शक्तियों को परास्त करे और उसे इस सहायता की और कुछ इस प्रकार प्रवृत्त किया गया कि उसे चसका ही पड़ गया।

इसके बारे में वह सोचती तो उसका दिल न मानता था, उसने सिर्फ भोली के कारण इस पेशे को जिसे अब कुकर्म समझने लगी थी, अपनाया था। यह भी कुछ कम अजीब बात नहीं थी। निक्की को रुपये देकर किसी औरत पर उंगली रख दी जाती थी और उससे कहा जाता था कि वह उसकी सातों पीढ़ियाँ पुन डाले। उसके पूर्वजों की सारी कमजोरियाँ, अतीत के मलबे से कुरेद-कुरेद कर निकाले और उसके अस्तित्व पर ढेर कर दे। निक्की यह काम बड़ी ईमानदारी से करती। वे गालियाँ जो उसके मुँह में ठोक नहीं बैठती थीं, अपने मुँह से बिठाती। उनकी बहू-बेटियों के दोषों पर

पढ़ें डालकर वह दूसरों की बहू-बेटियों में कीड़े डालती। गन्दी-से-गन्दी गालियाँ घपने उन मुखविकसों के कारण खुद भी खाती। पर जब जब कि उनकी बेटी के विवाह का प्रश्न उठ खड़ा हुआ था, वह कमीनी, नीच और भयम बन गई थी।

एक-दो बार तो उसके जो मे भाई कि भुहल्ले की उन सपास भीरतों को, जिन्होंने उसकी बेटी को रिश्ता देने से इन्कार कर दिया था, बीच चीराहे में एकज करे और ऐसी गालियाँ दे कि उनके दिल के कानों के पदें फट जायें। मगर वह सोचती कि मगर उसने ऐसी गलती कर दी तो बेचारी भोली का भविष्य बिल्कुल संघकारमय हो जायगा।

जब वह चारों ओर से निराश हो गई तो निक्की ने सहर छोड़ने का विचार कर लिया। अब उसके लिए निर्णय यहाँ रास्ता था जिससे भोली के विवाह की कठिन समस्या हल हो सकनी थी। अतः उसने एक दिन भोली से कहा, 'बेटी, मैंने सोचा है कि अब किसी और सहर में जा रहूँ।'

भोली ने चौककर पूछा, 'क्यों माँ ?'

'बस अब यहाँ रहने को जगह नहीं चाहता। निक्की ने उसकी ओर समता-भरी दृष्टि से देखा और कहा, 'तेरे व्याह की फिक्र में भुनी जा रही हूँ। यहाँ येन मण्डे नही खड़ेगी। तेरी माँ को सब नीच समझते हैं।'

भोली काफ़ी समझी थी, फौरन निक्की का मतलब समझ गई। उसने केवल इतना कहा, 'हाँ माँ !'

निक्की की इन दो बातों से बहुत दुःख पहुँचा। बड़े दुःखी स्वर में उसने भोली से प्रश्न किया, 'क्या तू भी मुझे नीच समझती है ?'

भोली ने उत्तर न दिया और घाटा घूँघने में व्यस्त हो गई।

उस दिन निक्की ने अजीब बातें सोचीं : उसके प्रश्न पूछने पर भोली कुछ क्यों हो गई थी ? क्या वह उसे वास्तव में नीच समझती है ? क्या वह इतना भी न कह सकती थी, 'नही माँ !' क्या यह बाप के खून का अक्षर था ? बात मे-से-बात निक्की जाती और वह बुरी तरह उसमें उलझ जाती। उसे बीते हुए वर्ष याद आते—व्याही जिन्दगी के दस वर्ष—जिसका एक-एक दिन

मार-गीट और गाली-गलौज से भरा था। फिर वह अपनी सज्जों के सामने तलाक-शुदा जिन्दगी के दिन लाती। उनमें भी गालियाँ-ही-गालियाँ थीं जो वह पैसें के लिए दूसरों को देनी रहती थी। घक-टारकर वह कभी कभी कोई सहारा ढूँढने लगती, और सोचती, 'बया ही अच्छा होता कि वह तलाक न लेती। आज बेटी का बोल गाम के कंधों पर होता। निखटू या, पल्ले दजों का जानिम मगर बेटी के लिए जरूर कुछ-न-कुछ करता। यह उसकी कम-हिम्मती की पराकाष्ठा थी।

पुरानी मारें और उनके दबे हुए दर्द अब आदिस्ता-प्राहिस्ता निक्की के जोड़ों में उभरने लगे। पहले उसने कभी उफ तक न की थी, पर अब उठते-बैठते हाय-हाय करने लगी। उसके कानों में हर वक्त एक शोर-सा बरपा होने लगा जैसे उनके पदों पर वे तमाम गालियाँ और सठनियाँ टकरा रही हैं जो अनगिनत लड़ाइयों में उगने इस्तमाल की थीं।

उम्र उसकी ज्यादा नहीं थी; चालीस के लगभग थी। मगर अब निक्की को ऐसा महसूस होता था कि बूढ़ी हो गई है; उसकी कमर जवाब दे चुकी है। उसकी जुवान जो कंधों की तरह चलती थी, अब बन्द हो गई है। भोली से घर के काम-काज के बारे में मामूली-सी बात करते हुए उसे परिश्रम करना पड़ता था।

निक्की बीमार पड़ गई और चारपाई के साथ लग गई। शुरू-शुरू में तो वह इस बीमारी का मुकाबिला करती रही। भोली को भी उसने खबर न होने दी कि अन्दर-ही-अन्दर कौन सी बीमक उसे चाट रही है। लेकिन एकदम वह ऐसी निडाल हुई कि उससे उठा तक न गया। भोली को बहुत चिन्ता हुई। उसने हकीम को बुलाया जिसने नब्ज देखकर बताया कि फिक्र की कोई बात नहीं पुराना बुखार है इलाज से दूर हो जाएगा।

इलाज बाकायदा होता रहा। भोली आज्ञाकारी पुत्री की नाईं मा की ययाशक्ति सेवा-सुध्रुपा करती रही जिससे निक्की के दुःखी दिल को काफी संतोष होता था किन्तु रोग दूर न हुआ। बुखार पहले से तेज हो गया और धीरे-धीरे निक्की की भूख गायब हो गई जिसके कारण वह बहुत ही दुबल और कमजोर हो गई।

स्त्रियों में एक ईश्वरदत्त गुण होता है कि रोगिणी की सूरत देखकर ही पहचान लेती है कि वह कितने दिनों की मेहमान है। एक-दो औरतें जब बीमार-पुर्सी के लिए निक्की के पास आईं तो उन्होंने अनुमान लगाया कि वह मुश्किल से दस रोज़ निक्कालेगी, चुनांचे बात सारे मुहल्ले की मालूम हो गईं।

कोई बीमार हो, मरणासन्न हो तो स्त्रियों के लिए एक अच्छे-सासे मनोरंजन की सामग्री मिल जाती है। घर से बन-सँवर कर निकलती हैं और मरीज के सिरहाने बैठकर अपने सारे स्वर्णोंय मृदुस्मियों को याद करती हैं। उनकी बीमारियों का जिक्र होता है। वह तमाम इलाज बयान किये जाते हैं जो ता इलाज साबित हुए थे। फिर बातचीत का दस्तक पलट कर कमीजों के नये डिजाइनों की तरफ़ आ जाता है।

निक्की ऐसी बातों से बहुत चबराती थी लेकिन वह खुद जूँकि मरीजों के सिरहाने ऐसी ही बातें करती रही थी इसलिए बिचरा हो उसे यह बकवास सुननी पड़ती थी। एक दिन जब मुहल्ले की बहुत-सी स्त्रियाँ उसके घर में एकत्र हो गईं तो इस अनुभव ने उसे बहुत व्याकुल किया कि भब उसका वक्त माझका है। उनमें से हरेक के चेहरे पर यह कसता सिखा हुआ था कि निक्की के दरवाजे पर मौत दस्तक दे रही है। जो स्त्री जाती अपने साथ यह खटखट लाती। तंग आकर कई बार निक्की के जी में आई कि कुण्डी खोल दे और खटपट करने वाले फरिश्ते की आन्दर बुला ले।

इन बीमार-पुर्से औरतों को सबसे बड़ा अफसोस मोली का था। निक्की से वे बार-बार इसका जिक्र करती कि हाय इस बेचारी का क्या होगा? दुनिया में बेचारी की सिर्फ़ एक माँ है, वह भी चली गई तो उसका क्या होगा। फिर वह भी भुल्लाह मियाँ से दुमा करती कि वह निक्की की जिन्दगी में कुछ दिनों की वृद्धि करदे ताकि वह मोली की घोर से सन्तुष्ट हो कर मरे।

निक्की की मध्दी तरह मालूम था कि यह दुमा बिल्कुल झूठी है। उन्हें मोली का इतना खयाल होता तो वे उसके रिश्ते से इन्कार क्यों करतीं? साफ़

इन्कार नहीं किया था; इसलिए कि यह दुनियादारी के नियमों के विरुद्ध था परन्तु किसी ने हामी नहीं भरी थी।

वह छोटा-सा कमरा जिसमें निम्नी चारपाई पर पड़ी थी बीमार-पुस्त श्रीरत्नों से भरा हुआ था। भोली ने उनके बैठने का प्रबन्ध ऐसा मालूम होता है पहले ही से कर गया था। गोड़ियाँ कम थीं, इसलिए उसने जजूर के पत्तों की चटार्ई बिछा दी थी। भोली के इस इन्तजाम से निम्नी को बड़ा सदमा पहुँचा था मानो वह अन्य स्त्रियों की भाँति उसकी मृत्यु के स्वागत के लिए तैयार थी।

बुन्दार तेज था, दिमाग तपा हुआ था। निक्की ने ऊपर-तले बढ़त-सी कपट-प्रद बातें सोचीं तो बुन्दार और तेज हो गया और उन पर बेहोशी छा गई। जल्दी-जल्दी देजोड़ बातें करने लगी। बीमार-पुस्त श्रीरत्नों ने शय्यपूर्ण दृष्टि से एक दूसरी की ओर देखा। वे जो उठकर जाने वाली थीं निक्की का अन्त-काल समीप देखकर बैठ गईं।

निक्की बके जा रही थी; ऐसा प्रतीत होता था मानो वह किसी से लड़ रही है। मैं तेरी हिस्त-पुस्त को अच्छी तरह जानती हूँ। जो कुछ तूने मेरे साथ किया है वह कोई दुश्मन के साथ भी नहीं करता। मैंने अपने पति की दस बरस गुलामी की। उसने मार-मार कर मेरी खाल उधेड़ दी पर मैंने उफ तक न की। अब तूने... अब तूने मुझ पर यह जुल्म शुरू किए हैं।' फिर वह कमरे में एकत्रित स्त्रियों को फटी-फटी नजरों से देखती, 'तुम यहां क्या करने आई हो? ... नहीं, नहीं, मैं किसी फीस पर लड़ने के लिए तैयार नहीं...' तुम में से हरेक के दोष वही हैं—पुराने—सदियों के पुराने। जो कीड़े फामाँ में हैं वही तुम सब में हैं। जो बुरी बीमारी फातो के घर वाले को लगी है वही जनते के घर वाले को चिमटी हुई है। तुम सब कोढ़ी हो, और यह कोढ़ तुमने मुझे भी दे दिया है। लानत हो तुम सब पर खुदा की—खुदा की—खुदा...' और वह हँसने लगी। 'मैं उस खुदा को भी जानती हूँ—उसकी हिस्त-पुस्त को अच्छी तरह जानती हूँ। यह क्या दुनियाँ बनाई है तूने? यह दुनिया जिसमें गाम हैं, जिसमें फामा है जो अपने पति को छोड़कर दूसरों के विस्तर

गरम करती है; और मुझे कीस देती है। बीस रुपये गिनकर मेरे हाथ पर रखती है कि मैं नूर किराँ की पुरानी चारानी का पोल खोलूँ और नूर किराँ मेरे पास आती है कि निक्की से पाँच ज्यादा सौ, ज़ाओ अमीना से लड़ो। वह मुझे सताती है। यह क्या चक्कर चलाया हुआ है तूने अपनी दुनियाँ में ?... मेरे सामने... अरा मेरे सामने था।'

आवाज निक्की के कण्ठ से रुकने लगी। चौबीस देर के बाद पु'पल बजने लगा। शरीर के तनाव से वह छटपटा रही थी। वह बेहोशी की हालत में चिल्ला रही थी, 'गाम, मुझे न मार ! ओ गाम... ओ खुदा, मुझे... न मार ! ओ खुदा... ओ गाम !'

ओ खुदा, ओ गाम बड़बड़ाती आवाज़ निक्की बीमार-पुसं औरतों के अनुमानानुसार भर गई। भोली, जो स्त्रियों की आतिथ्य-परायणता में व्यस्त थी, पानी का ग्लास हाथ से गिराकर बड़ाबड़ सिर पीटने लगी।

शादी

जमील को अपना 'डोफर लाइफ टाइम' कलम भरभरत के लिए देना था । उसने टेलिफोन डायरेक्टरी में डोफर कम्पनी का नम्बर तलाश लिया । फोन करने से मालूम हुआ कि उनके एजेंट मेगमंड डी० जे० सैमुएल हैं जिनका दफ्तर ग्रेन होटल के समीप स्थित है ।

जमील ने टैक्सी की ओर फोर्ट की ओर चला दिया । ग्रेन होटल पहुँच कर उसे मेसर्स डी० जे० सैमुएल का दफ्तर तलाश करने में दिक्कत न हुई, विस्तृत पाग था मगर तीसरी मंजिल पर ।

लिफ्ट के जरिए जमील वहाँ पहुँचा । कमरे में द्वाबिस होने लगे लकड़ी की सीढ़ार की छोटी-सी लिफ्टकी के पोंछे उन्हें एक सुदृष्ट एंग्लो-इण्डियन सड़की नजर आई जिसकी छतियाँ ससाधारण रूप से उमगी हुई थीं । जमील ने कलम लग लिफ्टकी के अक्षर द्वाबिस कर दिया और मुँह से कुछ न बोला । सड़की ने कलम उमगे हाथ में ले लिया । खींचकर एक मञ्जर देखा और एक बिट पर कुछ जित कर जमील के हवाले कर दी मुँह से वह भी कुछ न बोली ।

जमील ने बिट देखी; कलम की रसीद थी । चलने हो जाता था कि पण्ट कर उसने सड़की से पूछा, 'दम-बारह रोज तक तैयार हो जाएगा, मेरा मराल है ।'

सड़की बड़े ओर में हँसी । जमील कुछ निजियाना-सा हो गया, मैं आगही रह हूँगी का मतनय नहीं समझा ।'

सड़की ने लिफ्टकी के साथ मुँह लगा कर कहा, 'मिस्टर, धाबकन बार बार, यह वनम अमरीका जायगा । तुम भी महीने के बाद लपका करना ।'

जमील बोधवा गया, 'नो महीने ?'

वहकी ने अपने कटे हुए बायों याता गिर हिलाया; जमील ने सिफट का मग किया ।

यह नो महीने का गिनमिना सूच था ! नो महीने ? इतनी मुद्दत के बाद तो श्रीरत मलमूयना बख्ता पैदा करके एक तरफ रग देती है । नो महीने— नो महीने तक उस छोटी-सी निट को मँभाने रगो । और यह भी कीन निश्चित रूप से कह सकता है कि नो महीने तक आदमी माद रग सकता है कि उसने एक कलम मरम्मत के लिए दिया था । हो सकता है इस दौरान में वह कमबख्त मर-मप ही जाय ।

जमील ने सोचा, यह सब ढकोसला है । कलम में मामूली-सी खराबी थी कि उसका फ्रीडर जबरत से ज्यादा स्वाहो सप्लाई करता था; इसके लिए उसे अमरीका के अस्पताल में भेजना नरामर चानवाजी थी । मगर फिर उसने सोचा—लानत भेजो जी उस कलम पर अमरीका जाये या अफ्रीका । इसमें शक नहीं उसने यह ब्लेक मार्केट से एक सौ पचहत्तर रुपये में खरीदा था । मगर उसने एक साल उसे खूब इस्तेमाल भी तो किया था—हजारों पृष्ठ काले कर डाले थे । अतः वह निराशा से एक दम आशावान बन गया था और आशावान बनते ही उसे खयाल आया कि वह फ्रीट में है और फ्रीट में अनगिनत शराब की दुकानें हैं । अइस्की तो जाहिर है नहीं मिलेगी लेकिन फ्रांस की बेहतरीन क्विक ब्रांडी तो मिल जयगी । चुनांचे उसने करीब वाली शराब की दुकान का रुख किया ।

ब्रांडी की एक बोतल खरीद कर वह लौट रहा था कि ग्रीन होटल के पास आकर रुक गया । होटल के नीचे कच्चे-आदम शीशों का बना हुआ कालीनों का शोरूम था । यह जमील के दोस्त पीर साहब का था ।

उसने सोचा चलो अन्दर चलें । चुनांचे कुछ क्षणों के बाद ही वह शोरूम में था और अपने मित्र पीर साहब से, जो उम्र में उससे काफी बड़ा था, हँसी-मजाक की बातें कर रहा था ।

ब्रांडी की बोतल बारीक कागज में लिपटी दबीज ईरानी कालीन पर

मेटी हुई थी। पीर माहब ने उनकी ओर सकेत करते हुये जमीन से कहा, 'यार, इस दुल्हन का धूँधट तो खोलो; जरा इससे छेड़गानी तो करो।'

जमीन मतलब समझ गया, 'तो पीर माहब, ग्लास और मोडे मँगवाइए, फिर देखिए क्या रंग जमना है।'

फौरन ग्लास और ठण्डे सोडे आ गए। पहला दौर हुआ, दूसरा दौर शुरू होने ही वाला था कि पीर माहब के एक गुजरानी दोस्त अन्दर चले आए और बड़ी बेतकलुफी से बालीन पर बैठ गये। मसंगदल होटल का छोटा दो के बजाय तीन ग्लास उठा लाया था। पीर माहब के गुजरानी दोस्त ने बड़ी साफ़ उर्दू में कुछ इधर उधर की बातें की और ग्लास में यह बड़ा पैग डालकर उसे सोडे से सजातब भर लिया। तीन-चार मम्मे-सम्मे घूँट लेकर उन्होंने रुमाल से धरना मुँह साफ़ किया, 'मिगरेट निगालो यार।'

पीर साहब ने सानो ऐब सार्वं थे मगर बड़ मिगरेट नहीं पीने थे। जमीन ने जेब से धरना सिगरेट बैग निकाला और बालीन पर रख दिया और साज ही साइटर।

इस पर पीर माहब ने जमीन से उस गुजरानी दोस्त का परिचय कराया 'मिरटर गटवर वाल, आग मोनियाँ की दस्तानी करने हैं।'

जमीन ने क्षण भर के लिए मोबा—फोसलो की इगतासी में तो दुस्मान का मुँह फाला होता है, मोतियों की दस्तानी में ..

पीर साहब ने जमीन की ओर देखते हुए कहा, 'मिस्टर जमीन—मगादूर मोग-साइटर।'

दोनों ने हाथ मिलाया और चाँदी का नया दौर शुरू हुआ और फिर गुन गुन हुआ कि सोनल लाली हो गई।

जमीन ने दिम में सोचा, 'यह कमबख्त मोतियों का दस्ताना बना का पाने वाला है। मेरी प्यार और गुरूर की भारी चाँदी चढ़ा गया। मृदा करे इसे मोतियाबिन्द हो !'

तेजिन ज्योही आँखों की पेंस ने जमीन के चेहरे में धरने रचने

जमाये उसने नटवर लान को माफ कर दिया। और व्रत में उससे कहा, 'मिस्टर नटवर लान उठिए, एक बोतल और हो जाय।'।

नटवर पीनन उठा अपने सफ़ाई उगले की शिलवटें ठोक की, धोती की लांग ठोक की और कहा, 'चलिए !'

जमील पीर साहब से संबोधित हुआ, 'हम अभी हाजिर होते हैं।'।

जमील और नटवर ने बाहर निकल कर टेम्पली ली और शराब की दूकान पर पहुँचे। जमील ने टेम्पली रोका मगर नटवर ने कहा, 'मिस्टर जमील, यह दूकान ठोक नहीं। सारी चीजें महँगी बचता है।' यह कह कर वह टेम्पली नटवर से संबोधित हुआ, 'कोलावा चलो।'।

कोलावा पहुँच कर नटवर जमील को शराब की एक छोटी-सी दूकान में ले गया। जो ब्रांटी जमील ने फ़ॉर्ट से ली वह तो न मिल सकी; एक दूसरी मिल गई जिसकी नटवर में बहुत तारीफ़ की कि नम्बर वन चीज है।

यह नम्बर वन चीज सरीद कर दोनों बाहर निकले; पास ही में बार थी, नटवर रुक गया। 'मिस्टर जमील, क्या खयाल है आपका एक-दो पेग यहीं से पीकर चलते हैं।'।

जमील को कोई एतराज नहीं था इसलिए कि उसका नशा समाप्त होने वाला था; अतः दोनों बार के अन्दर दाखिल हुए। अचानक जमील को खयाल आया कि बार वाले तो कभी बाहर की शराब पीने की इजाजत नहीं दिया करते। 'मिस्टर नटवर आप यहाँ कैसे पी सकते हैं? ये लोग इजाजत नहीं देंगे।'।

नटवर ने जोर से आँख मारी, 'सब चलता है।'।

और यह कह कर वह एक केविन के अन्दर घुस गया, जमील भी उसके पीछे हो लिया। नटवर ने बोतल संगीन तिपाई पर रखी और बैरे को आवाज दी। जब वह आया तो उसे भी आँख मारी, देखो दो सोडे सॉजर्स ठण्डे और दो ग्लास एकदम साफ़।

बैरा यह हुक्म सुन कर चला गया और फ़ौरन सोडे और ग्लास हाजिर

कर दिये । इस पर नटवर ने उसे दूसरी छाजा दी । फ़स्ट क्लास बिस्स थोर
टोमाटो गॉग और फ़स्ट क्लास बटनेस ।'

बंरा चना गया । नटवर जमील की घोर देख कर ऐसे ही मुस्कराया ।
बोतल का कार्क निवाला और जमील के ग्लास में उससे गूँथे बिना एक डबल
डाल दिया—सुर उगसे कुछ ज्यादा । सोडा हल हो गया तो दोनों ने अपने
ग्लास ठकराये ।

जमील प्यास था, एक ही साँस में उसने आधा ग्लास खत्म कर दिया
मोटा झूँकि बटुत ठण्डा और तेज था इसलिए फूँ-फूँ करने लगा ।

दम-मन्द्रह मिनट के बाद बिप्प और बटलेस आगये । जमील सुबह घर
में नास्ता करके निकला था; लेकिन बाण्डी ने उसे भूख लगा दी । बिप्प गरम
गरम थे बटलेस भी । वह पिल पड़ा, नटवर ने उसका साथ दिया । अतएव
दो मिनट में दोनों प्लेटें साफ़ ।

दो प्लेटें और मँगवाई गई । जमील ने अपने लिए चाप्स भी मँगवाये ।
दो घण्टे इसी प्रकार व्यतीत हो गये । बोतल की तीन चौथाई गायब हो चुकी
थी, जमील ने मोचा कि अब पीर साहब के पास जाना बेरार है ।

नगे मुख जम रहे थे; सुरर सूत्र घुट रहे थे । नटवर और जमील दोनों
हवा के घोड़े पर सवार थे । ऐसे सवारों को आम तौर पर ऐसी यादियों में
जाने की बड़ी इच्छा होती है जहाँ इन्हें नग्न गरीर वाली सुन्दर युवतियाँ मिलें,
वे उन्हें हाथ बाँध कर घोड़े पर बिठाएँ और यह जा वह जा ।

जमील का दिल य दिमाग इस समय किसी ऐसी ही यादी के बारे में
मोच रहा था जहाँ उसकी किसी ऐसी नवमूरत औरत से मुठभेड़ हो जाये जिसे
वह अपने तपने हुए सीन के साथ भीच ले—इस जोर से कि उसकी हड्डियाँ
तरु चटख जायें ।

जमील की इतना तो मालूम था कि वह ऐसी जगह पर है—मनलव
है ऐसे इलाके में है जो अपने बविलम (वेस्यालय) के कारण सारे बम्बई में
प्रसिद्ध है । जिन्हें ऐसासो करना होती है वे इधर ही का रुख करते हैं । गहर
से भी जिस लड़की को लुकर्छिप कर पेशा करना होता है यही आती है ।

उस सूचना के आधार पर उमने नटवर से कहा, 'मैंने कहा...वह...वह... मेरा मतलब है अगर कोई छोकरी-बोकरा नहीं मिलती ?'

नटवर ने स्लाश में एक बड़ा पेग उँडेना शोर हुआ, मिस्टर जमील, एक नहीं हजारों हजारों हजारों ।'

वह हजारों की गणना जारी रखती अगर जमील ने उसकी बात काटी न होती । 'उन हजारों में मैं आज एक ही मिनट जाये तो हम नम्रों कि नटवर भाई ने कमाल कर दिया ।'

नटवर भाई मजे में थे; भूमकण कहा, 'जमील भाई, एक नहीं हजारों । चलो इसे ग़ातम करो ।'

दोनों ने बोटल में जो कुछ बचा था आधे घंटे के अन्दर-अन्दर खत्म कर दिया । बिल अदा करने और घरे को तगड़ी टिप देने के बाद दोनों बाहर निकले । अन्दर अन्दरेरा था बाहर धूप नमकानेही थी । जमील की आँखें चौंधिया गईं । एक क्षण के लिए कुछ नज़र न आया । धीरे-धीरे उसकी आँखें तेज़ रोशनी की आदी हुईं तो उसने नटवर से कहा, 'चलो भाई ।'

नटवर ने ऐयाशी लेने वाली नज़रों से जमील की ओर देखा । 'माल-पानी है ना ?'

जमील के होठों पर नशीली मुस्कराहट पैदा हुई । नटवर की पसलियों में कुहनी से टहोका देकर उसने कहा, 'बहुत ! नटवर भाई बहुत !' और उसने जेब से पाँच नोट सी-सी के निकाले, क्या इतने काफी नहीं ?'

नटवर की बाछें खिल गईं, 'काफी । बहुत ज्यादा हैं । चलो आओ पहले एक बोटल खरीद लें, वहाँ जरूरत पड़ेगी ।'

जमील ने सोचा कि बात बिल्कुल ठीक है वहाँ जरूरत नहीं पड़ेगी तो क्या किसी मस्जिद में पड़ेगी । अतः फौरन एक बोटल खरीद ली गई । टैक्सी खड़ी थी; दोनों उसमें बैठ गये और उस वादी में विचरण करने लगे ।

सेकड़ों बाथेलज थे—उनमें से बीस-पच्चीस को जाँचा-परखा गया मगर जमील को कोई औरत पसंद न आई । सब मेकअप की मोटी और शोख

तहों के चन्दर छिपी हुई थी। जमील चाहता था कि ऐसी लड़की मिले जो मरम्मत-शुदा मकान मालूम न हो। जिसे देखकर यह एहसास न हो कि जगह-जगह उखड़े हुए प्लास्टर के टुकड़ों पर बड़े धनाशीपन से गुर्छी और चूना लगाया गया है।

नटवर तंग आ गया; उसके सामने जो भी धीरत आती वह जमील का कथा पकड़ कर कहता, 'जमील भाई चलेगी ?'

मगर जमील भाई उठ खड़ा होता, 'हाँ चलेगी और हम भी चलेंगे।'

वो जगहें और देखी गई; मगर जमील को भावूरी का मुँह देसना पड़ा। वह सोचता था कि इन धीरतों के पास बौन आता है जो मूमर के गोश्त के मूखे हुए टुकड़ों की तरफ़ दिखाई देसती हैं। उनकी अदार्ने कितनी घृणित हैं, उठने-बैठने का ढंग कितना घबरील है और कहने का ये प्राइवेट है—यानी ऐसी औरतें जो चोरी-छिपे पेसा करती हैं। जमील को समझ में नहीं आता था कि यह पदाँ है कहाँ जिसके पीछे ये धन्धा करती हैं ?

जमील सोच हो रहा था कि अब प्रोपाम क्या होना चाहिए कि नटवर ने टैक्सी रुकवाई और उतर कर चमा गया क्योंकि एकदम उसे एक जरूरी काम याद आ गया था।

अब जमील धक्का था, टैक्सी तीस मील की पण्ट की रफ्तार से चम रही थी। उस समय साइं सात बज चुके थे। उसने ड्राइवर से पूछा, 'यहाँ कोई भड़वा मिलेगा ?'

ड्राइवर ने जबाब दिया, 'मिलेगा जनाब।'

'तो चलो उसके पास।'

ड्राइवर ने दो-तीन मोड़ घुमे और एग पहाड़ी बगलानुमा बिल्डिंग के पास गाड़ी रोक कर दी; दो-तीन बार हार्न बाजाया।

जमील का मिर नसे के बारण बोझिल हो रहा था धीवों के सामने घुंघ-माँ छाई हुई थी, उसे मानूम नहीं कैसे और किस तरह ? मगर अब उगने जरा दिमाग की मटवा तो उसने देखा कि वह एक पार्क पर बैठा है और उसने दाउ

ही एक जवान लड़की, जिगकी नाक की पुलंग पर एक छोटी सी फुन्सी थी, अपने काटे हुए बालों में कंघी कर रही थी।

जमील ने उसे गौर से देखा। सोचने ही वाला था कि वह यहाँ कैसे पहुँचा मगर उसके चेतन ने उसे गन्नाह दी कि, 'देखो वह सब बहुत है।' जमील ने सोचा, 'यह ठीक है लेकिन फिर भी उसने अपनी जेब में हाथ डाल कर अन्दर-ही-अन्दर नोट गिन कर थोड़ा पच्ची हई निपाई पर दाँडी की सालिम बोतल देर कर अपना उत्मीनान कर लिया कि सब कुछ ठीक है। उसका नशा कुछ नीचे उतर गया।

उठ कर वह उस कटे बालों वाली लड़की के पास गया, और तो कुछ समय में न आया; मुस्काकर उसने कहा, कहिए मिजाज कैसा है ?'

उस लड़की ने कंघी भेंज पर रखी और कहा, 'कहिए मापका कैसा है ?'

ठीक हूँ।' यह कह कर उसने उस लड़की की कमर में हाथ डाला, 'आपका नाम ?'

'बता तो चुकी एक बार। आपको मेरा ख्याल है यह भी याद न रहा होगा कि आप टैंक्सी में यहाँ आये हैं। जाने कहाँ-कहाँ घूमते रहे होंगे कि विल अड़तीस रुपये बना जो आपने अदा किया। और एक शस्त्र जिसका नाम शायद नटवर था, आपने उसे बेशुमार गालियाँ दीं।

जमील अपने अन्दर डूब कर सारे मामले की तह तक पहुँचने की कोशिश करने ही वाला था कि उसने सोचा था कि फिलहाल इसकी जरूरत नहीं। मैं भूल जाया करता हूँ; या यूँ समझिए कि मुझे बार-बार पूछने में मजा आता है। वह सिर्फ इतना याद कर सका कि उसने टैंक्सी वाले का विल जो कि अड़तीस रुपये बनाता था, अदा किया था।

लड़की पलंग पर बैठ गई। 'मेरा नाम तारा है।'।

जमील ने उसे लिटा दिया और उससे कृत्रिम प्यार करने लगा। थोड़ी देर के बाद उसे प्यास लगी तो उसने तारा से कहा, 'दो ठण्डे सोडे और ग्लास।'।

तारा ने ये दोनों चीजें फौरन हाजिर कर दीं। जमील ने दोतल खोली; अपने लिए एक पैग डाल कर उसने दूसरा तारा के लिए डाला। फिर दोनों पीने लगे।

तीन पैग पीने के बाद जमील ने महसूस किया कि उसकी हालत बेहतर हो गई है। तारा को चूमने चाटने के बाद उसने सोचा कि अब मामला हो जाना चाहिए। 'कपड़े उतार दो।'

'सारे?'

'हां, मारे।'

तारा ने कपड़े उतार दिये और सेट गई। जमील ने उसके नंगे शरीर को एक नजर देखा और यह राय कायम की कि अच्छा है। उसके साथ ही विचारों का एक तीना बँध गया। जमील का 'निकाह' हो चुका था; उसने अपनी परमा को दो तीन बार देखा था।

उसका बदन कैसा होगा? क्या वह तारा की तरह उसके एक बार कहने पर अपने सारे कपड़े उतार कर उसके साथ सेट जायगी? क्या वह उसके साथ ब्रांडी पियेगी? क्या उसके बाल कटे हुए हैं?

फिर फौरन उसका अन्त करण जागा जिसने उसे धिक्कारा। 'निकाह' का यह मतलब था कि उसकी शादी हो चुकी थी, केवल एक प्रवस्था शेष थी कि वह अपनी गुमराज जाये और तड़की का हाथ पकड़ कर ले जाये। क्या उसके लिए यह उचित था कि एक बाजारी औरत को अपनी आगोश की शोभा बनाये।

जमील यहूल लज्जित हुआ और उसकी सज्जा के कारण उसकी शायें भुँदना शुरू हो गईं और वह सो गया। तारा भी थोड़ी देर के बाद स्वप्निल ममार में विचरने लगी।

जमील ने कई स्पृष्ट, उल्ट-पटांग गपने दिये। कोई दो घण्टे के बाद जब वह एक बहुत ही भव्य सपना देख रहा था कि वह हड़बड़ा के उठ बैठा। जब अच्छी तरह भाँसों खुली तो उसने देखा कि वह एक अप्रसिद्ध कमरे में है और उसके साथ एक सर्वथा नग्न लड़की लेटी है। लेकिन थोड़ी देर के बाद

पटनाएँ धीरे-धीरे उसके मस्तिष्क की धुँध को चीर कर प्रकट होने लगीं ।

वह गुर्र भी निषट नगा था; योगनाइट में उसने उल्टा पाजामा पहन लिया । लेकिन उसे उसका एहसास न हुआ । कुर्ता पहन कर उसने अपनी जेबें टटोलीं; नोट सबके-सब मौजूद थे । उसने सोझा गोवा और एक पेग बना कर लिया । फिर उसने तारा को हॉल में भिजोड़ा, 'उठो ।'

तारा आंगें मलनी उठी । जमीन ने उसने कहा, 'कपड़े पहन लो ।'

तारा ने कपड़े पहन लिए—बाहर गहरी शाम रात बनने की तैयारियाँ कर रही थी । जमीन ने गोना, 'श्रद्धा कून करना ही चाहिए ।' लेकिन वह तारा से पूछना चाहता था, क्योंकि बहुत सी बातें उसके दिमाग से निकल गई थीं, 'क्यों तारा, जब हम लेटे—मेरा मतलब है जब मैंने तुमसे कपड़े उतारने के लिए कहा तो उसके बाद क्या हुआ ?'

तारा ने जवाब दिया, कुछ नहीं, आपने अपने कपड़े उतारे और मेरे बाजू पर हाथ फेरते-फेरते सो गये ।'

'बस ?'

'हाँ, लेकिन सोने से पहले आप दो-तीन बार बड़बड़ाये और कहा, मैं पापी हूँ, मैं पापी हूँ ।' यह कह कर तारा उठी और अपने बाल सँवारने लगी ।

जमीन भी उठा । पाप का विचार दवाने के लिए उसने डबल पेग अपने हलक में जल्दी-जल्दी उँडोला । बोटल को कागज में लपेटा और दरवाजे की ओर बढ़ा ।

तारा ने पूछा, 'चले ?'

'हाँ, फिर कभी अऊँगा ।' यह कह कर वह लोहे की पेचदार सीढ़ियों से नीचे उतर गया । बड़े बाजार की ओर उसके कदम उठने ही वाले थे कि हार्न बजा; उसने मुड़ कर देखा तो एक टैक्सी खड़ी थी । उसने कहा चलो अच्छा हुआ यहीं मिल गई; पैदल चलने की तकलीफ से बच गये ।

उसने ड्राइवर से पूछा, 'क्यों नहीं, खाती है ?'

ड्राइवर ने जवाब दिया, 'खाती है का क्या मतलब ? खगी हुई है ।'

'तो फिर?' यह कहकर जमील मुड़ा; लेकिन ड्राइवर ने उसे पुकारा । किधर जाना है सेठ ?'

जमील ने जवाब दिया, 'कोई और टैक्सी डेवता है ।'

ड्राइवर बाहर निकल आया, 'मस्तक गो नहीं फिरेला है ?' यह टैक्सी मुझे ही तो ले रखी है ।'

जमील बोझला गया, 'मैंने ?'

ड्राइवर ने बड़े संसार स्वर में उससे कहा, 'हाँ, तूने ? सासा दाऊ पीकर सब कुछ भूल गया ?'

इस पर तू-तू मैं-मैं शुरू हुई । इधर-उधर में लोग हँसते ही गये । जमील ने टैक्सी का दरवाजा खोला और बाहर बैठ गया, 'बसो ।'

ड्राइवर ने टैक्सी खसलाई, 'किधर ?'

जमील ने कहा, 'पुलिस स्टेशन ।'

ड्राइवर ने इस पर न जाने क्या बोली-तबोली बनी । जमील मोब में पड़ गया । जो टैक्सी उसने भी की, उसका बिल जो कि घड़तीम रुपये का था, उसने घटा कर दिया था । अब यह नई टैक्सी कहा से आन टपकी ? हार्मोनि वह नये की हालत में था, अगर वह निश्चित रूप में वह सकता था कि यह वह टैक्सी नहीं थी और न यह वह ड्राइवर है जो उसे यहाँ लया था ।

पुलिस स्टेशन पहुँचे; जमील के कदम बहुत चुगी तरह महसूस रहे थे । सब-इन्स्पेक्टर जो कि उस वक्त ज्यूटी पर था पीरन भाग गया कि मामला क्या है । उसने जमील को कुर्सी पर बैठने के लिए कहा ।

ड्राइवर ने अपनी दारतान शुरू करदी जो विस्तृत बतलाने की । जमील निश्चय ही उसका सत्य कहता, किन्तु उसमें अधिक बोलने की हिम्मत नहीं थी । सब-इन्स्पेक्टर से सम्बोधित होकर उसने कहा, 'जवाब मेरी मुमकिन में नहीं जाता यह क्या बिस्ता है । जो टैक्सी मैंने भी की, उसका बिलवा मैंने

अद्वितीय रूप से अदा कर दिया था। अब मालूम नहीं यह कौन है और मुझे कैसा कर दिया जायगा ?

ड्राइवर ने कहा, 'हज़ूर, इन्स्पेक्टर बहादुर, यह दाव पियेला है।' और सायन के तीर पर उमने जमीन की ग्रांथी की बोतल मेज पर रख दी।

जमीन भुंजना गया। 'पने भई, कौन मूषर कहता है कि मैंने नहीं पी। नवाल तो यह है कि आप वहां में तनरीफ ने अये ?'

सब-इन्स्पेक्टर जरीफ आदमी था। बिराया ड्राइवर के हिमाय से बयालीस रुपये बनता था। उसने पन्द्रह रुपये में कैसना कर दिया। ड्राइवर बहुत चीन्हा-चिल्लाया, मगर सब-इन्स्पेक्टर ने उसे डांट-डगटकर थाने से निकलाया दिया। फिर उसने एक सिपाही से कहा कि वह दूसरी टैक्सी बुलाये, टैक्सी आई तो उसने एक सिपाही जमीन के माग कर दिया कि वह उसे घर छोड़ आये। जमीन ने लड़गड़ाते स्वर में उसका बहुत-बहुत शुक्रिया अदा किया और पूछा, 'जनाब क्या यह ग्राण्ट रोड पुलिस स्टेशन है ?'

सब-इन्स्पेक्टर ने जोर का कहकहा लगाया और पेट पर हाथ रखते हुए कहा, 'मिस्टर, अब साबित हो गया कि तुमने खूब पी रखी है। यह कोलावा पुलिस स्टेशन है। जाओ अब घर जाकर सो जाओ।'

जमीन घर जाकर खाना माये और कपड़े उतारे बिना सो गया। ग्रांथी की बोतल भी उसके साथ सोनी रही।

दूसरे रोज वह दस बजे के करीब उठा। जोड़-जोड़ में दर्द था; सिर में जैसे बड़े-बड़े बजनी पत्थर थे; मुँह का स्वाद खराब। उसने उठकर दो-तीन ग्लास फ्रूट-साल्ट के पिये; चार पाँच प्याले चाय के। कहीं शाम को जाकर तबीयत ठीक हुई और उसने खुद को बीती हुई घटनाओं के बारे में सोचने के योग्य समझा।

बहुत लम्बी जमीन थी; इनमें से कुछ कड़ियाँ तो सायन थीं, मगर कुछ गायब। घटनाओं का सिलसिला शुरू से लेकर ग्रीन होटल और वहाँ से कोलावा तक बिल्कुल साफ था। उसके बाद जब नटवर के साथ खास बाड़ी की सैर शुरू हुई थी, मामला गड़मड़ हो जाता था। चंद झलकियाँ दिखाई

देती थीं—बड़ी स्पष्ट, किन्तु फौरन अस्पष्ट परछाइयों का क्रम शुरू हो जाता था।

वह कैसे उस लड़की के घर पहुँचा, उसका नाम जमील की स्मृति से फिसलकर न जाने किस सड़ू में जा गिरा था। उसकी शक्ति व मूरत उसे धनबत्ता बड़ी अच्यो तरह याद थी।

वह उसके घर कैसे पहुँचा था, वह जानना बहुत महत्वपूर्ण था। यदि जमील की स्मरण शक्ति उसकी सहायता करती तो बहुत-सी चीजें साफ हो जाती। परन्तु प्रयत्न करने पर भी वह किसी परिणाम तक न पहुँच सका।

और यह टैक्सिमी का क्या सिलसिला था। उसने पहली की तो छोड़ दिया था, मगर दूसरी कहीं से टपक पड़ी थी।

सोच-सोच कर जमील का दिमाग दुपड़े-दुपड़े हो गया। उसने महमूस किया कि जितने भारी पत्थर उसमें पड़े थे सब घापस में टकरा-टकराकर छूट हो गये हैं।

रात को उसने ब्राँडों के तीन पैग पिये, घोड़ा-सा हल्का खाना खाया और बीती हुई घटनाओं के बारे में सोचना-सोचना सो गया।

वह दुपड़े जो गुम हो गये थे उनकी तलाश करना अब जमील की व्यस्तता बन गया था। वह चाहता था कि जो कुछ उस दिन हुआ वह हू-बहू उसकी पीछों के सामने था जब और रोज-रोज की यह मगज-पच्ची दूर हो। इसके अलावा उसे इस बात का भी दुःख था कि उसका पाप अधूरा रह गया। वह सोचना था कि यह अधूरा पाप जादेगा किस साते में? वह चाहता था कि उस एक बार उसकी भी पूर्ति हो जाय।

मगर बहुत ताग श करने के बाद वह पगड़ी बँगलों जैसा महान जमील की पीछों से छोड़कर रहता, जब वह चक्कर हार गया तो उसने एक दिन सोचा कि यह सब स्वाब ही तो नहीं था?

मगर स्वाब कैसे हो सकता था? स्वाब में घादमी इतने रुपये खर्च नहीं करता। उस रोज कम-से-कम ढाई सौ रुपये खर्च हुए थे।

गौर साहब ने उसने नटवर के बारे में पूछा तो उन्होंने बताया कि वह उस रोज के बाद दूसरे दिन ही मगद पार कली चला गया है—सापद मोतियों के सिलसिले में जमील ने उस पर हजार साने भेजी और अपनी तलाश मुक्त कर दी।

उसने जब अपनी स्मरण शक्ति पर बहुत जोर दिया तो उसे बंगले की दीवार के साथ पीतल की एक प्लेट नजर आई उस पर कुछ लिखा था; सापद डाक्टर-डाक्टर वंराम जी... आगे न जाने क्या ?

एक दिन कोनावा की गलियों में चलते-चलते अन्त में वह एक ऐसी गली में पहुँचा जो उसे जानी-पहचानी मालूम हुई। दोनों ओर उसी किस्म की ब्रैगलानुमा इमारतें थीं। हर इमारत के बाहर छोटे छोटे पीतल के बोर्ड लगे हुए थे—किसी पर चार, किसी पर पाँच, किसी पर तीन।

वह इधर-उधर गौर से देखता चला जा रहा था, मगर उसके दिमाग में वह तब घूम रहा था जो मुबह उसकी रास के यहाँ से आया था कि 'अब इन्तेजार की हद हो गई है, मेने तारीख निश्चित कर दी है। आकर अपनी दुल्हन को ले जाओ।'।

और वह इधर एक अपूर्ण पाप को पूरा करने के प्रयत्न में मारा-मारा फिर रहा था। जमील ने कहा, 'हटाओ जी इस वक्त फिरने दो मारा-मारा। एक दम उसने अपने दाहिने हाथ पीतल का छोटा-सा बोर्ड देखा। उस पर लिखा था—डाक्टर एम. वंराम जी एम. डी.।

जमील काँपने लगा। यह वही बिल्डिंग, बिल्कुल वही, वही बल खाती हुई आहूती सीढ़ियाँ। जमील बेधड़क ऊपर चला गया, उसके लिए अब हर चीज जानी-पहचानी थी। कारीडोर से निकल कर उसने सामने वाले दरवाजे पर दस्तक दी।

एक लड़के ने दरवाजा खोला—उसी लड़के ने जो उस रोज सोडा और बर्फ लाया था। जमील ने हीठों पर कृत्रिम मुस्कान पैदा करते हुए उससे पूछा, 'बेटा, बाई जी हैं ?'

लड़के ने 'हाँ' में सिर हिलाया, 'जी हाँ।'।

‘जाओ, उनमें कहीं कोई साहब मिलने आये हैं ।’ जमीन के स्वर में बेतकलुफी थी ।

लडका दरवाजा भेड़कर घन्दर बना गया ।

थोड़ी देर बाद दरवाजा खुला और तारा आई । उसे देखते ही जमीन ने पहचान लिया कि वही लडकी है । मगर अब उसकी नाक पर फुंसी नहीं थी, ‘नमस्ते ।’

‘नमस्ते ! कहिए, मित्राज कैसे हैं ?’ यह कहकर उसने अपने कटे हुए बालों को एक हल्का-सा झटका दिया ।

जमीन ने उत्तर दिया, ‘अच्छे हैं ?’ मैं पिछले दिनों बहुत व्यस्त रहा, हमनिए धन न मचा । वही फिर क्या इरादा है ?’

तारा ने बड़ी गम्भीरता से कहा, ‘माफ़ कीजिए, मेरी शादी हो चुकी है ।’

जमीन बीछला गया, ‘शादी ? बब ?’

तारा ने उसी गम्भीरता से उत्तर दिया, ‘जी भ्राज ही मुबह । आइए मैं आपकी अपने पति से मिलाऊँ ।’

जमीन चकरा गया और कुछ कहे-सुने बिना लडखल नीचे उतर गया । सामने टैंसी खड़ी थी, जमीन का दिन राग भर के लिए निश्चल-सा हो गया था । तब कदम उठाना वह बड़े बाजार की तरफ निकल गया ।

अचानक जमीन को जाते देखकर झाड़वर ने खोर से कहा, ‘मेठ साहब, टैंसी ?’

जमीन ने झुंझलाकर कहा, ‘नहीं, कमबख्त शादी !’

महमूदा

मुस्तकीम ने महमूदा को पहली बार अपनी मादी पर देखा। भारती मुस-
हफ० की स्मृति धदा हो रही थी कि अचानक उसे दो बड़ी-बड़ी, भसा-
धारण रूप से बड़ी आँखें दिखाई दीं। वे महमूदा की आँखें थीं जो अभी तक
कुँवारी थी।

मुस्तकीम औरतों और लड़कियों के झुरमुट में घिरा था। महमूदा की
आँखें देखने के बाद उसे जरा अनुभव में हुआ कि भारती मुसहफ की रसम कब
धुरु हुई और कब खत्म हुई। उसकी दुल्हन कंती थी यह बताने के लिए उसे
मीका दिया गया मगर महमूदा की आँखें उसकी दुल्हन और उसके बीच एक
काले मलमली पर्दे की भाँति बाधक हो गई।

उसने खोरी-खोरी कई बार महमूदा की ओर देखा; उसकी हम उम्र लड़-
कियाँ सब चहचहा रही थी। मुस्तकीम से बड़े जोरों पर छेड़छानी हो रही थी,
मगर वह अलग-अलग सिडकी के पास धूटनों पर ठोड़ी जमाये खामोश बैठी
थी। उसका रंग गौरा था, बाल तख्तियों पर लिखने वाली स्याही की भाँति
काले तथा चमकीले थे। उसने सीधी माँग निकाल रखी थी जो उसके अण्ड-
कार चेहरे पर बहुत जँवती थी। मुस्तकीम का अनुमान था कि इसका पद
छोटा है; अतः जब वह उठी तो उसका प्रमाण भी मिल गया।

उसका निवास बहुत साधारण था। दुपट्टा जब उसके किर से टूटका और
फाँस तक जा पहुँचा तो मुस्तकीम ने देखा कि उसका सोना बहुत ठोस और

०. एक प्रथा जिसके अनुसार दुल्हन के घोंगूँडे में एक बड़े सीसे वाली
भेंगूठी पहनाते हैं जिसमें दुल्हा की दुल्हन की सूरत दिखाई जाती है।

मजबूत है। भरा-भरा जिसम, लीगी नाक, लोड़ी पेगानी, छोटा-सा मुँह आँखें—जो देखने को सबसे पहले दिखाई देती थीं।

मुस्तकीम अपनी दुश्मन को घर ले आया। दो-तीन मास बीत गये। वह लुरा थी जगनियो कि उसकी पत्नी मुन्दर तथा मुचड़ थी। लेकिन वह महमूदा की आँखों में भूल सका था। उसे यहाँ महमूम होता था कि वह उसके दिल में दिमाग पर छा गई है।

मुस्तकीम को महमूदा का नाम मालूम नहीं था। एक दिन उसने अपनी बीबी कुलसूम से यों ही पूछा, 'वह लड़की कौन थी हमारी शादी पर जब आरसी मुमहफ की रूम अदा हो रही थी। वह एक कोने में लिङ्की के साथ बैठी थी?'

कुलसूम ने जवाब दिया, 'मैं क्या कह सकती हूँ? उस वक्त कोई लड़कियाँ यहाँ मालूम नहीं आप किसके बारे में पूछ रहे हैं?'

मुस्तकीम ने कहा, 'वह... वह जिसकी ये बड़ी-बड़ी आँखें थीं।'

कुलसूम समझ गई, 'ओहो, आपका मतलब महमूदा से है! हाँ, वास्तव में उसकी आँखें बहुत बड़ी हैं लेकिन बुरी नहीं लगती। गरीब घराने की लड़की, बहुत कम धोलने वाली और शरीफ। कल ही उसकी शादी हुई है।'

मुस्तकीम को सहसा एक धक्का लगा, 'उसकी शादी हो गई कल?'

'हाँ, मैं कल वहीं तो गई थी। मैंने आपसे कहा नहीं था कि मैंने उसे एक अँगूठी दी है।'

'हाँ, हाँ मुझे याद आ गया। लेकिन मुझे यह मालूम नहीं था कि तुम जिस सहेली की शादी पर जा रही हो वही लड़की है, बड़ी-बड़ी आँखों वाली। कहाँ शादी हुई है उसकी?'

कुलसूम ने गिलोरी बनाकर अपने पति को देते हुए कहा, 'अपने अजीजों में। खोविन्द उसका रेलवे वर्कशॉप में काम करता है, डेढ़ सौ रुपये माहवार तनखाह है। सुना है बेहद शरीफ आदमी है।'

मुस्तकीम ने गिलोरी कल्ले के नीचे दवाई, 'चलो अच्छा हो गया। लड़की भी जैसा कि तुम कहती हो शरीफ है।'

कुलसूत्र से न रहा गया उसे आश्चर्य हो रहा था कि उसका पति महमूदा से इतनी दिलचस्पी क्यों से रहा है । 'ताज्जुब है कि आपने उसे सिर्फ एक नजर देखने पर भी याद रखा ।'

मुस्तकीम ने कहा, 'उसकी भाँखें कुछ ऐसी हैं कि आदमी उन्हें भूल नहीं सकता । क्या मैं भूट बोल रहा हूँ ।'

कुलसूत्र दूसरा पान बना रही थी । थोड़े-से अवसरों के बाद वह अपने पति से सम्बोधित हुई, 'मैं इसके बारे में कुछ नहीं कह सकती, मुझे तो उसकी आँखों में कोई आकर्षण दिखाई नहीं देता । मर्द न जाने किन निगाहों से देखते हैं ।'

मुस्तकीम ने यही उचित समझा कि इस विषय पर अब आगे बात-चीत नहीं होनी चाहिये । इन उत्तर में वह मुस्कराकर उठा और अपने कमरे में चला गया । इसबार की छुट्टी भी सदा की भाँति उसे अपनी पत्नी के नाम मँडिती दो देखने जाना चाहिए था मगर महमूदा का जिक्र छेड़कर उसने मस्तिष्क को बेभल बना लिया था ।

उसने आराम कुर्ती में लेटकर लिपाई पर से एक बिज्जब उठाई जिसे वह दो बार पढ़ चुका था । दगने पहला पन्ना निचाला और पढ़ने लगा परन्तु अक्षर गड़मड़ होकर महमूदा की भाँखें बन जाते । मुस्तकीम ने सोचा, शायद कुलसूत्र ठीक कहती थी कि उसे महमूदा की भाँखों में कोई आकर्षण नजर नहीं आता, हो सकता है किमी और मर्द को भी नजर न आवे । एक मित्र मैं हूँ जिसे दिखाई दिया है । पर क्यों ? मैंने ऐसा कोई इरादा नहीं किया था; मैंने ऐसी कोई इच्छा नहीं थी कि वे मेरे लिए आकर्षक बन जायें । एक रात को तो बान थी—वह मैंने एक नजर देखा और वे मेरे दिल व दिमाग पर छा गईं, शरीर न उन आँखों का शोर है, न मेरी आँखों का जिनमें मैंने उन्हें देखा ।'

इसके बाद मुस्तकीम ने महमूदा के बिवाह के बारे में गोबना आराम किया, 'होगई उरामी चारो, चलो अच्छा हुआ । लेकिन दोस्त यह बताना है कि तुम्हारे दिन में हल्की-सी टीप उठती है; क्या तुम चाहते हो कि हमारी

शादी न हो ? सदा कुँवारी रहे क्योंकि तुम्हारे दिन में उससे शादी करने की इच्छा तो कभी उत्पन्न नहीं हुई, तुमने उनके बारे में कभी एक क्षण के लिए भी नहीं सोचा फिर यह जलन कौसी ? इतनी देर तुम्हें उसे देखने का कभी विचार नहीं आया पर अब तुम क्यों उसे देखना चाहते हो । और यदि कभी उसे देखा भी तो तो क्या कर लोगे ? उसे उठाकर अपनी जेब में रखा लोगे ? उसकी बड़ी-बड़ी आंखों को नकार अपने बटुमें में छान लोगे ? वोवो ना क्या करोगे ?

मुस्तकीम के पास इसका कोई जवाब नहीं था । असल में उसे मालूम ही नहीं था कि वह क्या चाहता है । यदि कुछ चाहता भी है तो क्यों चाहता है ?

महमूदा की शादी हो चुकी थी और वह भी केवल एक दिन पहले यानी उन समय जबकि मुस्तकीम पुस्तक पढ़ रहा था महमूदा निश्चय ही दुल्हनों के लिवाक में या तो अपने भैंके या अपनी समुराल में शर्माई-लजाई बंठी थी । वह चुर शरीफ थी, उसका पति भी शरीफ था; रेलवे वर्कशॉप में नौकर था और उह सौ रुपये मासिक वेतन पाता था । बड़ी मुशी की बात थी । मुस्तकीम की हार्दिक इच्छा थी कि वह मुश रहे—आजीवन सुखी रहे । लेकिन उसके दिल में जाने क्यों एक टीम-सी उठती जो उसे व्याकन कर देती थी ।

मुस्तकीम अन्त में इस नतीजे पर पहुंचा कि यह सब वकवास है । उसे महमूदा के बारे में बिल्कुल कुछ नहीं सोचना चाहिये । दो वर्ष व्यतीत हो गये; इस दौरान में उसे महमूदा के बारे से कुछ मालूम न हुआ और न उसने कुछ मालूम करने का प्रयत्न किया यद्यपि वह और उसका पति बंबई में डोंगरी की एक गली में रहते थे । मुस्तकीम हालांकि डोंगरी से बहुत दूर माहिम में रहता था लेकिन अगर वह चाहता तो बड़ी आसानी से महमूदा को देख सकता था ।

एक दिन कुलसूम ही ने उससे कहा, 'आपकी उस बड़ी-बड़ी आंखों वाली महमूदा के नसीब बहुत बुरे निकले ।'

चींककर मुस्तकीम ने चिंतित स्वर में पूछा, 'क्यों क्या हुआ ?'

कुलसूम ने गिलोरी बनाते हुए कहा, 'उसका खाविन्द एकदम मौलवी हो गया है ।'

क्यों क्या हुआ ?

‘घाप मुन तो लीजिए । वह हर वक्त मजहब की बातें करता-रहता है लेकिन वही उटपटांग किस्म की । बजीफे करता है, चिल्ले काटता है और महमूदा को मजबूर करता है कि वह भी ऐसा ही करे । फकीरो के पाग घण्टों बँठा रहता है—घरबार से बिल्कुल ग्राफिम हो गया है । दाढ़ी बढ़ाई है, हाथ में हर वक्त तस्वीह होती है, काम पर कभी जाता है कभी नहीं जाना । कई-कई दिन गायब रहता है; वह बेचारी कुड़पी रहती है । घर में खाने को कुछ होता नहीं इसलिए फाके करती है और जब उससे शिकायत करती है तो आगे से जवाब यह मिलता है—‘फाकाकसी अल्ताह तवारक ताला को बहुत प्यारी है ।’ कुलसूम ने सब कुछ एक सांस में कहा ।

मुस्तकीम ने पनदनियों से थोड़ी-सी छानिवाँ उठाकर भुँहे में डाली, ‘कही दिमाग तो नहीं चल गया उसका ?’

कुलसूम ने कहा, ‘महमूदा का तो यही खयाल है । खयाल क्या उसे तो यकीन है । गले में बड़े-बड़े मनको वाली माला डाले फिरता है; कभी-कभी सफेद रंग का चोला भी पहनता है ।’

मुस्तकीम गिलोरी लेकर अपने कमरे में चला गया और आराम कुर्सी में बैठकर सोचने लगा, ‘महमूदा हो गया, ऐसा पति तो बड़ा दुखदाई होता है । गरीब किस मुसीबत में फँस गई । मेरा खयाल है कि पागलपन के काटाशु उसके पति के अन्दर धुरू ही से मौजूद होंगे जो अब एकदम उभर आये हैं । लेकिन सवाल यह है कि अब महमूदा क्या करेगी । उसका तो यहाँ कोई रिश्तेदार भी नहीं । कुछ शादी करने लाहौर से आये थे और वापस चले गये थे । क्या महमूदा ने अपने माँ-बाप को लिखा होगा ? नहीं, नहीं उसके माँ-बाप तो जैसा कि कुलसूम ने एक बार कहा था उसके बचपन ही में मर गये थे; शादी उसके बच्चा ने की थी । डोगरी, डोगरी में शायद उसको जान-महबूबान का कोई हो । लेकिन नहीं अगर जान-महबूबान का कोई होता तो वह फाके क्यों करती ? कुलसूम क्यों न उसे अपने यहाँ ले आये । पागल हूये हों मुस्तकीम, होन के नाखून लो ।’

मुस्तकीम ने एक बार फिर इरादा किया कि वह महमूदा के बारे में नहीं

सोचेगा, इसलिए कि उससे कोई लाभ नहीं होगा बेकार मगजपाशी थी ।

बहुत दिनों के बाद कुलसुम ने एक रोज उसे बताया कि महमूदा का पति जिसका नाम जलील था गरीब-गरीब पागल हो गया है ।

मुस्तकीम ने पूछा, 'क्या मतलब ?'

कुलसुम ने जवाब दिया, 'मतलब यह कि यह अब रात को एक सेकण्ड के लिये नहीं सोता । जहाँ राड़ा है वहाँ वहीं घण्टों-गामोश राड़ा रहता है । महमूदा गरीब रोती रहती है । मैं कल्प उसके पास गई थी । बेचारी को कई दिन का फागल था । मैं बीस रुपये दे आई क्योंकि मेरे पास इतने ही थे ।'

मुस्तकीम ने कहा, 'बहुत अच्छा किया तुमने । जब तक उसका पति ठीक नहीं होता कुछ-न-कुछ दे आया करो ताकि गरीब को फाकों की नीबत तो न आये ।'

कुलसुम ने कुछ सोच-विचार के बाद कुछ विचित्र स्वर में कहा, 'असल में बात कुछ और है ।'

'क्या मतलब ?'

'महमूदा का खयाल है कि जमील ने महज एक टोंग रचा रखा है । वह पागल-वागल हरगिज नहीं । बात यह है कि वह'...

'वह क्या ?'

'वह श्रीरत के काबिल नहीं । यह कमजोरी दूर करने के लिए वह फकीरों और सन्यासियों से टोने-टोटके लेता रहता है ।'

मुस्तकीम ने कहा, 'यह बात तो पागल होने से ज्यादा अफसोसनाक है । महमूदा के लिये तो यह समझो कि घरेलू जिन्दगी एक खिला (शून्य) बनकर रह गई है ।'

मुस्तकीम अपने कमरे में चला गया और महमूदा की दुर्दशा के बारे में सोचने लगा । ऐसी स्त्री का जीवन क्या होगा जिसका पति सर्वथा निष्क्रिय है । कितनी उमंगें होंगी उसके हृदय में; उसके जीवन ने कितने कँपकँपा देने वाले स्वप्न देखे होंगे । उसने अपनी सहेलियों से क्या कुछ नहीं सुना होगा ? कितनी निराशा हुई होगी बेचारी को जब उसे चारों ओर शून्य-ही-शून्य दिखाई

दिया होगा, ? उसने अपनी गोद हरी करने के बारे में भी कई बार सोचा होगा । जब डोंगरी में किसी के यहाँ बच्चा होने की सूचना उसे मिली होगी तो बेचारी के दिल पर एक घूँसा-भा लगा होगा । अब क्या करोगी ? ऐसा न हो कही आत्महत्या कर ले । दो वर्ष तक उसने किसी को यह राज न बयाया परन्तु उसका सीना फट पड़ा । खुदा उसके हाल पर रहम करे ।

बहुत दिन गुजर गये । मुसलमानी और कुलसूम छुट्टियों में पंचगनी घने गये । वहाँ ठाई महीने रहे । वापस आये तो एक मास के पश्चात् कुलसूम के यहाँ लड़का पैदा हुआ; वह महमूदा के घर न जा सकी । लेकिन एक दिन उसकी एक सहेली जो महमूदा की जानती थी उसे बचाई देने आयी । उसने बातों-बातों में कुलसूम से कहा, 'कुछ मुना तुमने ? वह महमूदा है ना बड़ी-बड़ी भाँसों वाली ?'

कुलसूम ने कहा, 'हाँ हाँ, डोंगरी में रहती है ।'

'साविन्द की बेपरवाही ने गरीब को बुरी बातों पर मजबूर कर दिया है ।' कुलसूम की सहेली की आवाज में दर्द था ।

कुलसूम ने बड़े दुःख भरे स्वर में पूछा, 'कौसी बुरी बातों पर ?'

'अब उसके यहाँ गैर मर्दों का आना-जाना हो गया है ।'

'भूठ !' कुलसूम का दिल धन-धक करने लगा ।

कुलसूम की सहेली ने कहा, 'नही कुलसूम, मैं भूठ नहीं कहती । मैं परानो उससे मिलने गई थी, दरवाजे पर दस्तक देने ही वाली थी कि मंज़र से एक नौजवान मर्द जो मेमन मालूम होता था बाहर निकला और तेज़ी से नीचे उतर गया । मैंने तब उससे मिलना मुनासिब न समझा और वापस चली आई ।'

'यह तुमने बहुत बुरी खबर सुनाई । खुदा उसे गुनाह के रास्ते से बचाये रहे । हो सकता है वह मेमन उसके साविन्द का कोई दोस्त हो; कुलसूम ने खुद को धोखा देते हुए कहा ।

उसकी सहेली मुस्कराई, 'दोस्त जोरो की तरह दरवाजा खोलकर आना नहीं करते ।'

कुलसूम ने अपने पति से बात की तो उसे बहुत दुःख हुआ । वह कभी नहीं रोया था लेकिन कुलसूम ने जब उसे यह दर्दनाक बात बताई कि महमूदा पाप-मार्ग पर जा रही है तो उसकी आँखों में आँसू आ गये । उसने उगी ससय निश्चय कर लिया कि महमूदा उनके गढ़ों रहोगी । अतः उसने अपनी पत्नी से कहा, 'यह बड़ी भयानक बात है । तुम ऐसा करो, अभी जाओ और महमूदा को यहाँ ले आओ ।'

कुलसूम ने बड़े हड़ोपन से कहा, 'मैं उसे अपने घर में नहीं रखा सकती ।'

'क्यों ?' मुस्तक्रीम के स्वर में विस्मय था ।

'बस मेरी मर्जी । वह मेरे घर में क्यों रहे ? इसलिए कि आपको उसकी आँखें पसंद हैं ?'-कुलसूम के बोलने का ढंग बहुत विपला और व्यंग्यपूर्ण था ।

मुस्तक्रीम को बहुत क्रोध आया, किन्तु वह उसे पी गया । कुलसूम से बहस करना व्यर्थ था । अब केवल यही हो सकता था कि वह कुलसूम को निकाल कर महमूदा को ले आये । पर वह ऐसा क्रदम उठाने के बारे में सोच ही नहीं सकता था । मुस्तक्रीम की नियत बिल्कुल नेक थी और उसे खुद इसका एहसास था । असल में उसने किसी गंदे दृष्टिकोण से महमूदा को देखा ही नहीं था । हाँ उसकी आँखें उसे जरूर पसन्द थीं, इतनी कि वह बयान नहीं कर सकता था ।

वह पाप के मार्ग पर अग्रसर हो चुकी थी । 'अभी उसने सिर्फ कुछ क्रदम उठाये थे; उसे विनाश के गड्ढे से बचाया जा सकता था । मुस्तक्रीम ने कभी नमाज नहीं पढ़ी थी, कभी रोजा नहीं रखा था, कभी खैरात नहीं दी थी । खुदा ने उसे कितना अच्छा मौका दिया था कि वह महमूदा को गुनाह के रास्ते पर से घसीट कर ले आये और तलाक़ वगैरहा दिलवाकर उसकी किसी और से शादी कर दे । मगर वह यह सवाव का काम नहीं कर सकता था, इसलिए कि वह अपनी बीबी का दबेल था ।

बहुत देर तक मुस्तक्रीम का अन्तःकरण उसे झिड़कता रहा । एक-दो बार उसने यत्न किया कि उसकी पत्नी सहमत हो जाय, पर जैसा कि मुस्तक्रीम को मालूम था ऐसे प्रयत्न निरर्थक थे ।

मुस्तकीम का विचार था कि और कुछ नहीं तो कुलसूम महमूदा से मिलने जरूर जायेगी। मगर उसे निराशा हुई। कुलसूम ने उस रोज के बाद महमूदा का नाम तक न लिया।

अब क्या हो सकता था, मुस्तकीम खामोश रहा।

लगभग दो वर्ष बीत गये। एक दिन घर में निकलकर मुस्तकीम ऐसे ही दिल बहलाने के लिए फुटपाथ पर चहल-कदमी कर रहा था कि उसने कसाइयों की बिहिंडिया की घाउण्ड फ्लोर की खोली के बाहर पड़े पर महमूदा की आँखों की झटक देखी। मुस्तकीम दो कदम आगे निकल गया था; फौरन मुड़कर उसने गौर से देखा—महमूदा ही थी। वही बड़ी-पड़ी आँखें थी, वह एक यहुदन के साथ जो उस खोली में रहती थी, बातें करने में व्यस्त थी।

इस यहुदन को सारा माहिम जानता था, घघेड़ उम्र की औरत थी। उसका काम ऐसात्र मर्दों के लिए जवान सड़कियाँ उपलब्ध करना था। उसकी अपनी दो जवान सड़कियाँ थी जिनसे वह पेशा कराती थी। मुस्तकीम ने जब महमूदा का चेहरा वैसे ही बेहूदा तरीके से मेकअप किये हुए देखा तो वह लरज उठा। अधिक देर तक वह दुःखद दृश्य देखने की गति उसमें न थी; वहाँ में फौरन चल दिया।

घर पहुँचकर उसने कुलसूम से इस घटना का जिक्र न किया, क्योंकि अब जरूरत ही नहीं रही थी। महमूदा अब पूर्णतया घरीर बेचने वाली औरत बन चुकी थी। मुस्तकीम के सामने जब भी उसका बेहूदा, कामोत्तेजक रूप से मेकअप किया हुआ चेहरा आता तो उसकी आँखों में आसू आ जाते। उसका अन्तःकरण उससे कहता, 'मुस्तकीम, जो कुछ तुमने देखा है, उसके कारण तुम हो। क्या हुआ था यदि तुम अपनी बीबी की कुछ दिनों की नाराजगी धरदास्त कर लेते। ज्यादा-से-ज्यादा इस अर्थ में वह मँके चली जाती। मगर महमूदा की जिन्दगी उस गदगी से तो बच जाती जिसमें वह इस समय धँसी हुई है। क्या तुम्हारी निपट नैक नहीं थी? अगर तुम सच्चाई पर से और सच्चाई पर रहते तो कुलसूम एक-एक दिन अपने आप ठीक हो जाती। तुमने बड़ा जुल्म

किया, बहुत बड़ा पान किया ।'

मुस्तकीम अब क्या कर सकता था ? कुछ भी नहीं । पानी सिर से गुजर चुका था । निद्रियां नाग भेल चुग गई होंगी । अब कुछ नहीं हो सकता था । मरने हुए रोगी को अन्तिम समय आसोजन मुँधाने वाली बात थी ।

थोड़े दिनों के बाद बम्बई का बानावरग साम्प्रदायिक दंगों के कारण बड़ा भयंकर हो गया था । बेटवार के कारण देन के चारों ओर विनाश और लूट का बाजार गर्म था । लोग पढ़ापढ़ हिन्दुस्तान छोड़कर पाकिस्तान जा रहे थे । कुलगुम ने मुस्तकीम को मजबूर किया कि वह भी बम्बई छोड़ दे । अतः जो पहला जहाज मिला, उसकी सीटें बुक कराके मियां-बीबी कराची पहुंच गये और छोटा-मोटा कारोबार शुरू कर दिया ।

छाई बरसा बाद इस कारोबार में उन्नति होने लगी । इसलिए मुस्तकीम ने नौकरी का विचार त्याग दिया । एक रोज शाम को दूकान से उठकर वह टहलता-टहलता सदर जा निकला । जो चाहा कि एक पान खाये; बीस-तीस कदम के फासले पर उसे एक दूकान नजर आई जिस पर काफी भीड़ थी । आगे बढ़कर वह दूकान के पास पहुंचा; क्या देखता है कि महमूदा बंठी पान लगा रही है; झुलसे हुए चेहरे पर उसी क्रिस्म का भद्दा मेकअप है, लोग उससे गंदे-गंदे मजाक कर रहे हैं और वह हँस रही है । मुस्तकीम के होश व हवास नायब हो गये । करीब था कि वहां से भाग जाये कि महमूदा ने उसे पुकारा, 'इधर' आओ दूल्हा मियाँ, तुम्हें एक फस्ट क्लास पान खिलायें । हम तुम्हारी आदी में शरीक थे ।'

मुस्तकीम विल्कुल पथरा गया ।

शांति

दो नो पैरोसियन डेअरो के बारह बड़े धारियो वाले छाते के नीचे कुर्तियों पर बँटे चाय पी रहे थे। उधर समुद्र था जिसकी लहरों की गुनगुनाहट सुनाई दे रही थी। चाय बहुत गर्म थी, इसलिए दोनों अहिस्ता-अहिस्ता झूट भर रहे थे। सामने मोटी भैंवों वाली यहूदन की जानी-पहचानी सूरत थी, यह बड़ा गोल-मटोल चेहरा, लोखी नाक, मोटे-मोटे बहुत ही ज्यादा सुर्खी लगे होंठ। शाम को हमेशा दरवाजे के साथ वाली कुर्सी पर बँठी दिखाई देती थी; मकबूल में एक नजर उस पर डाली और बलराज से कहा, 'बैठी है जाल फेंकने।'

बलराज मोटी भैंवों की ओर देखे बिना बोला, 'कौस जायगी कोई-न-कोई मछली।'

मकबूल ने एक पेस्टरी मुँह में डाली, 'यह कारोबार भी अभीय कारोबार है। कोई दूकान खोल कर बँठती है, कोई बल-फिर कर सौदा बेचती है और कोई इस तरह रेस्तोरानों में ग्राहक के इतजार में बँठी रहती है। सारी बेचना भी एक भाई है और मेरा खयाल है कि भुश्कल भाई है। यह मोटी भैंवों वाली कैसे ग्राहक का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती है? कैसे किसी मर्द को यह बताती होगी कि वह विवाह है?'

बलराज मुस्कराया, 'किसी दिन चूक निकालकर कुछ देर यहाँ बँठो। तुम्हें मालूम हो जायगा कि निगाहो-ही-निगाहो में क्योंकर सौदे होते हैं। इस जिन्म का भाव कैसे चुकता है?' यह कह कर उसने एकदम मकबूल का हाथ पकड़ा, 'उधर देखो उधर।'

मकबूल ने मोटी गहूँ की तरफ देगा, बलराज ने उसका हाथ दबाया, नहीं यार उधर कोने के छाते के नीचे दोगी ।'

मकबूल ने उधर देगा, एक दुबली-पतली, गोरी-चिट्ठी लड़की कुर्सी पर बैठ गयी थी—बाल कटे हुए थे, नाक-नकशा ठीक था, हल्के पीले रंग की जाजंट की साड़ी पहने हुए थी । मकबूल ने बलराज से पूछा, 'कोन है यह लड़की ?'

बलराज ने उस लड़की की ओर देगते हुए जवाब दिया, 'अमां वही है जिसके बारे में तुमसे कहा था कि बड़ी अजीबो-गरीब लड़की है ।'

मकबूल ने कुछ देर सोचा फिर कहा, 'कोन-सी यार ? तुम तो जिस लड़की से भी मिलते हो अजीबो-गरीब ही होती है ।'

बलराज मुस्कराया, 'यह बड़ी तानुल-नास है । जरा गौर से देखो ।'

मकबूल ने गौर से देखा । कटे हुए बालों का रंग भूसला था; हल्के बसंती रंग की साड़ी के नीचे छोटी आस्तीनों वाला ब्लाउज, पतली-पतली बहुत ही गोरी बांहें । लड़की ने अपनी गर्दन मोड़ी तो मकबूल ने देखा कि उसके बारीक होठों पर सुर्खी फैनी हुई-सी थी । 'मैं और कुछ तो नहीं कह सकता मगर तुम्हारी इस अजीबो-गरीब लड़की को सुर्खी इस्तेमाल करने का सलीका नहीं है । अब और गौर से देखा है तो साड़ी की पहनावट में भी खामियाँ नजर आई हैं; बाल सँवारने का श्रन्दाज भी सुधरा नहीं ।'

बलराज हँसा, 'तुम सिर्फ खामियाँ ही देखते हो, अच्छाइयों पर तुम्हारी निगाह कभी नहीं पड़ती ।'

'मकबूल ने कहा, जो अच्छाइयाँ हैं वह वयान फर्मा दीजिए । लेकिन पहले यह बता दीजिए कि आप उस लड़की को व्यक्तिगत रूप से जानते हैं या ...'

लड़की ने जब बलराज को देखा तो मुस्कराई । मकबूल रुक गया, मुझे जवाब मिल गया । अब आप देवी जी की खूबियाँ बता दीजिए ।'

'सबसे पहली खूबी इस लड़की में यह है कि बहुत स्पष्टवादी है । कभी झूठ नहीं बोलती । जो नियम उसने अपने लिए बना रखे हैं उनका बड़ा

नियमितता से, पालन-करती है पर्सनल हाइजिन का बहुत खयाल रखती है; मुख्यत-मुख्य की कायल नहीं—इस मामले में दिल उसका बर्फ ।'

बलराज ने चाय का घेतित घूँट पिया, 'कहिए क्या खयाल है ?'

मकबूल ने लड़की को एक नजर देखा, 'जो खुशियाँ तुमने बताई हैं एक ऐसी औरत में नहीं होनी चाहियें जिसके मर्द सिर्फ इस खयाल से घाते हैं कि वह उनसे वास्तविक नहीं तो कृत्रिम प्रेम अवश्य करेगी । खुदफरेबी में अगर यह लड़की किसी मर्द की मदद नहीं करती तो मैं समझता हूँ बड़ी बेवकूफ है ।'

मही मैंने सोचा था । मैं तुम्हें क्या बताऊँ वह दण्डेपन की हद तक स्पष्ट-वादी है । उससे घातें करो तो कई बार धक्के-मे मगते हैं । 'एक घटा हो गया तुमने कोई काम की बात नहीं की, मैं चली ।' और यह जा वह जा । तुम्हारे मुँह से शराब की बू घाती है, जाओ चले जाओ । साड़ी को हाथ मत लगाओ, मैली हो जायगी ।' यह कहकर बलराज ने सिगरेट सुलगाया । 'अजीबो-गरीब लड़की है; पहली दफा जब उससे मुलाकात हुई तो मैं बाई गॉड चकग गया । छुटते ही मुझसे कहा, 'फिफ्टी में एक पंखा कम नहीं होगा । जेब में हैं ताँ चलो बर्ना मुझे ज़ोर काम है ।'

मकबूल ने पूछा, नाम क्या है उसका ?'

'घाति बताया उमने, कश्मीरन है ।'

मकबूल भी कश्मीरी था, चौंक पड़ा, 'कश्मीरन !'

'तुम्हारी हमवतन !'

मकबूल ने लड़की की ओर देखा । नाक-नवशा साफ कश्मीरियों का था । 'महाँ कैसे आई ?'

'मानूम नहीं ।'

'कोई रिस्तेदार है उसका ?' मकबूल लड़की में दितचस्पी लेने लगा ।

'वहाँ कश्मीर में कोई हो तो मैं कह नहीं सकता, यहाँ बम्बई में धकेली रहती है ।' बलराज ने सिगरेट ऐस्ट्रे में दबाया, 'हानंबी रोड पर एक होटल है । वहाँ उसने एक कमरा किराये पर ले रखा है । यह मुझे एक दिन यों ही संयोग से मानूम हो गया, बर्ना वह अपने ठिकाने का पता किसी को नहीं देती ।

जिससे मिलना होता है, यहाँ पेंरीजिगन टैवरी में चला आता है। शाम को पूरे पाँच बजे आती है यहाँ।'

मकबूल कुछ देर गामोश रहा। फिर बंदे को ड्यारे से बुयाया और उसने बिल लाने के लिए कहा। इस दौरान में एक नृगपोज नौजवान आया और उस लड़की के पास बानी कुर्सी पर बैठ गया। दोनों बातें करने लगे। मकबूल बलराज से सम्बोधित हुआ, उससे कभी मुलाक़ात करना चाहिए।'

बलराज मुस्कगया, जम्द-जम्द, लेकिन हम यक नहीं, व्यस्त है। कभी आ जाना शाम को यहाँ और साथ बैठ जाना।'

मकबूल ने बिल चुकाया; दोनों दोस्त उठकर चले गये।

दूसरे दिन मकबूल अफ़ेना आया और चाय का आर्डर देकर बैठ गया। ठीक पाँच बजे वह लड़की बस से उतरी और पस हाथ में लटकाये मकबूल के पास से गुजरी। चाल भट्टी थी; जब वह कुछ दूर कुर्सी पर बैठ गई तो मकबूल ने सोचा—'इसमें कामोत्तेजना तो नाम को भी नहीं। आश्चर्य है इसका कारोबार किस प्रकार चलता है। लिपस्टिक कैसे बेहूदा ढंग से इस्तेमाल की है इसने? साड़ी की पहनावट आज भी लामियों से भरी है।'

फिर उसने सोचा कि उससे कैसे मिले। उसकी चाय मेज पर आ चुकी थी, बर्तन उठकर वह उस लड़की के पास जा बैठता। उसने चाय पीना शुरू कर दी। इस दौरान में उसने एक हल्का-सा इशारा किया। लड़की ने देखा; कुछ संकोच के पश्चात् उठी और मकबूल के सामने वाली कुर्सी पर बैठ गई। मकबूल पहले तो कुछ धवराया, लेकिन फौरन ही सँभलकर लड़की से सम्बोधित हुआ, 'चाय शौक फर्मियेंगी आप?'

'नहीं।'

उसके जवाबों के इस संक्षेप में रुकता थी। मकबूल ने कुछ देर खामोश रहने के बाद कहा, 'कश्मीरियों को तो चाय का बड़ा शौक होता है।'

लड़की ने बड़े रूखे ढंग से पूछा, 'तुम चलना चाहते हो मेरे साथ?'

मकबूल को जैसे किसी ने ओंघे मुँह गिरा दिया। धवराहट में वह केवल 'तना' कह सका, 'हाँ।'

सड़की ने कहा, फिट्टी स्वीज—यस घोर नो ?

यह दूसरा रेत। था, मगर मकबूल ने कदम जमा लिये । 'बतिये :'

मकबूल ने चाय का बिल अदा किया । दोनों उठकर टैंकरी स्टैंड की ओर चले । रास्ते में उसने कोई बात नहीं की, लड़की भी खामोश रही । टैंकरी 'मे बेंडे' तो उमने मकबूल से पूछा, 'कहाँ जायेगा तुम ?'

मकबूल ने जवाब दिया, 'जहाँ तुम ले जाओगी ?'

'हम कुछ नहीं जानता, तुम बोलो कब्र जायेगा ?'

मकबूल को कोई और जवाब न सूझा तो कहा, 'हम कुछ नहीं जानता ।'

लड़की ने टैंकरी का दरवाजा खोलने के लिए हाथ बढ़ाया, 'तुम कैसे आदमी है, ताली पीली जोर करता है ।'

मकबूल ने उमका हाथ पकड़ लिया, 'मैं मजाक नहीं करता । मुझे तुमसे सिके बातें करनी हैं ।'

वह बिगड़कर बोली, 'क्या ? तुम तो बोला था फिट्टी स्वीज यस ?'

मकबूल ने जेब में हाथ डाला और दस-दस के पाच नोट निकाल कर उमकी तरफ बढ़ा दिये । 'यह लीजिए, धररात्री क्यों हैं ?'

उमने नोट ले लिये, 'तुम जायेगा कहाँ ?'

मकबूल ने कहा, 'तुम्हारे घर ।'

'नहीं ।'

'क्यों नहीं ?'

'तुमको भोला है नहीं । उधर ऐसी बात नहीं होगी ।'

मकबूल मुस्कराया, 'ठीक है ऐसी बात उधर नहीं होगी ।'

यह कुछ चकित-भी हुई । 'तुम कैसे आदमी है ?'

'जैसा मैं हूँ, तुमने बोला फिट्टी स्वीज यस कि नो । मैंने कहा यस और नोट तुम्हारे हवाले कर दिये । तुमने बोला उधर ऐसी बात नहीं होगा; मैंने कहा बिल्कुल नहीं होगी । अब और क्या कहती हो ?'

लड़की सोचने लगी । मकबूल मुस्कराया, 'देखो धाति, बात यह है—कल तुम्हें देता; एक दोस्त ने तुम्हारी कुछ बातें सुनाई, मुझे पसंद आई । आज

मैंने तुम्हें पकड़ लिया। अब तुम्हारे घर चलते हैं, वहाँ तुम से कुछ देर बातें करूँगा और चला जाऊँगा। क्या तुम्हें यह मंजूर नहीं?’

‘नहीं, यह लो अपने फाटी रोज।’ लड़की के चेहरे पर कुंभलाहट थी।

‘तुम्हें कम फाटी रोज की पड़ी है। रुपये के अलावा भी दुनिया में और बहुत सी चीजें हैं। लो ड्राइवर को अपना एड्रेस बताओ। मैं शरीफ आदमी हूँ तुम्हारे साथ कोई धोखा नहीं करूँगा।’

मकबूल की बातों में वास्तविकता थी। लड़की उससे प्रभावित हुई। उसने कुछ संकोच के बाद कहा, ‘लो ड्राइवर हार्नबी रोड।’

टैक्सी चली तो उसने नोट मकबूल की जेब में डाल दिये। ‘ये मैं नहीं लूँगी।’

मकबूल ने ज़िद न की। ‘तुम्हारी मर्जी।’

टैक्सी एक पाँच मंजिला इमारत के सामने रुकी। पहली और दूसरी मंजिल पर मसासताने थे; तीसरी, चौथी और पाँचवीं मंजिल होटल के लिए सुरक्षित थी। बड़ी संकीर्ण तथा अधियारी जगह थी। चौथी मंजिल पर सीढ़ियों के सामने वाला कमरा शांति का था। उसने पर्स से चाबी निकाल कर दरवाजा खोला। बहुत कम सामान था—लोहे का एक पलंग जिस पर उजली-नी चादर बिछी थी। कोने में एक ड्रेसिंग टेबल, एक स्टूल जिस पर टेबल फैन; और चार ट्रंक थे जो पलंग के नीचे रखे थे।

मकबूल कमरे की सफाई से बहुत प्रभावित हुआ। हर चीज साफ-सुथरी थी। तकिये के गिलाफ आम तौर पर मँले होते हैं, मगर उसके दोनों तकियों पर बेदाग गिलाफ चढ़े हुए थे। मकबूल पलंग पर बैठने लगा तो शांति ने उसे रोका, ‘नहीं, इधर बैठने का इजाजत नहीं। हम किसी को अपने बिस्तर पर नहीं बै ने देता। कुर्सी पर बैठो।’ यह कहकर वह खुद पलंग पर बैठ गई। मकबूल मुस्कराकर कुर्सी पर टिक गया।

शांति ने अपना पर्स तकिये के नीचे रखा और मकबूल से पूछा :

‘बोलो क्या बातें करना चाहते हो?’

मकबूल ने शांति की तरफ गौर से देखा और कहा, 'पहली बात तो यह है कि तुम्हें होंठों पर लिपस्टिक लगाना बिल्कुल नहीं आती ।'

शांति ने बुरा न माना; सिर्फ इतना कहा, 'मुझे मान्य है ।'

'उठो मुझे लिपस्टिक दो । मैं तुम्हें सिखाता हूँ ।' यह कहकर मकबूल ने अपना रुमाल निकाला ।

शांति ने उससे कहा, 'ड्रेसिंग टेबल पर पड़ा है, उठा लो ।'

मकबूल ने लिपस्टिक उठाई; उसे खोलकर देखा, 'इयर प्रायो मैं तुम्हारे होठ पोंछूँ ।'

'तुम्हारे रुमाल से नहीं मेरा लो ।' यह कहकर उसने टुक खोला और एक धुला रुमाल मकबूल को दिया ।

मकबूल ने उसके होंठ पोंछे । यड़ी नफामत से नई सुर्ती उन पर लगाई । फिर कपड़े से उसके बाल ठीक किये और कहा, 'लो अब धाईने में देखो ।'

शांति उठकर ड्रेसिंग टेबल के सामने गड़ी हो गई । बड़े गौर से उसने अपने होंठों और बालों को देखा और पसन्दीश नजरों से वह तन्दीली महसूस की और पसन्दकर मकबूल से सिर्फ इतना कहा, 'घब ठीक है ?'

फिर पलंग पर बैठकर पूछा, 'तुम्हा कोई बीबी है ?'

मकबूल ने जवाब दिया, 'नहीं ।'

कुछ देर सामोशी रही । मकबूल चाहता था बातें हों, इसलिए उसने बात छेड़ी । 'इतना तो मुझे मान्य है कि तुम कश्मीर की रहने वाली हो । तुम्हारा नाम शांति है, यही रहती हो । यह बताओ कि किपुटी स्पीड का मामला क्यों शुरू किया ?'

शांति ने बेतकलुफी से जवाब दिया, 'मेरा फादर धीनगर में डाक्टर है । मैं वहीं हास्पिटल में नर्स थी । एक लड़के ने मुझे खराब कर दिया । मैं भागकर इधर को आ गई । यहाँ हफ्तो एक धांदली मिलता, वह हमको किपुटी स्पीड दिया । बोला, 'हमारे साथ चलो । हम गया, वस काम चालू हो गया ।

हम यहाँ होटल में था गया । पर हम इमर किसी में बात नहीं करता—सब रफ़ी लोग हैं, हम किसी को इमर आने नहीं देते ।’

मकबूल ने कुरैद कुरैद कर सारी घटनाएँ भानूम करना उचित न समझा । कुछ और बातें कीजिये उसे पता चला कि जाति को वासना से कोई रूचि नहीं थी । जब इनका बिक्र आया, तो उसने बुरा-ला मुँह बनाकर कहा, ‘आई डोण्ट लाइक । एट्रज वैट ।’

उसके नजदीक फिफ्ठी रफ़ाज का मामला एक कारोवारी मामला था । श्रीनगर के अस्पताल में जब किसी लड़के ने उसे साराव किया तो जाते समय उसे दस रुपये देना चाहे । जाति को बहुत गुस्सा आया । उसने नोट फाड़ दिया । इस घटना का उसके हृदय पर यह प्रभाव हुआ कि उसने नियमित रूप से यह कारोवार शुरू कर दिया । पचास रुपये फीस खुद-ब-खुद मुकर्रर हो गई । अब आनन्द का प्रदन ही नहीं उठता था, क्योंकि नर्स रह चुकी थी, इसलिए बहुत गावधान रहती थी ।

एक वर्ष हो गया था, उसे बम्बई आये हुए । इस दौरान में उसने दस हजार रुपये बचा लिये होते, मगर उसे रैस खेलने की लत पड़ गई । पिछली रैसों पर उसके पाँच हजार रुपये उड़ गये । लेकिन उसे विश्वास था कि वह नई रैसों में जरूर जीतेगी ।

‘हम अपना लॉस पूरा कर लेगा ।’

उसके पास कीड़ी-कीड़ी का हिसाब मौजूद था । सौ रुपये रोजाना लेती थी जो फीरन बैंक में जमा करा दिये जाते थे । सौ से ज्यादा वह नहीं कमाना चाहती थी । उसे अपने स्वास्थ्य का बड़ा खयाल था ।

दो घण्टे गुजर गये तो उसने अपनी घड़ी देखी और मकबूल से कहा, ‘अब तुम जाओ । हम खाना खायेगा और सो जायेगा ।’

मकबूल उठकर जाने लगा तो उसने कहा, ‘बातें करने आओ तो सुबह के टाइम आओ । शाम के टाइम हमारा नुकसान होता है ।’

मकबूल ने ‘अच्छा’ कहा और चल दिया ।

दूसरे दिन सुबह दस बजे के करीब मकबूल शांति के पास पहुँचा । उसका खयाल था कि वह उसका भावा पण्ड न करेगी; लेकिन उसने कोई नागवारो जाहिर न की । मकबूल देर तक उसके पास बैठा रहा । इस दौरान में शांति को सही ढंग से सारी पढ़नी तिसाई । लड़की बुद्धिमान थी जल्दी सीख गई ।

कपड़े उसके पास काफी तादाद में और अच्छे थे । ये सब-के सब उसने मकबूल को दिखाये । उसमें बचपन का न बुझापा, जवानी भी नहीं थी । वह जैसे कुछ मनते-बनते एक दम रुक गई थी । एक ऐसे स्थान पर ठहर गई थी जिसकी जलवायु और मौसम का निश्चय नहीं हो सकता । वह खूबसूरत थी न बदसूरत, धीरत थी न सड़की; फूल थी न कत्ती, छाया थी न तना । उसे देख कर कभी-कभी मकबूल को बहुत उत्तान होनी थी । वह उसमें वह विदु देखना चाहता था जहाँ उसने सब कुछ मिश्रित कर दिया था ।

शांति के सम्बन्ध में और अधिक जानने के लिए मकबूल ने उससे हर दूसरे सींगरे रोज मिलना शुरू कर दिया । वह उसकी कोई छाव-भगत नहीं करती थी । लेकिन जब उसने अपने माफ-गुपरे बिस्तर पर बैठने की आज्ञा दे दी थी । एक दिन मकबूल को बहुत आश्चर्य हुआ जब शांति ने उससे कहा 'तुम' 'कोई लड़की माँगता ?'

मकबूल लेंटा हुआ था, चौककर उठा, 'क्या कहा ?'

शांति ने कहा, 'हम पूछती तुम कोई लड़की माँगता तो हम नाकर देता ।'

मकबूल ने उससे तालूम लिया कि यह बैठे-बैठे क्या खयाल आया, क्यों उसने यह प्रश्न किया तो वह मीन हो गई । जब मकबूल ने आग्रह किया तो शांति ने बताया कि मकबूल उसे एक बेकार औरत समझना है । उसे ताज्जुब है कि मर्द उसके पास क्यों आते हैं जबकि वह इतनी टंडी है । मकबूल उससे सिर्फ बातें करता है और खस जाता है । यह उसे विलीना समझता है । आज उसने सीखा—मुझ जैसी सारी औरतें तो नहीं । मकबूल को औरत की जरूरत है क्यों न वह उसे एक मंगादे ।

मकबूल ने पहली बार शांति की आँखों में आँसू देते । एकदम वह उठी

श्रीर चिल्लाने लगी, 'हम कुछ भी नहीं है जाओ नने जाओ । हमारे पास क्यों माता है ? जाओ ।'

मकबूल ने कुछ नहीं कहा, सामोरी ने उठा श्रीर नला गया ।

नगातार एक हफ्ते तक यह पेंसिवन डेवरी जाता रहा मगर शांति दिखाई न दी । अंत में एक दिन मुब्त उसने उसके होटल का दल किया । शांति ने दरवाजा गोल दिया मगर कोई बात न की । मकबूल कुर्सी पर बैठ गया । शांति के होंठों पर सुर्गो पुराने भद्दे डंड से लगी थी; बालों का हाल भी पुराना था । साड़ी की पहनावट तो श्रीर भी ज्यादा भोंछी थी । मकबूल उससे संबोधित हुआ, 'मुझमें नाराज हो तुम ?'

शांति ने उत्तर न दिया श्रीर पलंग पर बैठ गई । मकबूल ने कठोर स्वर में पूछा, 'भूल गईं जो मैंने सिखाया था ?'

शांति चुप रही । मकबूल ने क्रोध में कहा, 'जवाब दो वरना याद रखो माहंगा ।'

शांति ने केवल इतना कहा, 'मारो ।'

मकबूल ने उठकर एक जोर का चांटा उसके मुँह पर जड़ दिया । शांति बिलबिला उठी । उसकी चकित आंखों से टप-टप आँसू गिरने लगे । मकबूल ने जब से अपना हमाल निकाला, गुस्से में उसके होंठों की भद्दी सुर्खी पोंछी उसने विरोध किया लेकिन मकबूल अपना काम करता रहा । लिफाफे उठा कर नई सुर्खी लगाई—कंधे से उसके बाल सँवारे । फिर उसे डाँटकर कहा, 'साड़ी ठीक करो अपनी ।'

शांति उठी श्रीर साड़ी ठीक करने लगी । एकदम उसने फूट-फूटकर रोना शुरू कर दिया । श्रीर रोते-रोते बिस्तर पर गिर पड़ी । मकबूल थोड़ी देर चुप रहा । जब शांति का रोना जब कुछ कम हुआ तो उसके पास जाकर उगाने कहा, 'शांति, उठो । मैं जा रहा हूँ ।'

शांति ने तड़पकर करवट बदली श्रीर चिल्लाई, 'नहीं-नहीं' । तुम नहीं जा सकते ।' श्रीर दोनों बाजू फैलाकर दरवाजे के बीच में खड़ी हो गई । 'तुम मे मार डालूँगी ।'

वह बाँप रही थी। उसका सीना जिसके बारे में मकबूल ने कभी गौर नहीं किया था जैसे गहरी नींद से उठने की कोशिश कर रहा था। मकबूल के चकित नेत्रों के सम्मुख शांति ने तले ऊपर बढ़ी तेजी से कई रंग बदले। उसकी भीगी आँखें चमक रही थी। सुर्खी जगने वालीक होंठ हल्के-हल्के कांप रहे थे। एकदम आगे बढ़कर मकबूल ने उसे अपने सीने से भींच लिया।

दोनों पलंग पर बैठे तो शांति ने अपना सिर झोढ़ाकर मकबूल की गोद में डाल दिया। उसके माँसू बन्ध होने ही में न आते थे; मकबूल ने उसे ध्वांर किया। रोना बन्द करने के लिए कहा तो वह माँसुओं में घटक कर बोली, 'इधर श्रीनगर में... एक आदमी ने... हमको मार दिया था... पर एक आदमी ने... हमको जिन्दा कर दिया।'।

दो घण्टे के बाद जब मकबूल जाने लगा तो उसने जैब से पचास रुपये निकाल कर शांति के पलंग पर रखे और मुस्कराकर कहा, 'सो अपने फिफटी रुपय।'।

शांति ने बड़े गुस्से और ग्लानि से नोट उठाये और धँक दिये।

फिर उसने तेजी से अपनी ड्रैपिंग टेबल का एक दराल खोला और कहा, 'इधर मामो, देखो यह क्या है?'।

मकबूल ने देखा सी-सी के कई नोटों के टुकड़े पड़े थे। मुद्दी भर कर शांति ने उठाये और हवा में उछाले, 'हम ये नहीं मांगता।'।

मकबूल मुस्कराया; होले से उसने शांति के गाल पर छोटी सी चपत लगाई और पूछा, 'अब तुम क्या मांगता है?'।

शांति ने जवाब दिया, 'तुम्हें।'। यह कहकर वह मकबूल के साथ बिगन गई और रोना शुरू कर दिया।

मकबूल ने उसके बाल सँवारते हुए बड़े प्रेम से कहा :

'रोओ नहीं, तुमने जो मांगा है वह तुम्हें मिला गया है।'।

राम खिलावन

खटमल धारने के बाद मैं ट्रंक में पुराने कागजात देख रहा था कि सईद भाईजान की तसवीर मिल गई। मेज पर एक सालो फ्रेम पड़ा था, मैंने उस चित्र को तभी में लगाया और कुर्सी पर बैठकर धीवी की प्रतीक्षा करने लगा।

हर इतवार को मुझे इसी तरह इस्तेजार करना पड़ता; क्योंकि शनिवार की घाम को मेरे कपड़े का स्टाक खरम होना जाता था— मुझे स्टाक तो नहीं कहना चाहिए इसलिए कि मुफनिसी के इस जमाने में मेरे पास सिर्फ इतने कपड़े थे जो मुश्किल से छ-सात दिन तक मेरी इज्जत बचाये रख सकते थे।

मेरी शादी की बातचीत हो रही थी और हम तिसतिले में पिछले दो तीन इतवारों से मैं माहिम जा रहा था। धीवी शरीफ बादमी था, यानी घुसाई न मिलने के बावजूद हर इतवार को ब्राह्मयदगी के साथ पूरे दस बजे मेरे कपड़े ले जाता था। लेकिन फिर भी मुझे लटका था कि ऐसा न हो कि मेरे वैसे न देने की मजबूरी से तग आकर किसी दिन मेरे कपड़े चोर-बाजार में बेच दे और मुझे अपनी शादी की बातचीत में जिन कपड़ों के हिस्सा लेना पड़े और जो जाहिर है कि बहुत ही बुरी बात होती।

खोली में मरे हुए खटमलों की बहुत ही चिनेली नू फेंकी हुई थी मैं सोच रहा था कि उसे किस तरह दवाऊँ कि धीवी आ गया। 'साब सलाम।' कहते उसने अपनी गठरी खोली और मेरे गिनती के कपड़े मेज पर रख दिये। ऐसा करते हुए उसको नजर सईद भाईजान की तसवीर पर पड़ी।

वालिदर बहुत बड़ा सादमी होता—उपर कीमाबा में रहता होता। जब मरना भी हमको एक पगड़ी, एक धोती और एक कुर्ता दिया जाता। तुमरा साथ भी एक दिन बड़ा सादमी बनता।'

मैं सारी पत्नी को गमवीर माना। दिसमा मुना चुका था कि गरीबी के जमाने में कितनी दरियाइसी में घोबी ने मेरा साथ दिया था। जब दे दिया, लो दे दिया उसने कभी बिसाया की ही न थी। लेकिन मेरी पत्नी को कुछ गमच बाद यह बिसाया पैदा हो गई कि यह हिमाय नहीं करना। मैंने उससे कहा, 'भार बरम मेरा काम करता रहा है, उसने कभी हिमाय नहीं किया।'

उत्तर मिला, 'हिमाय क्यों करता? पैसे दुगने-चौगुने वसूल कर लेता होगा।'

'मह कंम?'

'भार नहीं जानते। जिनके घरों में परिवर्तन नहीं होतीं उन्हें ऐसे लोग बेवकूफ बनाना जानते हैं।'

समयम हर मास घोबी से मेरी बीबी की सटाट होती थी कि वह कपड़ों का हिमाय चलन अपने पास क्यों नहीं रखता। वह बड़ी सादगी से सिर्फ इतना कहता, 'वेगम साथ, हम हिमाय जानन नहीं। तुम झूठ नहीं बोलेगा। सादर वालिदर जो तुम्हारे साथ का भाई होता, हम एक बरस उसका काम किया होता। वेगम साथ बोलता—'घोबी तुम्हारा इतना पैसा हुआ।' हम बोलता, 'ठीक है।'

एक महीने ढाई सौ कपड़े धुनाई में गये। मेरी बीबी ने उसकी परीक्षा के लिए उससे कहा, 'घोबी इस महीने साठ कपड़े हुए।'

उसने कहा, 'ठीक है वेगम साथ, तुम झूठ नहीं बोलेगा।'

मेरी पत्नी ने साठ कपड़ों के हिमाय से जब उसको दाम दिये तो उसने

पैसे छूकर सलाम किया और चलने लगा। मेरी पत्नी ने उसे

! साठ नहीं, ढाई सौ कपड़े थे। लो अपने दाकी रुपये; था।

घोड़ी के केवल इतना कहा, 'बेगम साब, तुम झूठ नहीं बोलोगी।' बाकी रुपये अपने मां के साथ सूकर समाय लिया और चला गया।

विवाह के दो वर्ष पश्चात् मैं दिल्ली चला गया। ऋतु वर्ष वही रहा। फिर वापस बम्बई आ गया और माहिम में रहने लगा। तीन महीने के अन्दर हमने चार घोड़ी बदले क्योंकि वे बहुत बेईमान और भगड़ानू थे। हर मुलाई पर भगड़ा दड़ा हो जाता था—कभी कपड़े कम निकलते थे, कभी मुलाई बहुत बुरी होती थी। हथे अपना पुराना घोड़ा याद आये लगा। एक रोज जब कि हम रिहलूम बिना घोड़ी के रह गये थे वह सवानक आ गया और कहने लगा, 'गाब को हमने एक दिन बस में देगा। हम खोजा ऐसा कैसा? साथ तो दिल्ली चला गया।' हमने ऊपर भईयस्ता में तपास किया। छापा वाला बोला, 'ऊपर माहिम में तपास करो।' बाबू वाली वाली में साब का दोस्त होता। उससे पूछा और आ गया।

हम बहुत गुप्त हुए और हमारे कपड़ों के दिन हँसी-मुसी गुजरने लगे।

कौन्सल सत्ताह्द हुई तो सराब-बन्दी का कानून लागू हो गया। अफ्रेंजी सराब मिलनी थी लेकिन देगी सराब की लिबाई और बिक्री बिल्कुल बन्द हो गई। निम्नान्वये प्रतिज्ञात घोड़ी शराब के धादी थे। दिन भर पानी में रहने के बाद पाक-साफपाक शराब उनके जीवन का अंश बन चुकी थी। हमारा घोड़ी बीमार हो गया। उस बीमारी का इलाज करने उस जहरीली शराब से किया जो अर्धशून्य से बनती तथा श्लिषे-चोरी बिकनी थी। पश्चिम मह निकला कि उसके पेट में बड़ी अतरनाक गड़बड़ पैदा हो गई जिसने उसे मौत के दरवाजे तक पहुँचा दिया।

मैं बहुत व्यस्त था। सुबह छः बजे परं से निकलता था और रात को दस-गाढ़े दम बजे लौटता था। मेरी बीबी को जब इस अतरनाक बीमारी का पता चला तो वह टैक्सी लेकर उसके घर गई। नौकर और शोकर को सहायता से उसे गाड़ी में बिठाया और डाक्टर के पास ले गई। डाक्टर बहुत प्रभावित हुआ और उसने फीम लेने से इन्कार कर दिया। लेकिन मेरी बीबी ने कहा, 'डाक्टर साहब, आप सारा सवाल नहीं ले सकते।'।

डाक्टर मुस्कराया, 'तो घाघा-घाघा कर मीजिए ।'

डाक्टर ने घाघी कीम म्प्रीकार कर मी ।

घोबी का नियमित रूप में इलाज हुआ । पेट की तकनीक कुछ इन्जेक्शनों से ही दूर हो गई । कमजोरी थी, पोष्टिक दवाइयों के प्रयोग से धीरे-धीरे गहम हो गई । कुछ महीनों के बाद वह बिल्कुल ठीक-ठाक था और उठते-बैठते होने लगा। देता था : भगवान साब को माइटर जनिम बानिगटर बनाये । उपर कीचारे में साब रहने को ज्ञायें । बाबा नोक हों । बहुत-बहुन पैसा हो । बेगम साब घोबी को लेने लाया—मोटर में ! उपर किले में (फोर्ट) बहुत बड़े डाक्टर के पास ले गया जिसके पास नेम होता... भगवान बेगम साब को पुन रते !

कई वर्ष व्यतीत हो गये । इस दौरान में कई राजनीतिक क्रांतियाँ आईं । घोबी निरन्तर हर जनिवार को आता रहा । उसका स्वास्थ्य अब बहुत अच्छा था । इतना समय बीतने पर भी वह हमारा एहसान नहीं भूल था । हमेशा दुयाएँ देता था । शराब बिल्कुल छूट चुकी थी । शुरू में वह कभी-कभी उसे याद किया करता था, पर अब नाम तक न लेता था । सारा दिन पानी में रहने के बाद थकान दूर करने के लिए अब उसे दारू की आवश्यकता नहीं होती थी ।

परिस्थितियाँ बहुत बिगड़ गईं । देश-विभाजन हुआ तो हिन्दू-मुस्लिम दंगे शुरू हो गये । हिन्दुओं के इलाके में मुसलमान और मुसलमानों के इलाकों में हिन्दू दिन के प्रकाश और रात्रि के अंधकार में मारे जाने लगे । मेरी पत्नी लाहौर चली गई ।

जब स्थिति और ज्यादा बिगड़ी तो मैंने घोबी से कहा, 'देखो घोबी अब तुम काम बन्द कर दो । यह मुसलमानों का मुहल्ला है । ऐसा न हो कोई तुम्हें मार डाले ।'

घोबी मुस्कराया, 'साब, अपन को कोई नहीं मारता ।'

हमारे मुहल्ले में भी दुर्घटनाएँ हुईं, परन्तु घोबी बराबर आता रहा ।

इतवार को मैं घर में बैठा अखबार पढ़ रहा था । खेलों के पृष्ठ पर

क्रिकेट के मैदानों का स्कोर दर्ज था और पहले पृष्ठ पर दगो के शिकार हिन्दुओं तथा मुसलमानों के धाँकड़े। मैं उन दोनों की भयानक सभानता पर गौर कर रहा था कि घोवी आ गया। कापी निकाल कर मैंने कपड़ों की पड़ताल शुरू की तो घोवी ने हँस-हँसकर बातें शुरू कर दीं। 'साइड शातिम बालिस्टर बहुत अच्छा घादमी होता। यहाँ से चला जाता तो हमको एक पगड़ी, एक घोली और एक कुर्ता दिया होता। तुम्हारा बेगम सब भी एक दम अच्छा घादमी होना। बाहर भ्रम गया है ना?...' अपने मुसुका मे? 'उपर कागज मिलो तो हमारा सलाम बोलो।...' मोटर लेकर आया हमारी गौरी में।...' हमको इतना जुलाब आया होना। डाक्टर ने सुई लगाया, हम एकदम ठीक हो गया। उपर कागज लिये तो हमारा सलाम बोलो। योनी रामखिलाशन बोलता है हमको भी कागज मिलो.....'

मैंने उसकी बात काट कर जरा तेजी से कहा, 'घोवी, दारु शुरू कर दी?'

घोवी हँसा, 'दारु? दारु कहाँ मिलती है साव?'

मैंने और कुछ कहना उचित न समझा। उसने मैंने कपड़ों की गठरी बनाई और सलाम करके चला गया।

कुछ दिनों में स्थिति और भी अधिक खराब हो गई। लाट्रीर से तार-पर-तार आने लगे कि सब कुछ छोड़ो और जल्दी चले आओ। मैंने मनिवार के दिन इरादा कर लिया कि इतवार को चल दूँगा। लेकिन मुझे सुबह सवेरे निकल जाना था। कपड़े घोवी के पास थे। मैंने सोचा कपड़ों से पहले-पहले उसके महा आकर ले आऊँ। घत. साम की बिक्टोरिया लेकर महालक्ष्मी खाना पहुँचा दिया गया।

कपड़ों के वक्त में अभी एक घण्टा शेष था। इसलिए यथायात आरंभ था। ट्राम चल रही थी। मेरी बिक्टोरिया पुल के पास पहुँची तो एकदम शोर हुआ। लोग घेमाघुंघ आगने लगे। ऐसा मानूम हुआ जैसे सीढ़ी की लड़ाई हो रही है। भीड़ छंटो तो देखा दूर भट्टियों के पास बहुत से घोवी काठियाँ हाथ में लिए नाच रहे हैं और तरह-तरह की भावाजें निकाल रहे हैं।

मुझे चपार ही जाना था । नेटिन बिजलीरिया जाने में झटार कर दिया । मैंने उमरी किराया देना किया और पैसों में पड़ा । जब गोबियों के पास पहुँचा तो वह मुझे देमकर सामाज हो गये ।

मैंने सामे बटकर एक घोड़ी से पूछा, 'रामगिलावन कहाँ रहता है ?'

एक घोड़ी जिसके साथ मैं लाठी थी, झूठवा हुआ उस घोड़ी के पास आया जिसने मैंने प्रश्न पूछा था, 'जवा पूछत है ?'

'पूछत है रामगिलावन कहाँ रहता है ?'

गराब से चुत घोड़ी ने करीब-करीब मेरे ऊपर नाकर पूछा, 'तुम कौन है ?'

'मैं ? रामगिलावन मेरा घोड़ी है ।'

'रामगिलावन तुम्हारा घोड़ी है, तू किस घोड़ी का बच्चा है ?'

एक चिल्लाया, 'हिन्दू घोड़ी का या मुसलमान घोड़ी का ।'

सारे घोड़ों जो गराब के नये में चूर थे, मुझे तानते और लाठियां घुमाते मेरे इर्द-गिर्द एकत्र हो गए । मुझे केवल उनके एक प्रश्न का उत्तर देना था— मुसलमान हैं या हिन्दू ? मैं बहुत भयभीत हो गया । भागने का सवाल ही पैदा नहीं होता था, क्योंकि मैं उनमें घिरा हुआ था । पास कोई पुलिस वाला भी नहीं था, जिसे मदद के लिए पुकारता । और कुछ समय में न आया तो बेजोड़ शब्दों में उनसे बातचीत आरम्भ कर दी । 'रामगिलावन हिन्दू है... हम पूछता है, वह किधर रहता है ?... उसकी खोली कहाँ है ?... दस बरस से वह हमारा घोड़ी है ।... बहुत बीमार था, हमने उसका इलाज कराया था... हमारी बेगम... हमारी बेगम साहब यहाँ मोटर लेकर आई थीं... ' यहाँ तक मैंने कहा तो मुझे अपने ऊपर बहुत तरस आया । दिल-ही-दिल में बहुत लज्जित हुआ कि : 'इन्सान अपनी जान बचाने के लिये कितनी नोबी सतह पर उतर आता है, इस अनुभव ने मुझे साहस प्रदान किया और फिर मैंने उससे कहा, 'मैं मुसलमीन हूँ ।'

'मार डालो, मार डालो !' का शोर बुलन्द हुआ ।

घोड़ी जो कि साराब के नदी में धुस था, एक घोर देखकर चिल्लाया,
‘टहरो ! इसे रामसिलावन मारेगा !’

मैंने पलटकर देखा । रामसिलावन मोटा डण्डा हाथ में लिये सड़सड़ा रहा था । उसने मेरी घोर देखा और मुसलमानों की अपनी भाषा में गालियाँ देना शुरू कर दीं । डण्डा भिर तक उठाकर गालियाँ देना हुआ वह मेरी तरफ बढ़ा, मैंने आशा के स्वर में कहा, ‘रामसिलावन !’

रामसिलावन दहाड़ा, ‘धुस कर वे रामसिलावन के...’

मेरी धमिल भाषा डूब गई । जब वह मेरे समीप था पहुँचा तो मैंने हँसे हुए कण्ठ से धीरे से कहा, ‘मुझे पहचानते नहीं रामसिलावन ?’

राम सिलावन ने प्रहार करने के लिए डण्डा उठाया । एकदम उसकी धालें मुकड़ीं, फिर फँसीं, फिर मुकड़ीं । डण्डा हाथ से गिराकर उसने करीब आकर मुझे गौर से देखा और पुकारा, ‘साब !’ फिर वह अपने सापियों से सम्बोधित हुआ, ‘यह मुसलमीन नहीं । यह मेरा साब है । घेगम साब का साब ।’ यह मोटर लेकर आया था ‘डाक्टर के पास ले गया था, जिसने मेरा जुल्मा ठीक किया था ।’

रामसिलावन ने अपने सापियों को बहुत समझाया, किन्तु वे न माने । सब साराबी थे । तू-तू मैं-मैं शुरू हो गई । कुछ घोड़ी रामसिलावन की तरफ हो गये और हाथा-पाई पर नौबत आ गई । मैंने मोका ठीक समझा और वहाँ से खिसक गया ।

दूसरे रोज मुझ नी यजे के करीब मेरा सामान तैयार था । केवल अहार के टिकटो की प्रतीक्षा थी जो एक मित्र ब्लैक मार्केट से खरीदने गया था ।

मैं बहुत बेचैन था । दिल में तरह-तरह के विचार उबल रहे थे । दिन चाहता था कि जल्दी टिकट आ जायें और मैं बन्दरगाह की तरफ चल दूँ । मुझे ऐसा अनुभव होता था कि अगर देर हो गई तो मेरा प्लैट मुझे अपने अन्दर फँस कर लेगा ।

दरवाजे पर दस्तक हुई । मेरे मोना टिकट आ गये । दरवाजा खोला तो बाहर भीषी मचा था ।

‘माव मयाग !’

‘मयाग !’

‘मे शन्दर आ जाऊँ ?’

‘प्रापो !’

मम मामोजी ने शन्दर दागिन हुआ । गठरी मोलकर उसने कपड़े निकाल कर पलंग पर रगे । भीती ने शपथी शर्मों पोंछी और शर्मा-सा होकर कहा, ‘प्राप जा रहे हैं साव ?’

‘हाँ !’

उसने रोना शुरू कर दिया, ‘माव मुझे माफ कर दो । यह सब दारु का कतूर था और दारु...दारु आजकल मुफ्त मिलती है ।...सेठ लोग बाँटता है कि पीकर मुसलमीन को मारो ।...मुफ्त की दारु कौन छोड़ता है साव ।...हमको माफ कर दो ।...हम कियेला था ।...साइद शालिम बालिश्टर हमारा बहुत मेहरवान होता ।...तुम्हारा बेगम साव हमारा जान बचाया होता ।...जुल्लाम से हम मरता होता ।...वह मोटर लेकर आता...डाक्टर के पास ले जाता । इतना पैसा सरच करता । तुम मुलुक जाता बेगम साव से मत बोलना । रामखिलावन...’

उसकी आवाज गले में रुँध गई । गठरी की चादर कंधे पर डालकर चलने लगा तो मैंने रोका, ‘ठहरो रामखिलावन ।’

लेकिन वह भीती की लाँग संभालता तेजी से बाहर निकल गया ।

औरत ज्ञात

महाराजा 'ग' ने रेमकोर्स पर अगोक की मुलाकात हुई। उसके बाद दोनों अभिन्न मित्र बन गये।

महाराजा 'ग' को रेश के छोड़े पानने का शौक ही नहीं रहता था। उसके प्रस्तबल में पच्छी-मे-पच्छी नमल को छोड़ा मौजूद था और महल में जिनके पुंखद रेमकोर्स से साफ दिवाई देते थे, भाति-भाति की आश्चर्यजनक वस्तुएँ थीं।

अगोक जब पहली बार महल में गया तो महाराजा 'ग' ने फई घण्टे व्यतीत करके उसे अपनी सभाम अनुमत्य वस्तुएँ दिवाई। इन वस्तुओं को एकत्र करने में महाराजा की सारे सत्तार का बीरा करना पड़ा था; प्रत्येक देश का बीना-कोना छानना पड़ा था। अगोक बहुत प्रभावित हुआ; घतः अपने सख्त महाराजा 'ग' के जीवन-स्तर की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

एक नि अगोक घोड़ों के टिप लेने के लिए महाराजा के पास गया तो वह हाक कम में फिलम देल रहा था। उसने अगोक को वहीं बुलवा लिया। सिक्सटीन मिनिमीटर फिलम थी जो महाराज ने स्वयं अपने कमरे से ली थी। जब प्रोजेक्टर बला तो पिछली देल पूरी-की-पूरी पदे पर बीड़ गई। महाराजा का छोड़ा इन देल में बन भाया था।

इन फिलम के बाद महाराजा ने अगोक की फर्माइश पर धीरे-धीरे कई फिलम दिवाई। स्वीटजरलैंड, पेरिस, न्यूयार्क, हॉन्ग कू लू, हवाई, कश्मीर की घाटी—अगोक बहुत आनन्दित हुआ। ये नारी फिलमे प्राकृतिक रंगों में थीं।

अगोक के पास भी सिक्सटीन मिनिमीटर कैमरा और प्रोजेक्टर था किन्तु

उसके पान फिल्मों का उतना गढ़ा भण्डार नहीं था। दरममल उसे इतनी दुर्लभ ही नहीं मिलनी थी कि अपना गढ़ घोंक जी भर के पूरा कर सके।

महाराजा जब कुछ फिल्में दिखा चुका तो उसने कमरे में रोजनी की छोटी घेनफल्सुकी में समोत की रान पर गप्पा मारकर कहा, 'श्रीर मुनाग्र दोस्त।'।

अशोक ने विमर्श मुलगाया, 'मजा या मजा फिल्म देगकर।'।

'श्रीर दिमाज'?

'नहीं, नहीं।'।

'नहीं भई, एक जम्बर देगो। मजा या जायगा तुम्हें।' यह कहकर महाराजा 'ग' ने एक संदूकना मोलकर एक रीन निकाली श्रीर प्रोजेक्टर पर चढ़ा दी। 'जरा इत्तेनान् से देगना।'।

अशोक ने पूछा, 'क्या मतलब?'

महाराजा 'ग' ने कमरे की लाइट आफ कर दी। 'मतलब यह कि हर चीज गीर से देखना।' कहकर उसने प्रोजेक्टर का स्विच दबा दिया।

पट्टे पर कुछ क्षणों तक सफेद रोशनी थरथराती रही। फिर एकदम तस्वीरें शुरू हो गईं। एक सर्वथा नग्न स्त्री सोफे पर लेटी थी; दूसरी शृंगार-मेज के पास खड़ी बाल सँवार रही थी।

अशोक कुछ देर सामोण बँठा देखता रहा। उसके बाद एक दम उसके कण्ठ से कुछ विचित्र आवाज निकली। महाराजा ने हँसकर उससे पूछा, 'क्या हुआ?'

अशोक के कण्ठ से आवाज फँस-फँसकर बाहर निकली, 'वन्द करो बार, वन्द करो!'

'क्या वन्द करो!'

अशोक उठने लगा; लेकिन महाराजा ने उसे पकड़कर बिठा दिया, 'यह म तुम्हें पूरी-की-पूरी देखनी पड़ेगी।

ॐ चलती रही। स्त्री-पुरुष का शारीरिक सम्बन्ध निपट नग्नता के रकता रहा। अशोक ने सारा समय बेचैनी में काटा। जब फिल्म

बन्द हुई घोर पर्दे पर केवल एकेक प्रकाश था तो अशोक को ऐसा अनुभव हुआ कि जो कुछ उसने देखा था, प्रोजेक्टर की बजाय उसकी आँखें फेंक रही हैं।

महाराजा 'ग' ने कमरे की बत्ती खोली घोर अशोक की ओर देखा और एक जोर का ठहाका लगाया, 'बधा हो गया तुम्हें ?'

अशोक कुछ झुंझ-सा गया था। एकदम प्रकाश होने के कारण उसकी आँखें मिची हुई थी। माथे पर पसीने के छोटे-छोटे बूँद थे। महाराजा 'ग' ने जोर से उसकी राय पर ध्यान मारा और ऐसे जोर में हँसा कि उसकी आँखों में आंसू आ गये। अशोक सोफे पर से उठा, हमाल निकालकर अपने माथे का पसीना पोछा। 'कुछ नहीं यार।'।

'कुछ नहीं क्या ? मजा नहीं आया ?'

अशोक का कण्ठ सूखा हुआ था। धीरे-धीरे उसने कहा, 'वहाँ से लाने यह फिल्म ?'

महाराजा 'ग' ने मोफे पर लटते हुए उत्तर दिया, 'पेरिस से। पेरि... पेरि...'

अशोक ने सिर को झटका-सा दिया, 'कुछ समय में नहीं आता।'।

'क्या ?'

'ये लोग। मेरा मतलब है कमरे के सामने ये लोग कौन... ?'

'यही तो कमाल है। है कि नहीं ?'

'यह है तो मही, यह कहकर अशोक ने आमान से अपनी आँखें साफ की। सारी सतहों से जैसे मेरी आँखों में फग-सी गई हैं।'।

महाराजा 'ग' उठा, 'जैसे एक बार कुछ महिमाओं को यह फिल्म दिखाई।'।

अशोक चिल्लाया, 'महिमाओं को ?'

हा, हा। बड़े मजे लेकर देखा उन्होंने।'।

.. 'गलत।'।

महाराजा 'ग' ने बड़ी गम्भीरता से कहा, 'सच कहना हूँ। एक बार देश पर दुसरी बार फिर देना। सीमावी, चित्तावी और हूँवती रही।

अशोक ने अपने मित्र को भयानक-सा दिया, 'हृद हो गई है। मैं तो समझता था वे नेहोश हो गई होंगी।'

'मेरी भी यही गयान था, लेकिन उन्होंने गूँच आनन्द लिया।'

अशोक ने कहा, 'क्या यूरोपियन थी?'

महाराजा 'ग' ने कहा, 'कहीं भाई, अपने देश की थी। मुझसे कई बार यह फिल्म और प्रोजेक्टर मांग के ले गईं। मालूम नहीं कितनी सहूलियों को दिया चुकी है।'

'मैंने कहा...।' अशोक कुछ कहते-कहते रुक गया।

'क्या?'

'एक-दो रोज के लिए यह फिल्म दे सकते हो मुझे?'

'हाँ हाँ ले जाओ।' यह कहकर महाराजा 'ग' ने अशोक की पसलियों में दौड़ा दिया, 'सारे ! कैसे दिलायेंगा?'

'मित्रों को।'

'दिखा जिसे भी तेरो मर्जी हो।' कहकर महाराजा 'ग' ने प्रोजेक्टर में से फिल्म को एक स्पूल से निकाला और उसे दूसरे स्पूल पर चढ़ा दिया और डिट्वा अशोक के हवाले कर दिया।

'ले पकड़, ऐश कर।'

अशोक ने डिट्वा हाथ में ले लिया तो उसके वदन में भर-भरी-सी दौड़-गई। घोड़ों की टिप लेना भूल गया और कुछ मिनट इधर-उधर की बातें करने के बाद चला गया।

घर से प्रोजेक्टर ले जाकर उसने कई दोस्तों की यह फिल्म दिखाई। लगभग सभी के लिए मानव जाति की यह नग्नता एकदम नई वस्तु थी। अशोक ने प्रत्येक की प्रतिक्रिया नोट की। कुछ ने मामूली-सी घबराहट प्रकट की और फिल्म का एक-एक इंच गौर से देखा; कुछ ने थोड़ा-सा देखकर

घातों बन्द करलीं। कुछ घातों खुली रखने के बावजूद पूरी फिल्म को न देख सके। एक बर्दाश्त न कर सका और उठकर चला गया।

सोम-पार दिन के बाद प्रसोक को फिल्म वापस करने का भयाल घाया तो उसने सोचा क्यों न अपनी बीबी को दिखाऊँ ? भयः यह प्रोजेक्टर अपने घर ले गया। रात हुई तो उसने अपनी पत्नी को बुलाया, दरवाजे बन्द किये, प्रोजेक्टर का बनेबानन बगैरा ठीक बिया, फिल्म निकाली, उसे फिट किया, कंमरे की बत्ती बुझाई और फिल्म चला दी।

पट्टे पर कुछ क्षण तक सफेद रोगनी घरपराई। फिर तमबोरें शुरू हुईं। प्रसोक की बीबी जोर से खोली, तहणी, उछनी और उसके मुँह से विभिन्न धावाजें निकलीं। प्रसोक ने उसे पकड़कर बिठाना चाहा तो उसने भाँसों पर हाथ रख लिया और चीखना शुरू कर दिया, 'बन्द करो ! बन्द करो !!'

प्रसोक ने हँसकर कहा 'अरे भई देख लो, घरमासी क्यों हो ?'

'नही, नही।' वह गहककर उगने हाथ छुड़ाकर भागना चाहा।

प्रसोक ने उसे जोर से पकड़ लिया। वह हाथ जो उसकी भाँसी पर था, एक ओर खेंचा। इस खेंचानानी में सहता प्रसोक की पत्नी ने रोता धारण कर दिया। प्रसोक के जैसे ब्रेक-सा लग गया। उसने तो मात्र मनोरंजन के उद्देश्य से अपनी पत्नी को फिल्म दिखाई थी।

रोती और बड़बड़ानी उमकी पत्नी दरवाजा खोल कर बाहर निकल गई। प्रसोक कुछ क्षण सर्वथा सज्जागीन बंश नम्र चित्र देखता रहा, जो प्रमानुषिक कृत्यों में व्यस्त थे। फिर मकामक उसने मामले की सम्भीरता का अनुभव किया और इस अनुभव ने उसे सज्जा के समुद्र में नर्क कर दिया। उसने सोचा मुझसे अत्यन्त असोमनीय कृत्य हो गया है और धारवर्ष है कि मुझे इसका भान तक न हुआ। दोस्तों को दिखाई थी, ठीक थी। मगर मैं और किसी को नहीं अपनी पत्नी को... उसके माथे पर पचीना धा गया।

फिल्म चल रही थी। निपट नभता विभिन्न घासन धारण करती दौड़ रही थी। प्रसोक ने उठकर स्विच ऑफ कर दिया। पट्टे हर सब कुछ चुप

गया। किन्तु उसने अपनी दृष्टि दूसरी ओर फेर ली। उसका हृदय तथा मस्तिष्क लज्जा में डूबा हुआ था। वह अनुभव उसे चुभ रहा था कि उससे एक अत्यन्त असोभनीय, बहुत ही मूर्खतापूर्ण कृदा हुआ है। उसने गहरी तक सोचा कि वह कैसे अपनी पत्नी ने श्रांग भिन्ना मरेगा।

कमरे में घुब आँधेरा था। एक निमरेंट मुचगाकर, उसने इस लज्जा के अनुभव की विविध विचारों द्वारा दूर करने की चेष्टा की; किन्तु सकल न हुआ। थोड़ी देर दिमाग में इधर-उधर हाथ मारता रहा। जब चारों ओर से धिक्कार ही मिला तो वह उठता गया और एक विविध इच्छा उसके हृदय में उत्पन्न हुई कि जिस प्रकार कमरे में आँधेरा है उसी प्रकार उसके मस्तिष्क पर आँधकार छा जाये।

बार-बार उसे यह बात सूझ रही थी, 'ऐसी मूर्खतापूर्ण तथा अशिष्ट बात और मुझे ध्यान तक न आया।' फिर वह सोचता : 'बात यदि सास तक पहुँच गई सलियों को पता चल गया तो वे मेरे बारे में क्या राय कायम करेंगी, यही न कि मैं कितने गिरे हुए आचरण का व्यक्ति हूँ। ऐसी नीच प्रवृत्ति कि अपनी पत्नी को....।'

तंग आकर अशोक ने सिगरेट सुलगाया। वे नये चित्र जो वह कई बार देख चुका था, उसकी आँखों के सामने नाचने लगे। उनके पीछे उसे अपनी पत्नी का चेहरा नजर आता। वह नितांत चकित तथा घबराया हुआ था। उसने जीवन में पहली बार दुर्गन्ध का इतना बड़ा ढेर देखा था। सिर झटक कर अशोक उठा और कमरे में टहलने लगा। किन्तु उसने भी उसकी व्याकुलता दूर न हुई।

थोड़ी देर बाद वह दवे पाँव कमरे से बाहर निकला। पास के कमरे में झाँककर देखा : उसकी पत्नी मुँह और सिर लपेट कर लेटी हुई थी। काफी देर खड़ा सोचता रहा कि अन्दर जाकर समुचित शब्दों में उससे क्षमा मि। लेकिन खुद इतना साहस पैदा न कर सका। दवे पाँव लौटा और पारे कमरे में सोफे पर लेट गया। देर तक जागता रहा, अन्त में सो गया।

' सुबह सवेरे उठा, रात की घटना उसके मस्तिष्क में पुनर्जीवित हो गई । अशोक ने पत्नी मिलना उचित नहीं समझा और नास्ता किये बिना ही चल दिया ।

आफिस में उसने दिल लगाकर कोई काम न किया । यह अनुभव उसके दिल व दिमाग के साथ चिपट कर रह गया था, 'ऐसी निरर्थक बात और मुझे ध्यान तक न आया ।'

कई बार उसने घर बीबी को टेलिफोन करने का इरादा किया; लेकिन हर बार डायल के आगे भ्रक धुमाकर रिमीवर रख दिया । दोपहर की घर से जब उसका खाना आया तो उसने नौकर से पूछा, 'मेम साहब ने खाना खा लिया ?'

नौकर ने उत्तर दिया, 'जी नहीं वह कहीं बाहर गये हैं ।'

कहाँ ?'

'मालूम नहीं साहब ।'

'कब गये थे ?'

'ग्यारह बजे ।'

अशोक का दिल धड़कने लगा; भूख गायब हो गई । दो-चार घास खाये और हाथ उठा लिया । उसके दिमाग में हलचल मच गई थी । तरह-तरह के विचार उत्पन्न हो रहे थे—ग्यारह बजे... अभी तक नहीं लौटीं... गई कहाँ है... माँ के पास ? क्या वह उसे सब कुछ बता देगी ?... जरूर बतायेगी । ... माँ से बेटी सब कुछ कह सकती है । ... हो सकता है वहनों के पास गई हो । ... मुर्नेगी तो क्या कहेंगी ? ... दोनों मेरी कितनी इज्जत करती थी । जाने बात कहाँ से कहाँ पहुँचेगी । ऐसी मूर्खता और मुझे खयाल भी न आया ।'

अशोक दफ्तर से बाहर निकल गया । मोटर ली और इधर उधर आवाज चकर लगाता रहा । जब कुछ समय में न आया तो उसने मोटर का रस घर की तरफ फेर दिया : 'देखा जायगा वो कुछ होगा ।'

घर के पास पहुँचा तो उसका दिल धड़कने लगा । अब निपट एक

पत्रके के माथ ऊपर उठी तो उसके दिम उमड़कर उसके मुँह में आ गया।

निपट तीमरी मजिल पर ली। कुछ देर सोचकर उगने दरवाजा मीठा। अपने फ्लैट के पास पहुँचा तो उसके कदम रुक गये। उसने सोचा कि मोट जाये। मगर फ्लैट का दरवाजा गुना सीर उमका नीकर बीड़ी पीने के लिए बाहर निकला। अशोक देगकर उसने बीड़ी हाथ में छिपा ली और मलाम किया। अशोक ने पत्र पर उससे पूछा, 'मेम साहब कहाँ हैं?'

नीकर ने जवाब दिया, 'अन्दर कमरे में हैं।'

'और गोन है?'

'उसी बच्चे साहब। कौनाये वाले साहब की मेम साहब और दो पारसी बाइयाँ।'

यह सुनकर अशोक बड़े कमरे की ओर बड़ा दरवाजा बन्द था उसने धक्का दिया। अन्दर से अशोक की पत्नी की पतली किन्तु तेज आवाज आई, 'कौन है?'

नीकर बोला, 'साहब।'

अन्दर कमरे में एक दम गड़बड़ी शुरू हो गई; चीखें आईं, दरवाजे की चटपटियाँ गुलने की आवाजें आईं; राटमट, फट-फट हुई। अशोक कारीडोर में होता निश्चये दरवाजे से कमरे में प्रविष्ट हुआ तो उसने देखा कि प्रोजेक्टर चल रहा है और पर्दे पर दिन के प्रकाश में धुँधली-धुँधली इन्सानो सबलें एक छुल्लोत्तादक ढंग से अमानुषिक कृत्यों में लीन हैं।

अशोक ठट्ठाका मारकर हँसने लगा।

अत्ला दिता

दो भाई थे — अत्ला रखा और अत्ला दिता । दोनों रियासत पटियाला के निवासी थे । उनके पूर्वज तो लाहौर में बसे थे किन्तु जब इन दो भाइयों का दादा नीकरो की सत्ता में पटियाला आया तो वही का हो रहा ।

अत्ला रखा और अत्ला दिता दोनों सरकारी कर्मचारी थे । एक चीफ़ सेक्रेटरी साहब बहादुर का मदली था, दूसरा कन्ट्रीयर थाफ़ स्टोर्स के दफ़्तर का चपरासी ।

दोनों भाई एक साथ रहते थे ताकि खर्च कम हो । बड़ी अच्छी गुजर हो रही थी । एक सिके अत्लारखा को जो बड़ा था अपने छोटे भाई के चाल-चलन के बारे में शिकायत थी । वह धराब पीना था, रिवत सेता था और रानी-बन्नी बिस्मो मरीच और निपेन स्त्री को फ़ास भी लिया करता था । किन्तु अत्ला रखा ने हमेशा उसे जान-बूझकर अनदेखा किया ताकि घर की मानि तथा व्यवस्था बंग न हो ।

दोनों विवाहित थे । अत्ला रखा की दो लड़कियाँ थीं । एक ब्याही जा चुकी थी और अपने घर में गुप्त थी । दूसरी बियाबा नाम मुगरा था, तेरा बर्ब की थी और शाइमरी स्कूल में पढ़ती थी ।

अत्ला दिता की एक लहरी थी — जैन । उसकी शादी हो चुकी थी; किन्तु अपने घर में कोई इतनी गुप्त नहीं थी, इसलिए कि उनका प्रति व्यवसायी था फिर भी वह ज्योन्वी निभाये जा रही थी ।

जैन अपने भाई तुफ़ेन में नीन दण बड़ी थी । इस रिवाज में मुर्ग का घायु बटारह-उत्तीय वर्ष की होती थी । वह मोटे के एक छोटे में बालताने में

काम मीमा रग था । लड़का बुद्धिमान था फलः काम मीमाने के दौरान में पंद्रह वर्ष मासिक उसे भिन्न जगि थे । दोनों भाइयों को पत्नियां बड़ी आज्ञाकारिणी, प्रियतमी तथा ईश्वर-भक्त थी । उन्होंने अपने पत्नियों को कभी मितायत का मोहा नहीं दिया था ।

जीवन बड़ा समनज तथा सुखद व्यतीत हो रहा था कि सहसा हिन्दू-मुस्लिम दंगे शुरू हो गये । दोनों भाइयों ने कभी कल्पना भी न की थी कि उनके प्राण, संतति तथा प्रियतमा पर आक्रमण होगा और उन्हें आपाधापी और दरिद्रता की दशा में खियासत पटियाला छोड़नी पड़ेगी—किन्तु ऐसा हुआ ।

दोनों भाइयों को विल्कुल पता न था कि इस सूनी तूफान में कौन सा बंध गिरा, कौन ने पेड़ की कौनसी शाखा टूटी । जब होश-हवास कुछ ठीक हुये तो कुछ वास्तविकताएँ सामने आई और वे काँप उठे ।

अल्ला रखा की लड़की का पति शहीद कर दिया गया था और उसकी पत्नी की बलवाइयों ने बड़ी बेइदोरी से हत्या कर दी थी ।

अल्ला दिता की बीबी को भी सिकतों ने कृपाणों से काट डाला था । उसकी लड़की जैनुब का दुराचारी पति भी मौत के घाट उतार दिया गया था ।

रोना-धोना बेकार था । सब संतोष करके बैठ रहे । पहले तो कैम्पों में गलते-सड़ते रहे, फिर गली-कूचों में भीख मांगा किये । आखिर खुदा ने सुनी । अल्ला दिता को गुजरानवाला में एक छोटा-सा टूटा-फूटा मकान सिर छिपाने को मिल गया । तुर्कल ने दौड़-धूप की तो उसे काम मिल गया ।

अल्ला रखा लाहौर ही में देर तक दर-बदर फिरता रहा । जवान लड़की साथ थी मानो एक पहाड़-का-पहाड़ उसके सिर पर खड़ा था । यह अल्लाह ही बेहतर जानता है कि उस बेचारे ने किस प्रकार डेढ़ वर्ष बिताया । बीबी और बड़ी लड़की का शोक वह विल्कुल भूल चुका था । संभव था कि वह कोई सतरनाक कदम उठाये कि उसे रिवासत पटियाला के एक बड़े अफसर मिल गये जो उसके बड़े मेहरवान थे । उसने उन्हें अपनी कथा अ से ह तक कह

सुनाई । आदमी दयावान था । उसे बड़ी कठिनाइयों के बाद लाहीर के एक अत्यायी कार्यालय में अच्छी नौकरी मिल गई थी । अतः उसने दूसरे दिन ही उसे चालीस रुपये मासिक पर नौकर रख लिया और एक छोटा सा बघाटर भी रहने के लिए दिसवा दिया ।

अस्ता रत्ना ने खुदा का शुक्र अदा किया जिसने उसकी श्रुतिकर्णें दूर की अब वह आराम से साँस ले सकती था । सुगरा बड़ी व्यवस्थाप्रिय तथा सुगठ लड़की थी । सारा दिन घर के काम-काज में व्यस्त रहती । इधर-उधर से लकड़ियाँ चुनकर लाती, चूल्हा धुनवाती और मिट्टी की हँडियाँ में हर रोज इतनी तरकारी पकाती जो दो बस्त के लिए पूरी हो जाय । आटा भूँषती, पाम ही तन्दूर या वहाँ जाकर रोटियाँ लगावा लेती ।

एकान्त में मनुष्य क्या कुछ नहीं सोचता ? तरह-तरह के विचार आते हैं । सुगरा आम तौर पर दिन में अकेली होती थी और अपनी बहन तथा मा की याद करके धाँसू बहाती रहती थी । पर जब बाप आता तो वह अपनी धाँसी में सारे धाँसू खुदक कर लेती थी ताकि उसके घाव न हरे न हों । लेकिन वह इतना जानती थी कि उसका बाप अन्दर ही अन्दर घुला जा रहा है । उसका दिल हर वक्त रोना रहता है लेकिन वह किसी से कुछ कहता नहीं । सुगरा से भी उसने कभी उसकी माँ और बहन का जिक्र नहीं किया था ।

जिन्दगी गिरते-पड़ते गुजर रही थी । ऊपर मुखरानवाना में अस्ता रत्ना अपने भाई की अपेक्षा कुछ हद तक सुगहान था क्योंकि उसे भी नौकरी मिल गई थी और जैनब भी थोड़ा-बहुत सिलाई का काम कर लेती थी । मिल-मलाकर कोई सौ रुपये माहवार हो जाते थे जो तीनों के लिए बहुत काफी थे ।

मवान छोटा था लेकिन ठीक था । ऊपर की मजिद में तुर्कन रहता था, निचली मजिद में जैनब और उसका भाव । दोनों एक-दूसरे का बहुत खयाल रखते थे । अस्ता रत्ना उसे अधिक काम नहीं करने देता था । अतः मुँह-भरें उठकर वह धौपन में झाड़ू देकर चूल्हा धुनवा देता था कि जैनब का

गुप्त काम तबका ही जाये। मरत मित्रता तो यह दो-तीन घण्टे भरकर घड़ौनी पर रग देना था।

जैसा वे अपने महोदय जित्तो को मभी याद नहीं किया था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वह जगते जीवन में कभी था ही नहीं। यह गुप्त थी। अपने चाप के साथ वह गुप्त थी। कभी-कभी वह उससे निपट जाती थी, तुफल के गायने भी। और उसे गुप्त चुमती थी।

गुमरा अपने पिता से ऐसे घटने नहीं परती थी। यदि संभव होता तो वह उससे पक्षी करती—हमलिया नहीं कि वह कोई घनजाना था, नहीं बल्कि केवल घाटन के लिए। हमारे दिन में कई बार यह दुषा उठती थी, 'या पर-परदिवार, मेरा बाप मेरा जनाना उठ ये !'

कभी-कभी कई दुषाएँ उल्टी सन्तित होती हैं। जो गुप्त को मंजूर था वही होता था। बेचारी गुमरा के शिर पर नोक व संताप का एक पहाड़ टूटना था।

जून के महीने दोपहर की दफ्तर के किसी काम पर जाते हुए तपती सड़क पर अल्ला रखा को ऐसी नूतन कि बेहोश होकर गिर पड़ा। लोगों ने उठाया अस्पताल पहुँचाया। किन्तु दावा दारू ने कोई काम नहीं किया।

गुमरा चाप की मोत के सदमे से घाघी पागल हो गई। उसने करीब-करीब अपने घाघे गाल नांच डाले। पड़ोसियों ने बहुत दम-दिलासा दिया मगर वह फारगर कैसे होता—वह तो ऐसी नौका के समान थी जिसका न कोई वादवान ही और न कोई पतवार, जो बीच डेढ़वार में आ फँसी हो।

पटियाले के वह अफसर जिन्होंने अल्ला रखा को नौकरी दिलवाई थी दया के देवता सिद्ध हुए। उन्हें जब सूचना मिली तब दीड़े आये। सबसे पहले उन्होंने यह काम किया कि गुमरा को मोटर में बिठाकर घर छोड़ आये और अपनी पत्नी से कहा कि वह उसका खयाल रखे। फिर अस्पताल जाकर उन्होंने अल्ला रखा के स्नानादि का वहीं प्रबंध किया और दफतर वालों से कहा कि वे उसे दफन आये।

अल्ला रखा को अपने भाई के देहान्त की सूचना बड़ी देर के बाद मिली।

बहरहान वह साहोर घाया घोर पूछता-पूछता यही पहुँच गया जहाँ सुग्रा थी ।
 चगने अपनी मतोजी को बहुत दम-दिनामा दिया, बहलाया, सोने से लगाया,
 प्यार दिया, मसार को नदरता का जिक्र किया, बहादुर बनने को कहा ।
 विनु सुग्रा के फटे टूटे दिल पर जन समाज बानों का क्या प्रभाव पड़ता ।
 बेचारी चुपचाप अपने धाँगु कुपट्टे में सुग्राजी रही ।

अन्ना दिता ने अफसर साहब से घन्त में कहा, मैं धारना बहुत बामारी
 हूँ । मेरी गर्दन सदैव आपके उपकारों से ढकी रहेगी । भाई की अन्वेषण का
 आपने प्रयत्न किया, फिर यह बच्ची जो विन्कुन निराश्रय रह गई थी, उसे
 आपने अपने घर में जगन दी । मुदा आपको इसका बदला दे । अब मैं इसे
 अपने माथ से जाना हूँ । मेरे भाई की बड़ी कामती निशानी हूँ ।

अफसर साहब ने कहा, 'ठीक है, लेकिन तुम अभी इसे कुछ देर और यहाँ
 रहने दो । वांछित संमेलन जाय तो ले जाना ।'

अन्ना दिता ने कहा, 'हजूर, मैंने निश्चय किया है कि मैंने इसकी शादी
 अपने लक्ष्म से करूँगा और बहुत जल्दी ।'

अफसर साहब बहुत खुश हुए, 'यह एक इरादा है, लेकिन इस स्थिति में
 जबकि तुम इसका विवाह अपने सड़के से करने वाले हो इसका उस घर में
 रहना ठीक नहीं । तुम शादी का प्रबंध करो मुझे तारीख की सूचना द देना ।
 मुदा के करम से सब ठीक हो जाएगा ।'

बाल ठीक थी । अन्ना दिता आपस गुजरानवाला चला गया । जैनव
 उसकी अनुपस्थिति में यही उदास हो गई थी । जब वह घर में प्रविष्ट हुआ
 तो उसने लिपट गई और कहने लगी कि उसने इतनी देर क्यों लगाई ।

अन्ना दिता ने प्यार से उसे एक ओर हटाया, 'अरे बाबा, आना जाना
 तो क्या है, बस पर फावेला पड़नी थी । सुग्रा से मिलना था, उसे क्या
 लाना था ।'

जैनव ने जाने क्या सोचने लगी, 'सुग्रा को यहाँ लाना था ?' एकदम
 चौंकर, हाँ, सुग्रा को यहाँ लाना था । पर वह कहाँ है ?

'वहीं है । पटियाले के एक बड़े नेरुदिन अफसर है, उनके पास है ।

उन्होंने कहा, 'जब तुम इसकी शादी का बन्दोबस्त कर लोगे तो ले जाना ।' यह कहते हुए उसने बीड़ी गुलगार्ने लगी ।

जैनव ने बड़ी दिलचस्पी से लेते हुए पूछा, 'इसकी शादी का बन्दोबस्त कर रहे हो ? कोई नरक है तुम्हारी नजर में ?'

अल्ला दिता ने जोर का कण लिया, 'अरे भाई अपना तुर्कल है न । मेरे बड़े भाई कि सिके एक ही निजानी नो है । मैं उन्हें क्या दूसरों के हवाले कर दूँगा ?'

जैनव ने ठण्ठी नास भरी, 'तो सुगरा की शादी तुम तुर्कल से करोगे ?'

अल्ला दिता ने उत्तर दिया, 'हां ! क्या तुम्हें कोई पैतराज है ?'

जैनव ने बड़े मयल स्वर में कहा, 'हां, और तुम जानते हो क्यों है । यह शादी हरगिज नहीं होगी ।'

अल्ला दिता मुस्कराया । जैनव की ठोड़ी पकड़कर उसने उसका मुँह चूमा, पगली हर बात पर नक करती है । और बातों को छोड़, आखिर में तुम्हारा बाप हूँ ।'

जैनव ने बड़े जोर से 'हुंह, की, 'बाप !' और अन्दर कमरे में जाकर रोने लगी ।

अल्ला दिता उसके पीछे गया और उसे पुचकारने लगा ।

दिन गुजरते गये । तुर्कल आशाकारी बैठा था । जब उसके बाप ने सुगरा की बात की तो वह फौरन मान गया । आखिर तीन-चार महीने के बाद तारीख निश्चित हो गई । अफसर साहब ने सुगरा के लिए फौरन एक बहुत अच्छा जोड़ा सिलवाया जो उसे शादी के दिन पहनना था । एक अँगूठी भी ले दी । फिर उसने मुहल्ले वालों से अपील की कि वे एक अनाथ लड़की के व्याह के लिए जो नितान्त निराश्रय है यथाशक्ति कुछ दें ।

सुगरा को लगभग सभी आनते थे और उसकी स्थिति से अभिज्ञ थे । अतएव उन्होंने मिल-मिलाकर उसके लिए बड़ा अच्छा देहज तैयार कर दिया ।

सुगरा दुल्हन बनी तो उसे ऐसा अनुभव हुआ कि सारे दुःख एकत्र हो गये हैं और उसे पीस रहे हैं । बहरहाल वह अपनी ससुराल पहुँची जहाँ उसका

स्वागत जैनव ने किया—कुछ इस तरह कि सुगरा को उसी समय मासूम हो गया कि वह उनके साथ बहनों का सा व्यवहार कभी नहीं करेगी बल्कि साम की तरह पेश आयेगी।

सुगरा का सदेह सही था। उसके हाथों की मेहदी अभी अच्छी तरह उतरने भी नहीं पाई थी कि जैनव ने उससे नौकरो के काम लेने शुरू कर दिये; भाड़, वह देती, बर्तन माबती, भूल्हा वह भोक्ती, पानी वह भरती। यह सब वह बड़ी फुर्ती और बड़ी सुमडता से करती, लेकिन फिर भी जैनव खुश न होती बात-बात पर उसे डाँटती, उपटती और झिडकती रहती।

सुगरा ने दिन में निश्चय कर लिया था कि वह मधु कुछ बर्दाश्त करेगी और कभी जवान से कोई शिकायत न करेगी। क्योंकि यदि उसे यहाँ से धक्का मिल गया तो उसके लिए और कोई ठिकाना नहीं था।

भल्ला दिता का व्यवहार उससे बुरा नहीं था। जैनव की नजर बचाकर कभी-कभी वह उसे प्यार कर लेता था और कहता था कि वह कुछ बिना न करे। मधु ठीक हो जायगा।

सुगरा को इससे बहुत डाढ़स होता। जैनव जब कभी अपनी किसी सहेली के मही जाती और भल्ला दिता सयोगवश घर पर होना तो वह उससे दिन खोलकर प्यार करता। उससे बड़ी मोझी-मोटी बातें करना, काम में उसका हाथ बटाना, उसके लिए जो वस्तुएँ छिपाकर रखी होती थीं देता और उसे सीने से लगाकर उससे कहता, 'सुगरा, तुम बड़ी प्यारी हो।'।

सुगरा भैंप जाती। असल में वह इतने उत्साहपूर्ण प्रेम की आरी नहीं थी। उसका मरहूम बाप अगर उसे कभी प्यार करता चाहता था तो मुँह उसके मिर पर हाथ फेर दिया करता था या उसके कपे पर हाथ रगड़कर दह दुसा दिया करता था, 'मुसा मेरी बेटी के नमीव अच्छे करे।'।

सुगरा तुर्फ़ से बहुत गुनगुन थी। वह अच्छा पति था। जो ब्राम्हण था उसके हवाने कर देता था किन्तु सुगरा जैनव को दे देती थी इसलिए कि वह उसके प्रबोध से डरती थी।

तुर्फ़ से सुगरा ने जैनव के दुर्ग्व्यवहार और उनके सान जैसे बर्ताव का

कभी निकल न दिया था। नए यशुनः मांगिप्रिय थी। वह नहीं चाहती थी कि उसके कमरे पर में किसी प्रकार का झगडा पैदा हो। और भी कई बातें थी जो वह नफ्तन से कहना चाहती तो कह देती किन्तु उसे डर था कि मुफान उठ गया होगा। और जो बचकर निराल जायेंगे लेकिन वह अपने लो उसमें फंस जायेंगी और उसे मरन न भर सकेंगी।

ये काम सारे उसे कुछ रोज हुए मालूम हुई थी और वह कांप-कांप गई थी। अब सन्ना दिना उसे प्यार करना चाहना तो वह मनग हट जाती या दोफार ऊपर नहीं जाती जहाँ वह और मुफान रहते थे।

मुफान को सुनवार की सुट्टी होती थी अल्ला दिता को इतवार की। यदि जैनव घर पर होता तो वह जल्दी जल्दी कम-काज सत्तम करके ऊपर चली जाती। मगर सयोगवश इतवार को जैनव वही बाहर गई होती तो मुगरा की जान पर चली रहती। टर के मारे नससे काम न होगा। लेकिन जैनव का मयान आता तो उसे मजबूरन कांपते हाथों और घडकते दिल से इच्छा या अनिच्छा से सभी कुछ करना पड़ता। यदि वह साना ठीक समय पर न पकाये तो उसका पति भूखा रहे क्योंकि वह ठीक बारह बजे अपना शिष्य गेटी के लिए भेज देता था।

एक दिन इतवार को जब कि जैनव घर पर नहीं थी तो वह आटा गूंध रही थी। अल्ला दिता पीछे से दवे पाँव धाया और आकर उसकी आँखों पर हाथ रख दिये। वह लड़प कर उठी किन्तु अल्ला दिता ने उसे अपनी मजबूत गिरफ में ले लिया।

मुगरा ने चीखना शुरू कर दिया, मगर वहाँ सुनने वाला कौन था। अल्ला दिता ने कहा, 'शोर मत मचाओ। यह सब वेफायदा है, चलो आओ।

वह चाहता था कि मुगरा को उठाकर अन्दर ले जाय। कमजोर थी लेकिन खुदा जाने उसमें कहाँ से इतनी शक्ति आगई कि अल्ला दिता की गिरफ्त से निकल गई और हाँवनी-काँपती ऊपर पहुँच गई। कमरे में प्रविष्ट होकर उसने अन्दर से कुण्डी चढ़ा दी।

थोड़ी देर के बाद जैनव आ गई। अल्ला दिता की तबियत खराब हो

गई थी। चन्द्र कमरे में लेट कर उसने जैनब को पुकारा। वह भाई तो उसने कहा, 'इधर आओ मेरी टांगें दबाओ।' जैनब उचक कर पलंग पर बैठ गई और अपने बाप की टांगें दबाने लगी। थोड़ी देर के बाद दोनों के ससि तेज-तेज चलने लगे।

जैनब ने अल्ला दिता से पूछा, 'क्या बात है आज तुम अपने भापे में नहीं हो?'

अल्ला दिता ने सोचा कि जैनब से छिपाना बिल्कुल बेकार है अतः उसने सारी घटना सुना दी। जैनब भाग-बगुला हो गई, 'क्या एक काफी नहीं थी तुम्हें? पहले घबरे नहीं आई, पर अब तो घानी चाहिए थी। मुझे मामूम था कि ऐसा होगा। इसीलिए मैं बादी के खिलाफ थी। अब सुनलो कि सुगरा इन घर में नहीं रहेगी।'

अल्ला दिता ने बड़े भोलेपन से पूछा, 'क्यों?'

जैनब ने खुले तौर पर कहा, 'मैं इस घर में अपनी सौत नहीं देखना चाहती।''

अल्ला दिता का कण्ठ सूख गया। उसके मुँह से कोई बात न निकल सकी।

जैनब बाहर निकली तो उसने देखा कि सुगरा भाँगन में भादू दे रही है; चाहती थी कि उससे कुछ कहे लेकिन चुप रही।

इस घटना को घटे दो मास बीत गये। सुगरा ने अनुभव किया कि तुर्कन उससे खिचा-झिचा रहता है। जरा-जरा-सी बात पर उसे धक की निगाहों से देखता है। अखिर एक दिन आया कि उसने तलाकनामा उसके हाथों में दिया और घर से बाहर निकाल दिया।

भूठी कहानी

कुछ समय से अल्पसंख्यक जातियां अपने अधिकारों की रक्षा के लिए जागृत हो रही थी और उन्हें उस भयानक स्वप्न से जगाने वाली बहुसंख्यक जातियां थी जो एक मुद्दे से अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए उन पर दबाव डाल रही थीं। इस जागृति की नहर ने कई संगठनों को जन्म दिया था : होटल के बेरो का संगठन, हज्जामों का संगठन, क्लर्कों का संगठन, पत्रकारों का संगठन। हर अल्पसंख्यक जाति या तो अपना संगठन बना चुकी थी या बना रही थी ताकि अपने अधिकारों की रक्षा कर सके।

ऐसे प्रत्येक संगठन की स्थापना पर समाचार पत्रों में ममीक्षाएं होती थीं। बहुमत के समर्थक उनका विरोध करते थे और अल्पमत के पक्षपाती उनका समर्थन। गरज कुछ भागों से एक अच्छा-सा मा हूगामा वर्षा था जिसमें रौनक बनी रहती थी। किन्तु एक दिन जब समाचारों में यह समाचार प्रकाशित हुआ कि देश के दस सफरिये गुण्डों ने भी अपना संगठन स्थापित कर लिया है तो बहुसंख्यक तथा अल्पसंख्यक दोनों जातियां बड़ी भयभीत हुईं। कुछ-कुछ में तो लोगों ने समझा कि बेपर की उहा बी है किमी ने पर अब उन संगठन ने अपने उद्देश्यादि प्रकाशित किये और एक नियमित विधान बनाया तो पता चला कि यह कोई मजाक नहीं बल्कि गुण्डे व बदमाश धान्य में खुद की एक संगठन के नीचे संगठित व एर-डूट करने का दृढ़ निश्चय कर चुके हैं।

इस संगठन की दो बैठकें हो चुकी थी जिनकी रिपोर्टें अखबारों में छप चुकी थी। लोग पढ़ते और विस्मित हो जाते। कुछ तो बहते श्रवण मगोय है।

उनके कानों तथा उद्देश्यों की सम्यो-नोड़ी सूनी भी जिसमें यह कहा गया था कि सुखों और वसमाओं का यह संगठन सबसे पहले तो इस बात पर विशेष प्रगट करेगा कि समाज में उनको पूर्णतया हीन दृष्टि से देखा जाता है। ये भी हमारे की भाँति यत्कि उन्हीं अपेक्षा कुछ अधिक आतिथ्रिय नागरिक हैं। उनके सुखों और वसमान न कहा जाय, क्योंकि इससे उनका अपमान होता है। वे स्वयं अपने लिए कोई उन्नत काम ढूँढ़ लेते किन्तु इस विचार में कि 'अपने मुँह भियां मिट्टू' कहावत उन पर चरितार्थ न हो, वे हमका निर्णय जन-साधारण पर छोड़ते हैं। चोरी-नकारी, डकैती और लूट, जेब-ताराजी और जालसाजी, पत्तेबाजी और ब्लैक-मार्केटिंग आदि की गणना दुकानों की अपेक्षा नवित कलाओं में होनी चाहिए। इन ललित कलाओं के साथ अब तक जो दुर्व्यवहार किया गया है उसका पूरा-पूरा बदला ही इस यूनियन का परम उद्देश्य है।

ऐसे ही कई और उद्देश्य थे जो सुनने और पढ़ने वालों को बड़े विचित्र प्रतीत होते थे। प्रगट में ऐसा था कि चन्द्र बेफिक्रे रसिकों ने लोगों के मनोरंजन के लिए ये सब बातें गढ़ी हैं। यह चुटकला ही तो मालूम होता था कि यूनियन अपने सदस्यों की कानूनी रक्षा का जिम्मा लेगी और उसकी गतिविधियों के लिए अनुकूल तथा सुखद वातावरण उत्पन्न करने के लिए पूरा-पूरा संघर्ष करेगी। वह वर्तमान अधिकारियों पर जोर देगी कि यूनियन के प्रत्येक सदस्य पर उसके स्थान तथा श्रेणी के अनुसार अभियोग चलाया जाय। सरकार लोगों को अपने घरों में चोरों का बिजली का अलार्म न लगाने दे। क्योंकि कभी-कभी यह घातक सिद्ध होता है। जिस प्रकार राजनीतिक वन्दियों को जेल में 'ए' तथा 'बी' क्लास की सुविधाएँ दी जाती हैं उसी प्रकार इस यूनियन के सदस्यों को दी जायें। यूनियन इस बात का भी जिम्मा लेती थी कि वह अपने सदस्यों को बुढ़ापे तथा अप्रगुप्त, या किसी दुर्घटना का शिकार हो जाने की स्थिति में हर मास निर्वाह के लिए एक समुचित रकम देगी। जो सदस्य किसी विषय-विशेष में दक्षता प्राप्त करने के हेतु विदेश जाना चाहेगा उसे छात्रवृत्ति देगी आदि आदि।

जाहिर है कि असबारों में इस यूनियन की स्थापना पर बहुत सी समीक्षाएँ हुईं। लगभग सभी इनके विरुद्ध थे। कुछ प्रतिक्रियावादी कहते थे कि यह कम्युनिज्म की चरम अवस्था है। और इसके सम्पादकों के हाँडे कमिनिन से मिलाने थे। इसलिए सरकार ने बार-बार प्रापेना की जाती कि यह इस उपद्रव को फौरन कुचल दे; क्योंकि यदि इसे जरा भी बनपने का मौका दिया गया तो समाज में ऐसा जहर फैलेगा कि उसका निदान मिलना मुश्किल हो जाएगा।

लोगों का विचार था कि प्रगतिवादी इस यूनियन का पदा पोषण करेंगे क्योंकि इनमें एक नवीनता थी और प्राचीन मूल्यों से हट कर उसने अपने लिए एक नया रास्ता तलाश लिया था और फिर यह कि प्रतिक्रियावादी इसे कम्युनिस्टों का आविष्कार समझते थे परन्तु धारण्य है कि धर्मसंस्वकों के ये गवने बड़े पक्षपाती पहले तो इस मामले में सामोरा रहे और बाद में दूसरों के समर्थक बन गये। और इस यूनियन के निर्मूलत करने पर और देने लगे।

असबारों में हुआमा वर्षा हुआ तो देश के कोने-कोने में इस यूनियन की स्थापना के विच्छद समाएँ होने लगे। लगभग हर दल के प्रसिद्ध नेता ने मंच पर आकर सम्मना व सत्कृति के इस कलंक कपी संगठन की धिक्कारा। और कहा कि यही समय है जब तमाम लोगों को अपने आपस के भागड़े छोड़कर इस भीमकाय उपद्रव का सामना करने के लिए एकता तथा बढा विश्वास को अपना लक्ष्य बना कर बट जाना चाहिये।

इस मारे कौलाहल का जबाब यूनियन की ओर से एक पोस्टर द्वारा दिया गया जिसमें संक्षेप में यह कहा गया कि प्रेस बहुमत के हाथ में है, कानून उसका माप देता है। किन्तु यूनियन का उत्साह तथा उसके निश्चय समाप्त नहीं हुए। यह प्रयत्न कर रही है कि बहुत-सी रकम देकर अन्वहार सरीद से और उन्हें अपने पक्ष में करे।

यह पोस्टर देश भर की दीवारों पर लगाया गया तो फौरन बाद ही कई गहरो से बड़ी-बड़ी पोरियों और ठकंतियों की सूचनाएं मिली। और उसके कुछ दिन बाद जब एकाएकी दो असबारों ने दबी जवान में गुण्डों और दस-

दलों की युनियन के उद्देश्यों में मूलाधारमय पक्ष कुन्दला चुन लिया तो लोग समझ गये कि पक्ष के पीछे क्या हुआ है ?

उनके मार्गात्मक परिधिओं में बड़े विभिन्न विषयों पर विरा प्रकाशित होते थे जिनमें में नारंगोंन जो नमयों फेंकने वाले थे ।

० भागित दृष्टि में उनके मार्गोंन के नाम ।

० मार्गात्मक तथा मार्गात्मक दृष्टिकोण में नैदानियों का महत्व ।

० भूट की स्मरण-शक्ति होती है—साधुमिक धैर्यात्मक अनुसंधान ।

० वस्तुओं में रक्षा तथा लूट की स्तम्भात्मक प्रवृत्तियाँ ।

० संसार के भयानक आकृ तथा धर्म की पवित्रता ।

विज्ञापन की कम विविध नहीं थे । उनमें विज्ञापन का नाम तथा पता नहीं होता था । शीर्षक देकर मतलब की बात संक्षेप में बता दी जाती थी । कुछ शीर्षक देना :

चोरी के जेवरान गरीबने से पहले हमारा निशान जरूर देल लिया करें जो गरीब माल की गारण्टी है ।

ब्लैक मार्केट में केवल उसी फिल्म के निकट बेचे जाते हैं जो मनोरंजन की सर्वश्रेष्ठ सामग्री प्रस्तुत करती है ।

दूध में किन तरीकों ने मिलावट की जाती है । 'दूध का दूध और पानी का पानी' नामक पत्रिका अवश्य पढ़िये ।

एक अलग कालम में 'ब्लैक मार्केट के आज के भाव' के शीर्षक से उन सामान चीजों की कण्ट्रोल कीमत दर्ज होती थी जो केवल ब्लैक मार्केट से प्राप्त होती थीं । लोगों का कहना था कि इन कीमतों में एक पाई की भी कमी-बेशी नहीं होती । जो छिपे-चोरी चोरी का खास निशान लगा हुआ माल खरीदते थे उन्हें सस्ते दामों पर सोलह आने खरा माल मिलता था ।

गुण्डों, चोरों और व्यभिचारियों की यूनियन जब धीरे-धीरे ख्याति तथा सहानुभूति प्राप्त करने लगी तो शासनाधिकारियों की चिन्ता और बढ़ गई । सरकार ने अपनी ओर से गुप्त रूप से बहुत प्रयत्न किया कि उसके अड्डे का पता चलाये लेकिन वह विफल रही । यूनियन की सारी गति-

विधियां भूमिगत अर्थात् भण्डर या छुप्टी थी । उच्च वर्ग के कुछ लोगों का विचार था कि पुलिस के कुछ अप्रत्याचारों अफगन इस यूनियन से मिले हुए हैं, बल्कि इसके नियमित रूप से सदस्य हैं । किन्तु यह बात विचारणीय थी कि जनता में जो इस यूनियन की स्थापना में वेचनों फैली थी अब बिल्कुल खत्म हो चुकी थी । मध्यम वर्ग उसकी गतिविधियों में बड़ी दिलचस्पी ले रहा था । केवल उच्च वर्ग था जो दिन-ब-दिन भयभीत होता जा रहा था ।

इस यूनियन के विरुद्ध यों तो आधे दिन भाषण होते थे और जगह-जगह सभाएँ होती थी, किन्तु अब वह पहला सा उत्साह नहीं था । अतएव उसे पुनर्जीवित करने के लिए टाऊन हॉल में एक विराट सभा के आयोजन की घोषणा की गई । नगर के लगभग सभी प्रतिष्ठित व्यक्तियों को प्रतिनिधित्व के लिए निमन्त्रित किया गया था । इस सभा का उद्देश्य यह था; एकमत से गुण्डों और व्यभिचारियों की इस यूनियन के विरुद्ध निन्दा का प्रस्ताव पास किया जाय और जन साधारण को इन भयानक कीटाणुओं से मयासम्भव अवगत कराया जाय जो इसके अस्तित्व के कारण सामाजिक तथा सामूहिक क्षेत्र में फैल चुके हैं और बड़ी तीव्र गति से फैल रहे हैं ।

सभा के आयोजन पर हजारों रुपये खर्च किये गये । कार्यकारिणी तथा स्वागत-समिति ने मुविधा के लिए हर सम्भव यत्न किया । कई अधिवेशन हुए और वे बड़े सफल रहे । उनकी रिपोर्टें यूनियन के अखबारों में शब्दशः प्रकाशित होती रही । निन्दा के जितने प्रस्ताव पास हुए बिना टीका-टिप्पणी छपने रहे । दोनों अखबारों में उन्हें विरोध स्थान दिया जाता था ।

अन्तिम अधिवेशन बहुत महत्वपूर्ण था—देश की तमाम सम्मिलित एवं प्रतिष्ठित विभूतियाँ एकत्रित थी । धनिक तथा मंत्री आदि मौजूद थे । सरकार के उच्चाधिकारियों को भी निमन्त्रण दिया गया था । धुमाधार भाषण हुए और धार्मिक, सामूहिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, मनोवैज्ञानिक सभेप में हर सम्भव ढंग से गुण्डों और बदमाशों के संगठन के विरुद्ध तर्क प्रस्तुत किये गये और सिद्ध कर दिया गया कि निचले वर्ग का अस्तित्व मानव जीवन के लिये विप के समान है । निन्दा का अन्तिम प्रस्ताव जो बड़े सबल शब्दों में लिखा

गया था, एकमत में गम हो गया तो हान सातियों के शोर से गूँज उठा। जब कुछ शांति हुई तो पिछले बेंचों में एक व्यक्ति गड़ा हुआ। उसने सभापति से सम्बोधन करने कहा—‘सभापति महोदय की यदि आज्ञा हो तो मैं कुछ विवेक कहूँ।’

गर्द हान की निगाहें उस आदमी पर जम गईं। सभापति ने बड़े रीव से पूछा, ‘मैं पूछ सकता हूँ आप कौन हैं?’

उस व्यक्ति ने जो, बड़े साधारण, किन्तु सुन्दर वस्त्र पहने हुए था, आदर के साथ कहा, ‘देश तथा जाति का एक निकृष्ट सेवक।’ और उसने झुककर प्रणाम किया।

सभापति ने चश्मा लगाकर उसे गौर से देखा और पूछा, ‘आप क्या कहना चाहते हैं?’

उस पहिलीनुमा व्यक्ति ने मुस्कराकर कहा, ‘हम भी मुँह में जवान रगते हैं।’

इस पर सारे हाल में गुसर-पुसर होने लगी। विशेष कर मंच पर बैठे मन्त्र-के-सब प्रतिष्ठित लोग तथा नेतागण प्रश्नसूचक चिन्ह बनाकर एक-दूसरे की ओर देखने लगे।

सभापति ने अपने रीव को कुछ और रीवदार बनाते हुए पूछा, ‘आप कहना क्या चाहते हैं?’

‘मैं अभी अर्ज करता हूँ।’ यह कहकर उसने जेब से एक वेदांग रुमाल निकाला, अपना मुँह साफ किया और उसे वापिस जेब में रखकर बड़े पार्लमेण्टेरियन ढंग से कहने लगा, ‘सभापति जी और सम्माननीय सज्जनगण,’ डायस के एक ओर देखकर वह रुक गया। ‘क्षमा याचना करता हूँ—आदरणीया श्रीमती मर्जवान आज हमेशा के विपरीत पिछले सोफे पर विराजमान हैं। सभापति महोदय, आदरणीया देवी जी तथा सज्जनगण।’

श्रीमती मर्जवान ने बेनिटी वेग में से आईना निकालकर अपना मेकअप देखा और गौर से सुनने लगी। बाकी सब भी ध्यानपूर्वक सुन रहे थे।

सारे हाल में खुसर-पुसर होने लगी। सभापति की नाक के वांसे पर चश्मा फिसल गया, ‘आप हैं कौन?’

तिर के एक हत्के से झुकाव के साथ उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, 'देश तथा जाति का एक निरूप्य सेवक। निचले शर्ण के संगठन का एक सदस्य जिसे उनके प्रतिनिधित्व का गर्व प्राप्त है।'।

हास में बिनी ने जोर से, 'बाह' कहा और तासी बजाई। धीरों, उद्यमकों और गुण्यों की यूनिजन के प्रतिनिधि ने तिर को फिर एक हल्का झटका दिया, और कहना शुरू किया, 'बया अर्ज करू, कुछ कहा नहीं जाता :

बी गया भी मैं तो उनकी गालियों का बया जवाब

माद की जितनी दुआएँ सफे-दरवाँ हो गई

इस अधिवेशन में इस मण्डन के विरुद्ध जिसका यह सेवक प्रतिनिधि है, इनकी गालियाँ भी गई हैं, उसे इनका धिक्कारा गया है कि सिर्फ इनका कहने को भी चाहना है :

बी बी कहते हैं कि ये बेन-बी-नाम है

'समापति जी, आदरणीय थीमती मर्जवान और सज्जनों'

थीमती मर्जवान की लिपस्टिक मुस्कराई। बोल्ने वाले ने झालें और गिर झुकाकर प्रणाम किया। 'श्रद्धेय थीमती मर्जवान और सज्जनों। मैं जानता हूँ कि यहाँ मेरी यूनिजन का कोई हमदर्द मौजूद नहीं। आप में से एक भी ऐसा नहीं जो हमारा पक्ष पोषण करे।

दोस्तगर कोई नहीं है जो करे बाराबारी

न यही लेक तमन्नाए दबा है तो सही

आपत पर एक बघकनपोम रईस कल्ले में पान दबाने हुए बोले, 'फिर !'

समापति ने जब उनकी ओर घुलाकी दृष्टि से देखा तो वह खामोश हो गये।

धीरों और अष्टाधारियों की यूनिजन के प्रतिनिधि के पतले-पतले होठों पर हसत मुस्कान प्रकट हुई। 'मैं अपने सक्षिप्त भाषण में जो दोर भी पहुँगा, 'गानिब' का होगा।'।

थीमती मर्जवान ने बड़े भोलेपन से कहा, 'आप तो बड़े योग्य व्यक्ति मान्य होते हैं।'।

योगने शान्ति ने झुककर प्रणाम किया और कहा :

योगों हैं मर्दों के निगे हम मुमस्विरी
तकरीब कुछ तो यहाँ-मुलाकात चाहिए

माना नाम कहकर ही और तालियों में गूँज उठा । श्रीमती मर्जवान ने उठकर सभापति के पास में कुछ कहा, जिसने श्रीनाथों को शांत रहने की आज्ञा दी । जानि हुई तो चोरों और लफंगों की यूनिशन के प्रतिनिधि ने फिर बोझना शुरू किया :

‘मैं पचना मेर प्रकट किये बिना नहीं रह सकता बि उन वर्ग के साथ
शिका प्रतिनिधिना मेरी यूनिशन करती है, बहुत श्रमाम हुआ है उसे अब
तक बिल्कुल मजबूत रंग में दिगाया जाता रहा है और यही कोशिश की जाती
रही है कि हमें श्रुत तथ्य निन्दित ठहराकर समाज से बहिष्कृत कर दिया
जाय । मैं उन महानुभावों को गया पहुँच जिन्होंने इस शरीर और सम्मानित
वर्ग पर पहराय करने के लिए पत्थर उठाये हैं ?

आतिशयदा है सोना मिरा राजे-निर्हा से
ऐ वाये अगर मारिजे-इजहार में आवे’

सभापति ने एकदम गरजकर कहा, ‘सामोश ! बस अब आपको अधिक
कुत्त कहने की आज्ञा नहीं है ।’

वक्ता ने मुस्करा कर कहा, ‘हजरते ‘ग़ालिब’ की इसी गजल का एक
शेर है :

दे मुझको शिकायन की इजाजत कि सितमगर
कुत्त तुझको मजा भी मिरे आजार में आवे’

हल तालियों के शोर से गूँज उठा । सभापति ने अधिवेशन समाप्त करना
चाहा लेकिन लोगों ने कहा कि नहीं । चोरों और गुण्डों की यूनिशन के
प्रतिनिधि का भाषण समप्त हो जाये तो कार्रवाई बन्द की जाय । सभापति
तथा अधिवेशन के अन्य सदस्यों ने पहले स्वीकृति प्रकट न की, किन्तु बाद
में जनमत के सामने उन्हें झुकना पड़ा । वक्ता को बोलने की अनुमति
मिल गई ।

उमने सभ्रापति का समुचित शब्दों में आभार प्रकट किया और कहना धारम्भ किया :

'हमारी यूनियन को केवल इसलिए घृणा तथा होन दृष्टि से देखा जाता है कि यह चोरी, उठाईगीरी, लुटेरी और डाकुमो की यूनियन है जो उनके अधिकारों की रक्षा के लिए स्थापित की गई है मैं आप लोगों की भावनाओं में भली प्रकार परिचित हूँ। हमारी स्वापना पर आपकी जो प्रतिक्रिया हुई थी, उसकी भी मैं कल्पना कर सकता हूँ। किन्तु क्या चोरी, डाकुमो और लुटेरों के कोई अधिकार नहीं होते ? या नहीं हो सकते ? मैं समझता हूँ कोई सही दिमाग वाला व्यक्ति ऐसा नहीं सोच सकता। जिस प्रकार आप सबसे पहले इन्सान है और बाद में सेठ साहब हैं, बड़े धनवान हैं, म्युनिसिपल कमिश्नर हैं, गृह मंत्री हैं या विदेश मंत्री; इसी प्रकार वह भी सबसे पहले आप ही की तरह इन्सान है। चोर, डाकू उठाईगीरा, जेब कतरा और ब्लैक-मार्केटियर बाद में हैं। जो अधिकार हमारे इन्सानों को इस सृष्टि में प्राप्त है, वे उसे भी प्राप्त हैं और होने चाहिये। जो उधार दूसरे इन्सानों को मिलते हैं, उसे भी उन्हें प्राप्त करने का अधिकार है। मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि एक चोर या डाकू को क्यों सलित शम्शु से बर्बन समझा जाता है। क्यों उसे एक ऐसा व्यक्ति समझा जाता है जिसे साधारण जीवन की अपेक्षा करने का अधिकार नहीं। शमा कीजिये वह एक अच्छा घोर सुनकर उसी तरह फड़क उठता है, जिस तरह कोई दूसरा उसे समझने वाला। 'सुबहे-बनारस' और 'शामे-अवध' से निकर आप ही आनन्द-लाभ नहीं कर सकते वह भी करता है, सुर-तात की उसे भी खबर है। वह केवल पुलिस के हाथों ही गिरफ्तार होना नहीं जानता, किसी सुन्दरी के प्रेम-जाल में फँसने का ढंग भी वह जानता है। शादी करता है बच्चे पैदा करता है, उन्हें चोरी से मना करता है, झूठ बोलने से रोकता है। भगवान न करे यदि उनसे से कोई मर जाये तो उसके दिल की सदमा भी पहुँचता है।'

यह कहते हुए उसका गला रुंध गया। लेकिन फौरन ही उमने इस बदला और मुत्तराते हुए कहा, 'हजरते गान्धिव' के इस दोर का जो भ्रमा वह ले सकता है, माफ कीजिये आप में से कोई नहीं ले सकता :

न सुटना दिन को तो कब रात को भूँ बेगबर सोता

गता गतका न चोरी का दुआ देता हूँ रहजन को

गंगा हाथ हँसते बग। श्रीमती मर्जवान भी जो भाग्य के अन्तिम भाग पर कुछ गिन्न-गी हो गई थी, मुस्कराई। वक्ता ने उसी प्रकार पतली पतली ग्राफ मुस्कराहट के साथ कहना शुरू किया, 'मगर अब ऐसे दुआ देने जाने लगी ?'

श्रीमती मर्जवान ने बड़े भोलेपन से आह भरकर कहा, 'और वे डाकू भी लगी ?'

वक्ता ने स्वीकार किया, 'आपने ठीक फर्माया श्रीमती मर्जवान। हमें इस दुनव तथ्य का पूर्ण अनुभव है। यही कारण है कि हमने मिलकर अपनी गूगियन बना डाली है। गमय परिवर्तन के साथ डाकू, चोर और जेब कतरे लगभग सभी अपनी पुरानी प्रथा तथा प्रतिष्ठा को भूल गये हैं। किन्तु हर्ष का स्थान है कि अब बहुत तेजी से अपने असल स्थान को लौट रहे हैं। लेकिन मैं उन महाशयों से जो इन बेचारों की जड़ें खोदने में व्यस्त हैं, यह धृष्टतापूर्ण प्रश्न पूछना चाहता हूँ कि अपने सुधार के लिए अब तक उन्होंने क्या किया है ? मुझे कहना तो नहीं चाहिए, लेकिन तुलना के लिए कहना पड़ता है कि हमें बहुत हेय चोर और दुष्ट डाकू कहा जाता है। मगर वे लोग क्या हैं ? कुछ इस ऊँचे डायस पर भी बैठे हैं, जो जनता का माल-मत्ता दोनों हाथों से लूट रहे हैं !'

हाल में 'शेम ! शेम !' के नारे बुलन्द हुए।

वक्ता ने कुछ रुककर फिर कहना शुरू किया : 'हम चोरी करते हैं, डाके डालते हैं मगर उसे कोई और नाम नहीं देते। ये सम्मानित लोग निकृष्टतम प्रकार के डाके डालते हैं किन्तु यह जायज समझा जाता है। अपनी आँख के इस लम्बे-चोड़े और भारी भरसक फूले को कोई नहीं देखता और न देखना चाहता है, क्यों ? यह बड़ा गुस्ताख सवाल है। मैं इसका जवाब सुनना चाहता हूँ, चाहे वह इससे भी ज्यादा गुस्ताख हो।' थोड़ी देर रुककर वह मुस्कराया, 'मंत्री गण आपने मंत्रालय की मसनद की सान पर उस्तुरा तेज करके देश की हर

शेख हजारात बनने है। यह कोई कपराय नहीं। लेकिन किसी कि जेब में बड़ी गलाई के साथ बटुआ खुलाने वाला दखनीय है... दख की लीटिदे, मुझे उस पर कोई बर्ताव नहीं। वह आगही दृष्टि में मर्दन उठा देने योग्य है।

हाथ पर कटु मे सोन खेपने मे हो गये। श्रीमति मर्जवान धून प्रपु-
नित थी।

बनाने में खेतना मला गाफ किया, फिर कहना गुर किया, 'तमाम महकमो मे ऊपर मे लेकर मोखे सब गिदवा का बाजार गमे है, यह किसे माजूम नहीं? क्या यह भी कोई भेद है जिसके सोचने की जरूरत है कि तगपरवरी और परिवार-नामन के कारण सर्वथा उपयोग, लजिष्ट और भूट्यापारी बड़े-बड़े मोहदे में भागे बैठे है? माफ करमाइया इधर हमारे घर में ऐसी दु गलाई परिगिदगिजी नहीं है। कोई चोर भगने किसी सम्बन्धी को बड़ी थोरी के लिए नहीं खुलेगा।' हमारे यहाँ भोग इस प्रकार की गिआपनो में लाभ उठाना चाहें तो जारी उठा नबने। इसलिये कि थोरी करने, जेब काटने या हावा झापने के लिए शिप-लुदे, दयाग तथा योग्यता की आवश्यकता है। यहाँ कोई सिपारिसा काम नहीं छापी। हर व्यक्ति का काम हो स्वयं उसकी परीक्षा होनी है जो पौरन उगे परिणाम में अवगन करा देता है।'

हाथ पर बज की गी गामोदी छा गई। बपना मे अपनी जेब से कमाल गिदालकर भुँह गाफ किया और उगे हवा मे सहगकर कहा, 'गमागति जी, खड़ेन देखी जी तथा महानमो।' मुझे माफ करमाइए कि मैं जरा भावुकता में यह गया। निवेदन यह है कि जिस तरफ नजर उठाई जाये ईमान-करोत होना है या तभीर-करोत, धन-करीत होना है या कोप-करोत। रामझ में नहीं आता कि ये भी कोई खेपने की चीजें हैं? इमान तो उन्हें बहुत ही कठिन समय में भी एक क्षण के लिए गिरवी नहीं रग सकता मगर मैं इसानो को बाध कर रहा हूँ। माफ करिये मेरे स्वर में फिर बटुता पैदा हो गई।

• रमिमी मासिब मुझे इस सल्ल नव ई से सुधाफ

मात्र कुछ दर्द मिरे दिल में सिखा होता है।

यह कहता हुआ यह आपस की तरफ बढ़ा। रामापति महोदय, श्रीमति

मर्जवान तथा महाजनों ! मैं अपनी सुनियन की ओर से आप सबको धन्यवाद देता हूँ कि आपने मुझे बोलने का अवसर दिया ।' डाक्टर के पास पहुँचकर उसने सभापति की ओर हाथ बढ़ाया । मैं अब एक मित्र के रूप में आपसे विदा लेना चाहता हूँ ।'

सभापति ने दिनविनोद को उठाकर उससे हाथ मिलाया । उसके बाद उसने श्रीमति मर्जवान की ओर हाथ बढ़ाया । 'नर्द आपको कोई आपत्ति न हो ।'

श्रीमति मर्जवान ने भोलेपन से अपना हाथ पेश कर दिया । शेष गण्यमान्य व्यक्तियों तथा गणितों से हाथ मिलाकर जब वह निवृत्त हुआ तो नमस्कार कहकर चलने लगा । मैट्रिन फोरम ही रुक गया । अपनी दोनों जेबों में से उसने बहुत सी पीजें निकालीं और सभापति की मेज पर एक-एक करके रख दीं, फिर वह मुस्कुराया, एक असें से जेब तराशी छोड़ चुका हूँ, आजकल सेफ़ तोड़ना मेरा पेशा है । आज सिर्फ़ मनोविनोद के लिए आप लोगों की जेबों पर हाथ गाफ़ कर दिया ।' यह कहकर वह श्रीमति मर्जवान से संबोधित हुआ, 'श्रद्धेय देवीजी ! धमा कीजिये, आपके वेनिटी रिंग में से मैंने एक चीज निकाली थी मगर वह ऐसी है कि सबके सामने आपको वापिस नहीं कर सकता ।'

और वह तंजी के साथ से बाहर निकल गया ।

Handwritten signature

सड़क के किनारे

यही दिन थे; याददास्त उसकी आँखों की भाँति ऐसा ही नीला था जैसा कि आज है. घुला हुआ, निघरा हुआ। और धूप भी ऐसी ही कुनकुनी थी—मुझाने सपनों की भाँति; मिट्टी की गंध भी ऐसी ही थी जैसी कि इस समय मेरे दिल व दिमाग में रच रही है। ...और मैंने इसी प्रकार लेटे-सेटे अपनी फड़फड़ाती हुई आत्मा उसके हवाले कर दी थी।

'उसने मुझसे कहा था, "...तुमने मुझे जो ये क्षण प्रदान किये हैं विश्वास करो मेरा जीवन इनसे वंचित था। जो रिक्त स्थान तुमने आज मेरे जीवन में पूरे किये हैं तुम्हारे आभागी हैं। तुम मेरी जिन्दगी में न आती तो शायद वह हमेशा धूसरी रहती। ...मेरी समझ में नहीं आता। मैं तुमसे और क्या कहूँ मेरी पूर्ति हो गई है, ऐसी पूर्णता के साथ कि अनुभव होता है मुझे अब तुम्हारी आवश्यकता नहीं रही।' और वह चला गया, हमेशा के लिए चला गया।

'मेरी आँखें रोई', मेरा दिल रोया मैंने उसकी विधत-समाजत की। उससे सात बार पूछा कि मेरी ज़रूरत अब तुम्हें क्यों न रही। जबकि तुम्हारी ज़रूरत अपनी पूरी-तीव्रता के साथ अब बारम्बार हुई है। उन क्षणों के पश्चात् जिन्होंने तुम्हारे ही कथनानुसार तुम्हारी हस्तों की जाली जगहें भरी हैं।

'उसने कहा, 'तुम्हारे अस्तित्व के जिस-जिस क्षण की मेरे जीवन की पूर्ति तथा निर्माण की आवश्यकता थी' ये क्षण पुनः-पुनः देते रहे'... जबकि उसकी पूर्ति हो गई है तुम्हारा और मेरा नाता अपने आप समाप्त हो गया है।'

‘उसने मुझे मरने से... मुझे मरने पर पश्चात्ताप महसूस नहीं किया गया... मैं जीवित-जिवित कर जीने लगी। परन्तु उस पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ा।... मेरे सम्बन्ध बना, ‘मेरे’ का अर्थ जिसमें तुम्हारे अस्तित्व की पूर्ति हुई है मेरे अस्तित्व के अन्त में। क्या उसका मुझे कोई सम्बन्ध नहीं है?..... क्या मेरे अस्तित्व का ऐसा भाग उसने अपना माना जो मैं मानता हूँ?..... तुम पूर्ण हो रही हो..... लेकिन मुझे धरती पर... क्या मैंने तुम्हें इसीलिए अपना भगवान् बनाया था?’

‘उसने कहा, ‘भोरे कनियों और फूलों का रस चुम्ब-चुम्ब कर महद स्निग्ध है, किन्तु वे उसकी गलछट तक भी उन फूलों और कनियों के होंठों तक नहीं जाते।’ भगवान् अपनी पूजा करता है पर स्वयं आराधना नहीं करता। परन्तु के साथ संतान में कुछ क्षण व्यतीत करके उसने अस्तित्व की पूर्ति... किन्तु अब कहाँ है?... उसकी अब अस्तित्व की क्या आवश्यकता है? वह एक ऐसी माँ थी जो अस्तित्व को जन्म देते ही प्रसूतिगृह में ही समाप्त हो गई थी।

‘नहीं रो सकती है... तक नहीं कर सकती। इसकी सबसे बड़ी दलील उसकी आँग से टपका हुआ आँसू है..... मैंने उससे कहा, ‘देखो... मैं रो रही हूँ... मेरी आँगें आँसू बरसा रही हैं। तुम जा रहे हो तो जाओ, परन्तु इनमें से कुछ आँसूओं को तो अपने रुमाल के कफन में लपेट कर साथ ले जाओ!... मैं तो सारी उम्र रोती रहूँगी..... मुझे इतना तो याद रहेगा कि कुछ आँसूओं के कफन-दफन का सामान तुमने भी किया था... मुझे तुम करने के लिए!’

‘उसने कहा, मैं तुम्हें खुश कर चुका हूँ..... तुम्हें उस ठोस उल्लास से मिला चुका हूँ जिसकी तुम केवल मरीचिका ही देखा करती थी, क्या उसका हर्ष, उसका आनन्द तुम्हारे जीवन के शेष क्षणों का सहारा नहीं बन सकता? तुम कहती हो कि मेरी पूर्ति ने तुम्हें अपूर्ण कर दिया है, लेकिन क्या यह अपूर्ति ही तुम्हारे जीवन को सक्रिय रखने के लिए काफी नहीं... मैं मदं हूँ आज तुमने मेरी पूर्ति की है... कल कोई और करेगा...’

मेरा अतिशय बड़ा ऐसे पानी तथा मिट्टी से बना है जिसकी जिनगी में
ऐसे बड़े धारा धारों से जब वह गुरु की संपूर्ण समझेंगी.....और तुम जैसी
बड़ी रिश्ता धारों की इन दाँतों की उत्पत्ति की हुई जानो जगहें भरेंगी ।

‘मैं रोती रही, भुँभुँगाती रही ।

‘मैंने सोचा कि ये कुछ बात जो अभी-अभी मेरी मुट्ठी में थी... नहीं...
मैं उन क्षणों की मुट्ठी में थी । मैंने क्यों गुरु की उनके हवाले कर दिया ?
मैंने क्यों धरती पर धरती धारों उनके मुँह तोले कंधे में डाल दी । उनमें
आनंद था, एक मजा था... एक सन्तान था... था, जकर था और
यह उनके और मेरे टकराव में था लेकिन यह था कि यह ताबिल
व गानिम रहा और मुझसे लड़े वक मये । यह था कि यह धम मेरी धाक-
सबकता अनुभव मर्तों करता । पर मैं तो और भी सीधता से सगरी धारस्यवता
अनुभव जाती हूँ । यह सबक बन गया है । मैं दुर्वल हो गई हूँ । यह था कि
आकाश पर दो धारण ए-दूधरे का आनिगन करें—एक रो-रोकर बरगने
समा और दूसरा जिसकी वा कौश बनकर उम क्यों मे रोपता कुदकड़े लगाता
भाग जाने ... यह किमका काशून है ? धारमार्गों का ? जमीनों का या उनके
बनाने वालों का ?

‘मैं सोचती रही और भुँभुँगाती रही ।

‘वो धारमार्गों का निमटकर एक हो जाना और एक होकर निस्सीम विस्तार
ग्रहण कर जाना, क्या यह एक कविता नहीं है ?..... नहीं दो धारमार्ग
निमटकर निरवम ही दग मर्हें-तो बिन्दु पर पहुँचती हैं जो फँसकर ब्रह्माण्ड
बनना है..... लेकिन हम ब्रह्माण्ड में एक धारमा क्यों कभी-कभी पायल
छोड़ दी जाती है । क्या इस अपराध पर कि उलने दूसरी धारमा की दस्त
मर्हें तो बिन्दु पर पहुँचने में मदद थी ।

‘यह कैसा सत्कार है !

‘यही दिन थे, आकाश जगकी धारों की भाँति ऐसा ही नीला था
जैसा कि धातु है..... और धूप भी ऐसी ही कुनकुनी थी .. और मैंने इसी
प्रकार लेटे-लेटे धरती पर धरती हुई धारमा उसके हवाले कर दी थी... वह

मौजूब नहीं है... बिजली का कौदा बनकर न जाने यह किन बदलियों के साथ गेन रहा है... अपनी पूति करके चला गया... एक माँप था जो मृन्मे टम कर चला गया । ... किन्तु अब उसकी छोड़ी हुई लकीर क्यों मेरे पेट में फरवटें ले रही है... क्या यह मेरी पूति हो रही है ?

'नहीं, नहीं... यह कैसे पूति हो सकती है... यह तो ध्वंस है... किन्तु मेरे शरीर के रिक्त स्थान क्यों भर रहे हैं - ये जो गढ़े ये किस मलबे से पूरे किये जा रहे हैं । मेरी रगों में ये कैसे सरसराहटें दोड़ रही हैं... मैं मिमटकर अपने पेट में किस नन्हें-से बिन्दु पर पहुँचने के लिए पेचोताव खा रही हूँ... मेरी नाव दूबकर अब किन समुद्रों में उभरने के लिए उठ रही है... ?

'ये मेरे श्रन्दर दहकते हुए चूल्हों पर किस अतिथि के लिए दूध गरम किया जा रहा है... यह मेरा दिल मेरे रून को धुनक-धुनक करके किमके लिए नर्म व नाजुक रजाइयाँ तैयार कर रहा है । यह मेरा दिमाग मेरे विचारों के रंग-विरंगे घागों से किसके लिए नन्हों-मुन्नी पोशाकें बुन रहा है ?

'मेरा रंग किसके लिए निखर रहा है... मेरे अंग-अंग और रोम-रोम में कैसे हुई हिचकियाँ लोरियों में क्यों तब्दील हो रही हैं... ?

'यही दिन थे, आकाश उसकी आँखों की भाँति ऐसा ही नीला था जैसा कि आज है... लेकिन यह आस्मान अपनी ऊँचाइयों से उतरकर क्यों मेरे पेट में तन गया है ?... इसकी नीली-नीली आँखें क्यों मेरी नाड़ियों में दौड़ती-फिरती हैं ?

'मेरे सीने की गोलाइयों में, मस्जिदों के मेहराबों में ऐसी पवित्रता क्यों ब्रा रही है ?

'नहीं-नहीं... यह पवित्रता कुछ भी नहीं । मैं इन मेहराबों को ढा दूँगी... मैं अपने श्रन्दर तमाम चूल्हे ठण्डे कर दूँगी जिन पर बिन बुलाये मेहमान की आवश्यकत चढ़ी है । मैं अपने विचारों के सारे रंग-बि रंगे घागे आपस में उलझा दूँगी । ...

‘यही दिन थे, आत्मान उसकी छाँवों की तरह ऐसा ही नीला था जैसा कि आज है...लेकिन मैं वह दिन क्यों याद करता हूँ जिनके सोने पर से वह अपने पद बिन्दु भी उठा कर ले गया था...’

‘लेकिन...यह पद-चिन्ह किसका है ? यह जो मेरी पेट की गहराईयों में तब्य रहता है...? क्या यह मेरा जाना-पहचाना नहीं...’

‘मैं इसे सुरक्षित दूंगी ... इसे मिटा दूंगी । यह रसीली है, फोड़ा है— बहुत भयानक फोड़ा ।’

‘लेकिन मुझे अनुभव होता है कि यह फाँसा है... फाँसा है तो किस जन्म का ? उस जन्म का जो वह मुझे लगाकर चला गया था ? नहीं नहीं, यह तो ऐसा लगता है किसी पैदायशी जन्म के लिए है ।...ऐसे जन्म के लिए जो मैंने कभी देखा ही नहीं था...जो मेरी कोख में न जायें कब-से सो रहा था ।’

‘यह कोख क्या ?...किन्नर-सी मिट्टी की हड्डिलिया, बच्चों का बिलोना । मैं इसे तोड़-फोड़ दूंगी ।’

‘लेकिन यह कौन मेरे कान में कहता है, वह दुनिया एक बीराहा है... अपना मोठा क्यों इसमें फोड़ती है ‘याद रख मुझ पर उँगलियाँ उठेंगी ।’ ।’

‘उँगलियाँ...’ उधर क्यों न उठेंगी बिधर वह अपनी हस्ती पूरी करके चला गया था—? क्या उन उँगलियों को वह रास्ता माछूम नहीं ?... यह ‘‘दुनिया एक बीराहा है...लेकिन उस समय तो वह मुझे एक बीराहे पर छोड़ कर चला गया था—इधर भी अधूरापन था, उधर भी अधूरापन—इधर भी भाँसू, उधर भी भाँसू !’

‘लेकिन यह किसका भाँसू मेरे सीप में मोती बन रहा है—यह कहाँ बिन्धेगा ?’

उँगलियाँ उठेंगी । जब सीप का मुँह खुलेगा धीरे धीरे किसल कर बाहर बीराहे पर फिर पड़ेगा तो उँगलियाँ उठेंगी—सीपों की धीरे धीरे मोती की धीरे धीरे...धीरे धीरे उँगलियाँ सँघोचियाँ बन कर उन दोनों को उठेंगी धीरे अपने बिध से उनकी नीला कर देंगी ।

'मेरी दिन थे, आवाज उनकी आँखों की भाँति ऐसा ही नीला था जैसा कि था है... यह फिर क्यों नहीं जाता... ये कौन से स्तंभ हैं जो इसे संभाले हुए हैं ? क्या उस दिन जो भूकम्प आया था यह इन स्तंभों की बुनियादें हिला देने के लिए काफी नहीं था... यह क्यों अब तक मेरे सिर के ऊपर उसी तरह तना हुआ है ?

'मेरी आत्मा पसीने में डूबी हुई है... उसका हर मगमग खुला हुआ है। चारों ओर आग बरक रही है। मेरे घन्दर सटाली में सोना पिघल रहा है। ...घोंकनियां बन रही हैं, शीते भड़क रहे हैं। सोना आग उगलने वाले ज्वालामुखी के माँचे की नाईं उबल रहा है। मेरी नसों में नीली आँखें दौड़-दौड़ कर हाँप रही हैं... घण्टियाँ बज रही हैं... कोई आ रहा है... कोई आ रहा है। बन्द कर दो, बन्द कर दो बिवाड़...।

'गटाली उलट गई है... पिघला हुआ सोना बह रहा है... घण्टियाँ बज रही हैं... यह आ रहा है... मेरी आँखें मुँद रही हैं... नीला आवाज गदला होकर नीचे आ रहा है। ...

'यह किसके रोने की आवाज है... इसे चुप कराओ... उसकी चीखें मेरे दिल पर हथौड़े मार रही हैं। चुप कराओ, इसे चुप कराओ, इसे चुप कराओ मैं गोद बन रही हूँ... मैं क्यों गोद बन रही हूँ... ?

'मेरी बाँहें खुल रही हैं। चूल्हों पर दूध उबल रहा है। मेरे सोने की गोलाइयाँ प्यालियाँ बन रही हैं... लाओ इस गोश्त के लोथड़े को मेरे दिल के घुनके हुए खून के नर्म-नर्म गालों में लिटा दो।

'मत छीनो ! मत छीनो इसे मुझसे... अलग न करो ! खुश के लिए मुझसे अलग मत करो !

'उँगलियाँ... उँगलियाँ... उठने दो उँगलियाँ। मुझे कोई चिन्ता नहीं... यह दुनियाँ चौराहा... फूटने दो मेरी जिन्दगी के तमाम भाँडे... ..।

'मेरा जीवन नष्ट हो जायेगा ?... हो जाने दो... मुझे मेरा गोश्त वापस दे दो... मेरी आत्मा का यह टुकड़ा मुझसे मत छीनो' १

महाराष्ट्र सरकार
मुंबई

‘यही दिन थे, थावान उधकी प्राणों की भाँति ऐसा ही नीला था जैसा कि था है...यह गिर क्यों नहीं जाता...वे गीन से स्वप्न हैं जो इसे संभाले हुए हैं ? क्या उस दिन जो भूकम्प थाया था यह इन स्तंभों की बुनियादें हिला देने के लिए काफी नहीं था...यह क्यों अब तक मेरे सिर के ऊपर उठी तरह तना हुआ है ?

‘मेरी आत्मा पसीने में डूबी हुई है...’उसका हर मगम खुला हुआ है । पारों थोड़ा धाग बहक रही है । मेरे अन्दर राटाली में सोना पिघल रहा है । ...घोंकनियाँ चल रही हैं, दोले भड़क रहे हैं । सोना धाग उगलने वाले ज्वालामुखी के माथे की नाईं उबल रहा है । मेरी नसों में नीली धाँसें दौड़-दौड़ कर हाँप रही हैं...घण्टियाँ बज रही हैं...कोई आ रहा है... कोई आ रहा है । बन्द करदो, बन्द करदो सिवाड़...’

‘गटाली उलट गई है...पिघला हुआ सोना बह रहा है...घण्टियाँ बज रही हैं...वह आ रहा है...मेरी धाँसें मुँद रही हैं...नीला थावान गदला होकर नीचे आ रहा है ।...’

‘यह किसके रोने की आवाज है...इसे चुप कराओ...’उसकी चीखें मेरे दिल पर हथौड़े मार रही हैं । चुप कराओ, इसे चुप कराओ, इसे चुप कराओ । मैं गोद बन रही हूँ...मैं क्यों गोद बन रही हूँ...?’

‘मेरी बाँहें खुल रही हैं । चूल्हों पर दूध उबल रहा है । मेरे सोने की गोलाइयाँ प्यालियाँ बन रही हैं...लाओ इस गोश्त के लोथड़े को मेरे दिल के धुनके हुए खून के नर्म-नर्म गालों में लिटा दो ।

‘मत छोड़ो ! मत छोड़ो इसे मुझसे...अलग न करो ! खुदा के लिए मुझसे अलग मत करो !

‘उँगलियाँ...उँगलियाँ...उठने दो उँगलियाँ । मुझे कोई चिन्ता नहीं...यह दुनियाँ चौराहा...फूटने दो मेरी जिन्दगी के तमाम भाँड़े...’

‘मेरा जीवन नष्ट हो जायेगा ?...हो जाने दो...मुझे मेरा गोश्त वापस दे दो...मेरी आत्मा का यह टुकड़ा मुझसे मत छोड़ो’

जानते यह कितना भूल्यवान् है... यह मोती है जो मुझे इन दाँतों ने प्रदान किया है... उन दाँतों ने जिन्होंने मेरे अस्तित्व के कई कण चुन-चुन कर किसी की पूर्ति की थी और मुझे अपने विचार में अपूर्ण छड़कर चले गये थे... मेरी पूर्ति आज हुई है ।

‘मान लो... मान लो... मेरे पेट के रिक्त स्थान से पूछो । मेरी दूध मरी हुई छातियों से पूछो । उन लॉरियों से पूछो जो मेरे भंग-भंग और रोम-रोम में तमाम हिचकियाँ सुला कर आगे बढ़ रही हैं उन भूलनों से पूछो जो मेरे बल्लभों में डाले जा रहे हैं ।

‘मेरे चेहरे के पीलेपन से पूछो जो गीत के इस सोपड़े के गालों को अपनी तमाम सुलियाँ चुसाती रही हैं... उन साँसों से पूछो जो खोरी छीपे उसे उसका हिस्सा पहुँचाते रहे हैं ।

‘ऊँगलियाँ ? उठने दो ऊँगलियाँ... मैं उन्हें काट दूंगी... शोर मचेगा... मैं ये ऊँगलियाँ उठाकर अपने कानों में ठूँस लूँगी । शूँगी हो जाऊँगी, बहरी हो जाऊँगी, झँधी हो जाऊँगी... मेरा माँस मेरे संकेत समझ लिया करेगा... मैं उसे टटोल-टटोल कर पहचान लिया करूँगी ।

‘मत छीनो... मत छीनो इसे । यह मेरी कोख का सिन्दूर है । यह मेरी ममता की माधे की बिन्दिया है । मेरे पाप का कड़वा फल है । सोच इस पर झू झू करोगे ?... मैं खाट लूँगी ये सब धूक... समझकर माफ कर दूँगी ।’

‘देखो, मैं हाथ जोड़ती हूँ; तुम्हारे पांव पड़ते हैं ।

‘मेरे मरे हुए दूध के बर्तन धोने न करो... मेरे दिल के चुनके हुए धून के नम-नम गालों में भाग न लगाओ । मेरी बाँहों के भूलनों की रस्नियाँ न तोड़ो । मेरे जानों को उन गीतों से वंचित न करो जो इसके रौने में मुझे सुनाई देते हैं ।

‘मत छीनो !... मुझसे धन्य न करो । भगवान के लिए मुझे इससे धन्य न करो ।’

)

X

माहौर—२१ जनवरी

घोषी मण्डी से पुलिस ने एक नवजन्मी बच्ची को सर्दी से ठिठुरती सड़क के किनारे पर पड़ी हुई पाया और अपने कब्जे में ले लिया। किसी बठोर हृदयी ने बच्ची की गर्दन को मजबूती से कपड़े में जकड़ कर रखा था और नग्न शरीर को पानी से गीले कपड़े में बाँध रखा था ताकि वह सर्दी से मर जाये। पर यह जोरित थी। बच्ची बहुत सुन्दर है—आँखें नीली हैं। उसे अस्पताल पहुँचा दिया है।

